प्राकृत व्याकरण

Page No.
Date :

संधि

1. स्व स्वर संधि (क) अ वर्ण + अ वर्ण = आ (ख) इ वर्ण + इ वर्ण = ई (ग) उ वर्ण + उ वर्ण = ऊ
2. ह्रस्व स्वर संधि - (क) अ वर्ण + इ वर्ण = ए (ख) अ वर्ण + उ वर्ण = ओ
3. संधि निषेध - (क) इ वर्ण, उ वर्ण + विजातीय स्वर = x (ख) ए, ओ + स्वर = x (ग) क्रियापद में प्रत्यय के स्वर
4. लोप विधान संधि - (क) स्वर + स्वर (ख) अ वर्ण + ए / ओ (ग) अवग्रह अ → ऽ आ → ऽऽ
5. पदों का द्वित्व होने पर बीच में म् का आगम विकल्पे / वृ. एक्क + एक्कं = एक्कमेक्कं या एक्केक्कं
6. अनुस्वार विधान (i) पदान्त म् का अनुस्वार (ii) पदान्त म् + स्वर तो विकल्पे अनुस्वार वृ. प्रथममजिअं / प्रथमं अजिअं
   (iii) ङ ञ ण नो व्यञ्जने वृ. संख (iv) अनुस्वार + क च ट त प वर्ग = विकल्पे ङ ञ ण न म् वृ. फत्वं पङ्क, पंक
6.1 अनुस्वार आगम (i) प्रथम स्वर पर वृ. अंसु (ii) द्वितीय स्वर पर वृ. ईहं (iii) तृतीय स्वर पर वृ. उवरिं
6.2 अनुस्वार लोप (i) प्रथम स्वर पर वृ. सीह (ii) द्वितीय पर वृ. एव, कह (iii) तृतीय पर वृ. इयाणिं
7. अव्यय संधि (i) पद + अपि / अवि = अ का लोप विकल्पे वृ. केणवि / केणावि
   (ii) पद + इति = इ का लोप वृ. किंति, तहा + इति = तहात्ति ⇒ तहत्ति (स्वरान्त पद के बाद ति ⇒ त्ति)
   (iii) सर्वनाम + अव्यय = आदि स्वर का विकल्पे लोप वृ. पुरिसो + इति = पुरिसोत्ति ⇒ पुरिसुत्ति
   अग्गिमि + एत्थ / अग्गिमित्थ
   (iv) अव्यय + सर्वनाम = " " " " वृ. जइ अहं / जइहं
8.1 संयुक्त प्रक्षर पर पदतां दीर्घ → ह्रस्व वृ. विरह + अग्गि = विरहाग्गि ⇒ विरहग्गि /
8.2 आदि स्वर (ए) के बाद संयुक्त प्रक्षर हो तो इ का ए विकल्पे वृ. सिन्दूर / सेन्दूर / कहीं इ → ए नहीं होता वृ. चिन्ता, इच्छा / कहीं ए ही होता है वृ. नेच्छसि /
9. सभी संधि वैकल्पिक हैं, सिर्फ संधि के बाद अर्थ भ्रम नहीं होना चाहिए /

समास

संक्षेप याने थोड़े शब्दों में अधिक अर्थ बताने वाली शैली का नाम समास है / साहित्य की भाषा में इसका प्रचुर उपयोग होता है वृ. जिस देश में बहुत वीर हैं, वह देश ; बहवो वीरा सन्ति अस्मिन् देसे सो देसो = बहुवीरो देसो / इस ५ अक्षरों के वाक्य को मात्र ६ अक्षरों में सुंदर रूप से कह दिया गया /

★ समास के ५ भेद हैं -

1. द्वंद्व समास (दंदं) = दो या दो से अधिक संज्ञाएँ एक साथ रखी गई हो तो वह द्वन्द्व समास कहलाता है / वृ.
   पुण्णं च पावं च ⇒ पुण्णपावाइं, जीवा य अजीवा य जीवाजीवा /
   इस समास द्वारा बने शब्द अधिकतर बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं और समास विग्रह में च, य या अ प्रयुक्त होता है /
2. तप्पुरिस समास (तत्पुरुष) = जिस समास का पूर्वपद अपनी विभक्ति के संबंध से उत्तरपद से जुड़ा हुआ हो, वह तत्पुरुष समास कहलाता है / इस समास में पूर्वपद द्वितीय से सप्तमी विभक्ति तक हो सकता है / पूर्वपद जिस विभक्ति का हो, उसी नाम से तत्पुरुष समास कहा जाएगा /
   (i) बिइआ / बीआ विभक्ति तप्पुरिस - वृ. इंदियं अतीतं ⇒ इंदियातीतं, दिवं गओ = दिवगओ
   (ii) तइआ " - वृ. साहूहिं वंदिओ = साहुवंदिओ, जिणेण सरिसो = जिणसरिसो
   (iii) चउत्थी " - वृ. मोक्खाय नाणं = मोक्खनाणं, लोगस्स सुहो = लोगसुहो
   (iv) पंचमी " - वृ. संसाराओ भीओ = संसारभीओ, चोराओ भयं = चोरभयं

(v) छट्ठी " - उ. देवस्स मंदिरं = देवमंदिरं, विज्जाए ठाणं = विज्जाठाणं

(vi) सत्तमी " - उ. कलासु कुसलो = कलाकुसलो, नरेसु सेट्ठो = नरसेट्ठो

2.1 कम्मधारय समास = विशेषण और विशेष्य के समास को कर्मधारय समास कहा जाता है, यह तत्पुरुष समास का
4 भेद है। उ. रत्तो सो चडो = रत्तचडो, पीअं तं वत्थं = पीअवत्थं।

(i) विशेषण-विशेष्य → उ. रत्तचडो।

(ii) विशेषण-विशेषण → उ. रत्तपीअं वत्थं।

(iii) पूर्वपद कभी उपमा का सूचक भी होता है → उ. चंदो इव मुहो = चंदमुहो, वज्जदेहो

(iv) कभी पूर्वपद निश्चयबोधक होता है उ. संजमो एव धणं = संजमधणं, विज्जाधणं

2.2 द्विगु समास = कर्मधारय समास में प्रथम शब्द यदि संख्या का सूचक हो और उत्तरपद संज्ञा हो तो उसे द्विगु समास कहते हैं।

(i) समूह अर्थ में द्विगु समास हमेशा नपुं. एक. - उ. नवण्हं तत्ताणं समूहो = नवतत्तं।

(ii) कभी-कभी समूह अर्थ द्विगु स. पुं एक भी होता है - उ. तिण्हं वियप्पाणं समूहो = तिवियप्पो।

(iii) अनेक अर्थ में भी लिंग-वचन का नियम नहीं उ. चउरो दिसाओ = चउदिसा।

3. बहुव्वीहि समास (बहुव्रीहि) = जब समास में आए हुए दो या दो से अधिक शब्द किसी अन्य शब्द के विशेषण बन जाते हैं, तब उसे ब.स. कहा जाता है। इस समास में प्रयुक्त शब्द प्रधान नहीं होते परन्तु उनसे पृथक् कोई अन्य शब्द ही प्रधान होता है, इसलिए इस समास को 'अन्य पदार्थ प्रधान समास भी कहते हैं। इस समास के 2 भेद हैं -

(i) समानाधिकरण ब.स. = इस समास में प्रयुक्त शब्द प्रथमान्त विभक्ति वाले शब्द होते हैं, सभी की समान विभक्ति होती है। समास का विग्रह करते समय 'ज', 'जा' सर्वनाम की विभिन्न विभक्तियों का प्रयोग किया जाता है। उ.

→ आरूढो वानरो जं सो = आरूढवानरो रुक्खो → जिब्भाणि इंदियाणि जेण सो = जिब्भिंदियो, जिइंदियो मुणी

→ एगो दंतो जस्स सो = एगदंतो गणेसो → सुत्तो सीहो जाए सा = सुत्तसीहा दुगुहा

(ii) व्यधिकरण ब.स. = जिस समास में एक शब्द प्रथमान्त और दूसरा षष्ठी या सप्तमी में हो, वह। उ.

→ चक्कं पाणिम्मि जस्स सो = चक्कपाणी विण्हु → चक्कं हत्थे जस्स सो = चक्कहत्थो भरहो

→ गंडीवं करे जस्स सो = गंडीवकरो अज्जुणो

4. अव्वईभाव समास (अव्ययीभाव) = अव्ययी भाव समास में पहला पद बहुधा अव्यय होता है और दूसरा पद संज्ञा होता है। पहला पद मुख्य होता है। इस समास का हरा पद क्रियाविशेषण अव्यय होता है। इसके रूप सदैव नपुं.ए.व. में चलाए जाते

→ उवगुरुं = गुरुणो समीवं → अणुभोयणं = भोयणस्स पच्छा → पइनयरं = नयरं नयरं ति (प्रतिनगर)

→ पइघरं = घरे घरे त्ति → जहासत्तिं = सत्तिं अणइक्कमिऊण

★ समास में आधिकतर प्रथम शब्द का अंतिम स्वर ह्रस्व-दीर्घ हो तो क्रमशः दीर्घ-ह्रस्व हो जाता है।

(i) ह्रस्व → दीर्घ → अन्त+वेई = अन्तावेई, अन्तवेई (गंगा-यमुना के बीच का भूभाग)

→ सत्त+वीस = सत्तावीस, सत्तवीस → वेणु+वणं = वेणूवणं, वेणुवणं (बांस का जंगल)

(ii) दीर्घ → ह्रस्व → जउँणा+यडं = जउँणायडं, जउँणायडं (यमुना तट)

→ नई+सोत्तं = नइसोत्तं, नईसोत्तं (नदी का स्रोत)

→ बहू+मुहं = बहुमुहं, बहूमुहं (वधू मुख)

★ समास में उत्तरपद के प्रथम वर्ण का विकल्प से द्वित्व होता है। उ. देवथुई, देवत्थुई; कुसुमप्पयरो, कुसुमप्पयरो;

बहुफत्तो, बहुप्फत्तो; आणात्थंभो, आणात्थंभो (आत्मानस्तंभ)

Page No.
Date :

कारक

(A) कर्ता कारक : प्रथमा विभक्ति

1. जिस व्यक्ति या वस्तु के विषय में कुछ कहा जाता है, उसे वाक्य का कर्ता कहते हैं। कर्तृवाच्य में कर्ता को प्रथमा वि. होती है eg. नरिंदो परमेसरं पणमइ।

2. कर्मवाच्य में वाक्य बनाते समय कर्म को प्रथमा वि. होती है eg. नरिंदेण परमेसरो पणमिज्जइ।

3 (i) प्र.वि. का प्रयोग शब्द का अर्थ और लिंग दोनों बताने के लिए किया जाता है। जैसे- 'नरिंद' शब्द का उच्चारण निरर्थक होगा, किंतु यदि 'नरिंदो' कहे तो उस शब्द का अर्थ राजा होगा। यहाँ 'नरिंदो' शब्द से ज्ञात होता है कि यह शब्द पुल्लिंग है और इसका अर्थ राजा है। इसी प्रकार तडो (पुं), तडी (स्त्री), तडं (नपुं.) शब्दों के लिंग हैं। इसलिए संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण में अर्थ निकालने के लिए प्र.वि. के प्रत्यय लगाए जाते हैं।

(ii) वस्तु का परिमाण या नाप बताने के लिए ... । eg. सेरो गोहूमो, यहाँ सेर का नाप विदित होता है।

(iii) संख्या का ज्ञान कराने के लिए भी ... । eg. एक्को, तिण्णि।

4. संबोधन में प्रायः प्र.वि. ... । eg. हे देवो, साहू। अन्य रूप भी मिलते हैं - कमल!, तारि! ...।

★ कर्ता और क्रिया का समन्वय

1. क्रिया को पुरुष तथा वचन कर्ता के अनुसार ... । eg. रामो झाअइ, तुमं झाअसि, अहं झाआमि

2. जब दो या दो से अधिक कर्ता संज्ञाएँ हो तो क्रिया बहुवचन ... । eg. रामो हरी य चिट्ठन्ति

* 3. जब अनेक संज्ञाएँ अलग-अलग समझी जाती हैं अथवा अनेक संज्ञाएँ एक साथ मिलकर केवल एक विचार को प्रकट करती हैं तो क्रिया एकव. ... । eg. कोहो माणो माया लोहो संति नासेइ।

4. जब वाक्य में एकव. का कर्ता 'अथवा' से जुड़ा हो तो एकव. eg. राया प्रन्नी वा विप्पारेइ

* जब कर्ता भिन्न वचनों का हो, तो क्रिया निकटतम कर्ता के अनुसार होगी। eg. संसा वा भाई वा वाल्पइ आगच्छन्ति।

5. मुख्यता उत्तम पु. → म.पु.→ अ.पु. eg. सो तुमं अहं च उट्ठमो

* 6. जब भिन्न-भिन्न पुरुषों के कर्ता 'अथवा' से जुड़े हो तो क्रिया का पुरुष और व. निकटतम पद के अनुसार। eg. सो अम्हे वा कज्जं करमो।

(B) कर्म कारक: द्वितीया विभक्ति

1. जिस व्यक्ती या वस्तु पर किसी क्रिया का प्रभाव पड़ता है, वह उस क्रिया का कर्म कहलाता है। eg. माया कहं सुणइ।

कर्मवाच्य छोड़कर सभी जगह कर्म द्वि. वि. में रखा जाता है।

2. द्विकर्मक क्रियाओं के योग में मुख्य कर्म में द्वि.वि. होती है और गौण कर्म अपादान, संप्रदान, अधिकरण वि. होने पर भी द्वि.वि. होती है।

→ प्रधान कर्म = क्रिया के अर्थ को पूर्ण करने के लिए जिस संज्ञा को कर्म कारक में अनिवार्य रूप से रखना पड़े।

→ गौण कर्म = जिसे वक्ता अपनी इच्छा से कर्म कारक में रखता है अथवा जिसे न रखने से भी वाक्य पूर्ण हो जाए।

* कर्म वाच्य में द्विकर्मक क्रिया के गौण कर्म में प्र. और प्रधान कर्म में द्वि. ही रहती है, किंतु वह क्रिया के प्रधान कर्म को प्र. और गौण कर्म द्वि. में रहता है। eg. सो मित्तं पहं पुच्छइ ⇒ तेण मित्तो पहं पुच्छीअइ।

सो पुत्तं गामं वहइ ⇒ तेण पुत्तो गामं वहिज्जइ।

3. सभी गत्यर्थक क्रियाओं के योग में द्वि.वि. होती है। eg. सो घरं गच्छइ।

4. स.वि. के स्थान पर कभी-2 द्वि.वि. । eg. सूरपयासो दिणं पसरइ

5. प्र.वि. → द्वि.वि. । eg. चउवीसं जिणवरा

6. उव, अनु, अहि, आ + वस क्रिया के आधार में द्वि. वि. हरी सग्गं अनुवसइ। हरी सग्गे वसइ।

* 7. उभओ, सव्वओ, धि, समया के योग में द्वि.। वि. परिजणो राधं उभओ चिट्ठइ। धि दुज्जणं। गामं समया हरो तट्ठाओ अत्थि।

8. अन्तरेण और अन्तरा के योग में द्वि। वि. णाणं अन्तरेण न सुहं, गगं जउणं य अन्तरा पयागो अत्थि।

9. पडि के योग में। वि. मायं पडि तुमं सनेहं करासि।

10. समय और आगवाची शब्दों में। वि. सो पच दिणाणि खेत्तं सिंचिंसु, सो कोसं चलइ (निरन्तरता हो तो)

11. दूर, अंतिक अंतिय वाची शब्द। वि. गामत्तो दूरं ठेइ। सरिआए अंतियं जई वसइ।

12. विणा के योग। वि. मायं विणा सिक्खा न होइ।

13. क्रियाविशेषण द्वि. ए. नपुं। वि. सो सुहं विहरइ।

(C) करण कारक: तृतीया विभक्ति

1. कार्य की सिद्धि में जो कर्ता को अत्यन्त सहायक होता है, वह करण कहा जाता है। इसे तृ. वि. होती है। वि. पुत्तो जत्तेन वत्थं पच्चाहरइ

2. कर्म और भाव वाच्य के कर्ता। वि. नरिंदेण कहा सुणिज्जा

3. कारण व्यक्त करने वाले शब्दों में...। वि. सो अवराहेण चुक्कइ

4. फल प्राप्त या कार्य सिद्ध होने पर कालवाचक और मार्गवाचक शब्दों को...। वि. सो दहहिं दिणेहिं गंथं पढीअ
एकेण कोसेण कज्जं होहीअ

5. सह, सद्धिं, समं के योग में। वि. वक्खणो रामेण समं गच्छिस्सु

6. विणा के योग में द्वि. तृ. पं वि. होती है। वि. जत्तेण, जत्ततो, जत्तं विणा णरो न जीवइ

7. तुल्य अर्थ बताने वाले शब्दों के योग में तृ. या ष. वि.। वि. सो देवेण/देवस्स तुल्लो अत्थि, धम्मेण/धम्मस्स समाणो मित्तो णत्थि।

8. शब्द के शरीर के विकृत अंग में। वि. सो पारेण खंजो अत्थि

9. क्रियाविशेषण शब्दों में। वि. सो सुहेण जीवइ

10. कम्मी-२ सप्तमी → तृ.। वि. तेणं कालेणं तेणं समएणं

11. किं, कज्जं, अत्थो, प्रयोजन प्रकट करने वाले शब्दों के योग में आवश्यक वस्तु को। वि. मूढेण मित्तेण किं, को अत्थो तेण पुत्तेण जो ण विउसो ण धम्मिओ।

(D) संप्रदान कारक: चतुर्थी विभक्ति

1. दान करने के द्वारा कर्ता जिसे संतुष्ट करना चाहता है, उस व्यक्ति को संप्रदान संज्ञा होती है। संप्रदान को बताने वाले संज्ञा को च. वि.। वि. राया णिद्धणाय धणं इदाइ/देइ।

2. जिस प्रयोजन के लिए लिए कोई कार्य होता है, उस प्रयोजन में चतुर्थी। वि. सो मुत्तीए हरिं भजइ

3. 'रोज' अर्थक क्रियाओं के योग में प्रसन्न होने वाला सं. कहा जाता है, उसे च. वि.। वि. बालअस्स पुफ्फाणि रोअन्ति

4. कुज्झ, दोह, ईस, असूय अर्थक क्रियाओं के योग में। वि. वक्खणो रावणाय कुज्झइ

5. नमो के योग में। वि. महावीराय नमो। 'णम' क्रिया के योग में द्वि. और च.।

6. अत्थं (पर्याप्त अर्थ में)। वि. झाणो मोक्खस्स अत्थं अत्थि

7. सिह क्रिया के योग में। वि. सो जसस्स सिहइ

8. कह, संस, चक्ख (कहना) अर्थक क्रिया के योग में। वि. हं तुज्झ कहेमि

9. च के अर्थ में अत्थं का प्रयोग। वि. सो णाणत्थं चेट्ठइ।

(E) अपादान कारक : पंचमी विभक्ति

1. जिससे कोई वस्तु अलग हो, वह। उ. रुक्खत्तो पुप्फं पडइ
2. गुणवाचक अस्त्री. शब्द तृ. या पं. में। उ. सो मुक्खत्तो। मुक्खेण ण सोहए
3. क. गुणवाचक स्त्री. शब्द तृ. में ही। उ. सो बुद्धीए पाढ़िओ
(ख) (क.) गुणवाचक सिवाय अस्त्री. शब्द तृ. में ही। उ. सो धणेण इत्तसए
4. भय वाची धातु के योग में जिससे भय हो, उसे पं। उ. सो सप्पाओ बीहइ
5. जिससे कर्ता छिपना चाहता हो, उसे पं। उ. सो गुरुणो लुक्कइ
6. रोकना वाची धातु के योग में जिससे रोकना हो, उसे। उ. गुरू सिस्सं पावाओ रोक्कए
7. जिससे विद्या या कला सीखी। पढ़ी जाए, उसे। उ. सो गुरुत्तो गायणकलं सिक्खइ
8. दुगुच्छ, विरम, पमाय वाचक शब्दों या क्रियाओं के योग में पं। उ. सज्जणो पावाओ दुगुच्छए, मुक्खो अज्झयणाओ विरमइ
9. उपज्ज, पभव क्रिया के योग में पं। उ. खेत्ततो धन्नं उप्पज्जइ, लोहा कोहो पभवइ
10. जिससे किसी वस्तु या व्यक्ति की तुलना की जाए, उसे पं। उ. राइणो मंती कुसलतरो आत्थि
11. पं. की जगह कभी-कभी तृ. या स. भी होती है। उ. सो चोरेण बीहइ, तुमं सज्झाये पमायसि
'विणा' के योग में। उ. रामा विणा सीया ण सोहइ।

(F) षष्ठी विभक्ति : संबंध

1. हेउ शब्द के साथ षष्ठी होती है। हेउ तथा कारण या प्रयोजनवाची शब्द को भी ष.। उ. सो जन्नस्स हेउस्स गामे वसइ
2. यदि हेउ शब्द के साथ सर्वनाम का प्रयोग है तो दोनों को विकल्पे तृ. पं. ष.। उ. सो केण हेउणा। कस्स हेउस्स। कत्तो हेउत्तो
3. समुदाय में से एक वस्तु विशेष दिखाना हो तो समुदाय में ष. या स.। उ. पुप्फेसु। पुप्फाणं कमलं जईव (अत्थ) वसइ
4. आशीर्वाद देने की इच्छा होने पर आउस, भद्द, कुसल, सुख, हित आदि शब्दों के च. या ष.। उ. राघस्स आयुसं, भद्दं, कुशलं...
5. द्वि. तृ. आदि की जगह ष.। उ. अहं सीमंधरस्स वन्दामि, भणस्स सो त्थुणे, सो गोरस्स बीहइ, तास पिट्टीए केस-भारो
6. (खेदपूर्वक) स्मरण करना, दया करना (द्वि.) इत्यादि क्रियाओं के कर्म में। उ. सो मायाए सुमरइ, सो बालस्स दयइ (तृ.) (पं.) (स.)

(G) अधिकरण कारक : सप्तमी विभक्ति

1. कर्ता या कर्म का आधार, अधिकरण। उ. सो झाणे (कर्ता) अच्छइ, सेण्हं सो थाल्लीए (कर्म) ओदणं पचइ।
2. सति सप्तमी। ⓐ हो चुके कार्य के वाक्य में धातु सकर्मक हो तो वाक्य कर्मवाच्य में होगा। उ. तुमए ओयणे खाए सो हरिसइ
ⓑ हो चुके कार्य के वाक्य में अकर्मक क्रिया हो तो वाक्य कर्तृवाच्य में होगा। उ. सूरे उग्गए कमलं विगसइ
ⓒ सत्यगत्यर्थक क्रिया दोनों प्रकार से। उ. रामे वनं गए दसरहो पाणा चुअइ, रामेण वने गए दसरहो पाणा चुअइ
3. द्वि. और तृ. की जगह। उ. अहं नयरे न जामि (द्वि.), तिसु तेसु अलंकिया पुहवी (तृ.)
4. पं. की जगह। उ. अन्तेउरे रमिउं राया आगओ
5. फेंकने अर्थ की क्रियाओं के साथ। उ. सो खात्तं जले खिवइ।

तद्धित

क्रियाओं को छोड़कर संज्ञा, सर्वनाम, विशेषणादि में जो प्रत्यय शब्द से जुड़कर विभिन्न अर्थों में प्रयोग किए जाते हैं, उन्हें तद्धित प्रत्यय कहते हैं। इन प्रत्यय के लगाने से जो शब्द बनते हैं, उन्हें तद्धित कहते हैं।

संबंध अर्थ में
1. 'केर' - संबंध में, अम्ह-तुम्ह-पर-राय में। eg. अम्हकेरो पुत्तो
2. 'वक' 'इक' - संबंध में, परवक - राइक।
3. 'एच्चय' - संबंध में, अम्हेच्चय, तुम्हेच्चय।

'की तरह' अमुक में स्थित
4. व्व - eg. महुराव्व → महुरव्व पाडलिपुत्ते पासाया संति

गणना अर्थ
5. इत्थ, उत्थ eg. गाम्मित्थो पुरुसो, अप्पुत्थो जोई
6. हुत्तं eg. तिहुत्तं, सयहुत्तं [अर्धमागधी में खुत्तो - तिखुत्तो, तिक्खुत्तो]

भाववाचक
7. (i) इमा - पीण + इमा = पीणिमा, पुप्फिमा स्त्री(स्त्री)
   (ii) त्तण त्त पीणत्तणं पीणत्तं (नपुं)
   (iii) ता पीणता (स्त्री) → पीणया

परिमाण
8. (i) इत्तिअ - क, ज, त, एत में ही eg. जित्तिअ, तित्तिअ, इत्तिअ (एत का लोप)
   (ii) एत्तिअ - क, ज, त, एत में eg. कित्तिअ → किंतिअ, एत्तिअ (एत का लोप)
   (iii) एत्तिल - " eg. केत्तिल → किंतिल एत्तिल (")
   (iv) एदृह - " eg. केदृह → किंदृह एदृह (")

मतु अर्थ
9. (i) आलु - दयालु, नेहालु (ii) इल्ल - सोहिल्ल, छाइल्ल (iii) उल्ल - विआकुल्ल, दप्पुल्ल
   (iv) आल - रसाल, सद्दाल (v) वन्त - धणवन्त, भत्तिवन्त (vi) मन्त - सिरिमन्त, पुण्यमन्त
   (vii) इत्त - कव्वइत्त, माणइत्त (viii) इर - गव्विर, रेहिर (ix) मण - धणमण, सोहामण
   (x) मन्त - अर्धमागधी, म का व विकल्पे। भगवन्तो, वण्णवन्तो, भगमन्तो, वण्णमन्तो। प्र.एक. विकल्पे भगवं, वण्णवं।

वं. वि.
10. (i) सो - णाणत्तो, सव्वतो (ii) दो - णाणदो, सव्वदो (iii) ओ - णाणओ, सव्वओ (सभी अव्यय)

स. वि.
11. (i) हि - जहि, तहि, अन्नहि (ii) ह - जह, तह, अन्नह (iii) त्थ - जत्थ, तत्थ, अन्नत्थ (सर्वनामों में, सभी अव्यय)

'एकदा' अर्थ
12. (i) सि - एकसि (ii) सिअं - एक्कसिअं (iii) इआ - एक्कइआ ('एक' में, अव्यय)

स्वार्थ
13. (i) आलिअ - मीसालिअ (ii) र - दीहर (iii) त्त - विज्जुत्ता, पत्तं, पीअत्तं, पीअत्तो, अन्नत्थ (इन पदों में ही)
   (iv) त्थ - नवत्थ, एकत्थ (2 शब्द में ही) (v) अ - चन्दअ, हिअयअ (संज्ञा और विशेषण में)
   इल्ल - पल्लाविल्ल, पुरिल्ल (")
   उल्ल - मुहुत्तुल्ल, हत्थुल्ल (")
   (vi) त्ता / या - अर्धमागधी में - गवेसणया, गवेसणत्ता।

14. अर - अम्म (तर - तम) / ईयस - इट्ठ - (i) जब दो वस्तुओं में से एक की विशेषता कहे, तब अर - ईयस; जिससे विशेषता बताए, उसे पंचमी। eg. मंती नरिंदत्तो पडुअरो। पट्ठीयसो अत्थि
   (ii) बहुत में से एक का अतिशय बताए, तब अम्म - इट्ठ। जिनमें से विशेषता बताए, उसे ष. या स.। eg. दत्ताणं / जत्तेसु रामो पडुअमो। मड पडिट्ठो अत्थि।

Page No.
Date :

स्त्री प्रत्यय

स्त्रीलिंग शब्द - 2 प्रकार

(A) मूल स्त्रीलिंग शब्द = जिन शब्दों का अर्थ ही स्त्री वाचक है और जिनके रूप पुल्लिंग या नपुं. में नहीं चलते। eg. लता, लक्ष्मी

(B) प्रत्यय के योग से बने हुए स्त्री. शब्द - जो शब्द स्त्री-प्रत्यय लगने के बाद स्त्री. की तरह चलते हैं।
प्रकृत में मुख्यतया आ और ई स्त्री प्रत्यय के रूप में काम आते हैं।

1. आ eg. बाला, कोइला, मूसिया, तणया, अक्का, बच्चा, आचरिया
2. ई eg. हंसी, हरिणी, किसोरी, कुमारी, सीही, माउली, तित्तिरी, मज्झरी, विज्जामही
3. आण + ई eg. ईसाणी, माउलाणी, रुद्दाणी, उवज्झायाणी, आयरियाणी
4. आ/ई eg. नीला - नीली, काला - काली, हसन्ता - हसन्ती
5. अन्त्य 'क' हो तो पूर्व के 'अ' का इ eg. बालिआ, गंधिआ, णाडिआ, गोवालिया, णाट्टिआ - णाट्टिगा
6. Special रूप -

पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.
जुव	जुवई	सामि	सामिणी	पिउ	माया
जुवाण	जुवाणी	सेट्ठि	सेट्ठिणी	पुरिस	इत्थि
हत्थि	हत्थिणी	पइ	भज्जा	भाउ	बहिणी

अव्यय

जिन शब्दों के रूप सभी लिंग, विभक्ति, वचन में एक ही होते हैं अर्थात् लिंग, विभक्ति, वचन अनुसार जिन शब्दों के रूप में व्यय नहीं होता, वे अव्यय। 5 प्रकार - 1. उपसर्ग 2. क्रियाविशेषण 3. समुच्चयबोधक 4. मनोविकारसूचक 5. अतिरिक्त

1. उपसर्ग (उवसग्ग) - जो अव्यय क्रिया, संज्ञा या विशेषण शब्दों के पूर्व जोड़े जाते हैं। इनसे शब्दों के अर्थ में विशेषता आती है। (i) मुख्यार्थ को समाप्त कर नया अर्थ - eg. सरइ - विसरइ, जय - पराजय, हरइ - प्रहरइ - विहरइ - अवहरइ।
(ii) विशेषता - eg. गमण (जाना) - अणुगमण (पीछे जाना)।
(iii) समान अर्थ - eg. जय - विजय, वसइ - अहिवसइ

अपभ्रंश रचना सौरभ Summary.

क्रियारूप

★ वर्तमानकाल

उं, मि [4,2] (अ,आ,ए) — हुं, मो, मु, म [13,4] (अ,आ,ई,ए)

हि, सि, से [4,2] (अ,ए) — हु, ह, इत्था [3,3]

इ, ए [3,1] (अ,ए) — हिं, नि, न्ते, इरे [4,4]

★ विधि-आज्ञा

मु [2,1] (अ,ए) — मो [3,1] [अ,आ,ए]

इ, ए, उ, ०, हि, सु [8,5] (अ,ए) — ह [2,1] [अ,ए]

उ [2,1] (अ,ए) — न्तु [2,1] [अ,ए]

★ भविष्यकाल

स, हि + उं, मि [4,4] (ए) (इ)

स, हि + हि, सि, से [6,4] (ए) (इ)

स, हि + इ, ए [4,2] (ए) (इ)

स, हि + हुं, मो, मु, म [8,8] (इ) (इ)

स, हि + हु, ह, इत्था [6,6] (ए) (इ)

स, हि + हिं, नि, न्ते, इरे [8,8] (ए), (इ)

★ संबंधक भूत कृदन्त – इ, इउ, इवि, आवि, एप्पि, एप्पिणु, एवि, एविणु [8]

★ हेत्वर्थक कृदन्त – एवं, अण, अणहं, अणहिं, एप्पि, एप्पिणु, एवि, एविणु [8]

★ भूतकालिक कृदन्त – अ, य [2]

★ वर्तमान कृदन्त – न्त, माण

★ भाववाच्य – इज्ज, इअ

★ विधि कृदन्त – अव्व (इ, ए), इएव्वउं, एव्वउं, एवा (अपरिवर्तनीय)

शब्दरूप

..... (प्रायः अकारान्त में), [ ] (इ-उकारान्त में)

★ पुं.(नपुं.) ★ स्त्री. [↑ = ह्रस्व स्त्री. में, ० = दीर्घ में]

1.	०, आ, उ, ओ (०, आ, उ)	०, आ (०, आ, अइं, आइं)	०, ↑	०, ↑, उ, ↑उ, ओ, ↑ओ
2.	०, आ, उ (०, आ, उ)	०, आ (०, आ, अइं, आइं)	०, ↑	०, ↑, उ, ↑उ, ओ, ↑ओ
3.	एं, एण, एणं [०, ०↑, एं, ↑एं, ण, ↑ण, णं, ↑णं]	हिं, आहिं, एहिं	ए, ↑ए	हिं, ↑हिं
4,6.	०, आ, ु, आसु, स्सु, हो, आहो	०, आ, अहं, आहं [हुं, ↑हुं]	०, ↑, हे, ↑हे	०, ↑, हु, ↑हु
5.	अहे, ↑हे, अहु, आहु	हुं, ↑हुं	हे, ↑हे	हु, ↑हु
7.	इ, ए [हि, ↑हि]	हिं, ↑हिं [हुं, ↑हुं]	हिं, ↑हिं	हिं, ↑हिं
8.	प्रथमा "	प्रथमा " [हो, ↑हो]	"	"

★ सर्वनाम – पुं.नपुं. 5. एक व. हो, ↑हो ; 7. एक व. हिं, ↑हिं | एत → प्र.वि. एहो, एहु, एहु (पुं.) (नपुं.) (स्त्री.) एइ

★ अम्ह – 1. हउं, अम्हे / अम्हइं ★ तुम्ह – तुहुं, तुम्हे / तुम्हइं

2. मइं, अम्हे / अम्हहं — पइं, तइं, तुम्हे / तुम्हहं

3. मइं, अम्हेहिं — पइं, तइं, तुम्हेहिं

4-5-6. मइ / मज्झु, अम्हहं — मइ / तुज्झ / तुध्र (तउ), तुम्हहं

7. मइं, अम्हासु — पइं, तइं, तुम्हासु

अपभ्रंश रचना सौरभ

अभ्यास

Page No.
Date :

पाठ 17

2. 1. अम्हे/अम्हेहं/लुक्कहुं/लुक्कमो/लुक्कामो/लुक्केमो/लुक्कमु/लुक्कामु/लुक्केमु/लुक्किमु/लुक्कम/लुक्कामा/लुक्किमा/
2. अम्हे/अम्हेहं/लुक्कमो/लुक्कामो/लुक्केमो 3. सो डरइ/डरेइ/डरए 4. सो डरउ/डरेउ 5. तुहुं उट्ठसि/उट्ठेसि/उट्ठहि/उट्ठेसी/उट्ठेहिं/
6. ते उट्ठन्तु/उट्ठेन्तु 7. हउं खेल्लउं/खेल्लामि/खेल्लामि/खेल्लेमि 8. तुम्हे/तुम्हेहं खेल्लह/खेल्लेह 9. सा उल्लसइ/उल्लसेइ/उल्लसए/
10. ते उल्लसन्तु/उल्लसेन्तु 11. सो इच्छइ/इच्छेइ/इच्छए 12. सो इच्छउ/इच्छेउ 13. तुहुं इच्छे/इच्छु/इच्छि/इच्छ/इच्छहि/
इच्छेहि/इच्छहुल इच्छेसु 14. ते रुवन्ति/रुवन्ते/रुवेरे/रुवहिं 15. अम्हे/अम्हहं उच्चल्लहुं/उच्चल्लमो 16. हउं खिडामि/
खिडामि/खिडेमि/खिडउं 17. तुहुं तडफडसि/तडफडेसि/तडफडसे/तडफडेहि 18. तुहुं कुत्थ/कुत्थि/कुत्थु/कुत्थे/कुत्थहि/कुत्थेहि/
कुत्थसु/कुत्थेसु 19. अम्हे/अम्हहं उज्जमहुं/उज्जमो 20. तुहुं घुम्म/घुमो/घुमि/घुमु/घुमहि/घुमेहि/घुमसु/घुमेसु 21. अम्हे/
अम्हहं कंपहुं/कंपमो 22. तुहुं कंप/कंपु/कंपो/कंपिच्चहि/कंपेहि/कंपसु/कंपेसु 23. सो जुज्झउ/जुज्झेउ 24. ते जुज्झन्तु/जुज्झेन्तु
25. तुहुं एत्थहि/एत्थसि 26. तुहुं एत्थइ/एत्थए/एत्थउ/एत्थहि/एत्थसु 27. ते ठन्तु 28. तुहुं थक्क/थक्कु/थाकि/थक्के/थक्कहि/थक्केहि/थक्कसु/
थक्केसु 29. तुम्हे/तुम्हहं मुच्चह/मुच्चेह/मुच्चिस्था 30. अम्हे/अम्हहं ठाहुं/ठामो/ठामु/ठाम 31. ता खेलन्ति/खेलन्तो/खेलिरे/खेलहिं 32. हउं
खेलउं/खेल्लामि/खेलेमि/खेलामि 33. तुहुं थुल्लि/उट्ठहि/उट्ठसे/उट्ठेसि उट्ठसा कंपइ/कंपेइ/कंपए 35. अम्हे/अम्हहं अच्छहुं/अच्छमा/
अच्छाम/अच्छेम/अच्छमो/अच्छामो/अच्छेमो/अच्छहु/अच्छामु/अच्छेमु/अच्छिमा/अच्छिमो/अच्छिमु/
हसउं/हसामि/हसेमि/हसामि 2. हसा/हसो/हसि/हसु/हसहि/हसेहि/हससु/हसेसु 3. ठाए 4. हसामो/हसामो/हसेमो 5. ~~हसन्ते~~ हसह/
हसेहु/सिस्था 6. ठन्तु 7. ठनि/ठनो/ठहिं/ठहरे 8. थक्कह/थक्केह 9. थरनि/थरहिं/थरनो/थरिरे 10. लज्जन्तु/लज्जेन्तु 11. पडसि/पडेसि/पडसे/
पडहि 12. खेलइ/खेलेइ/खेलए 13. उट्ठहुं/उट्ठमो 14. घुमइ/घुमेइ/घुमए 15. हासि/हाहि
4. 1. अम्हे/अम्हहं 2. हउं 3. हउं 4. तुम्हे/तुम्हहं 5. अम्हे/अम्हहं 6. सा/सो 7. हउं 8. तुम्हे/तुम्हहं 9. तोता 10. सो/सा 11. तुहुं 12. तोता 13. अम्हे/अम्हहं
14. तुम्हे/तुम्हहं 15. सो/सा
5. 1. पडन्तु/पडेन्तु 2. रुवा/रुवोसन्तु/रुवि/रुवहि/रुवेहि/रुवसु/रुवेसु 3. थक्कउ/थक्केउ 4. हसामो/हसामो/हसेमो 5. हसह/हसेहु 6. कंपमो/कंपेमो/कंपमो
7. घुमउ/घुमेउ 8. खेलन्तु/खेलेन्तु 9. थरन्तु/थरेन्तु 10. उल्लसन्तु/उल्लसेन्तु 11. कुत्थ/कुत्थे/कुत्थु/कुत्थि/कुत्थहि/कुत्थेहि/कुत्थसु/कुत्थेसु
12. मुच्चइ/मुच्चेइ 13. भिजन्तु/भिजेन्तु 14. जुज्झमो/जुज्झामो/जुज्झेमो 15. ठाह
6. 1. अम्हे/अम्हहं 2. ~~स~~ सो/सा 3. तुम्हे/तुम्हहं 4. अम्हे/अम्हहं 5. अम्हे/अम्हहं 6. सो/सा 7. तुम्हे/तुम्हहं 8. तुम्हे/तुम्हहं 9. तोता 10. तुहुं
11. थक्कि 12. सो/सा 13. अम्हे/अम्हहं 14. तुहुं 15. तुहुं

पाठ 18

1. 1. अम्हे/अम्हहं लज्जेसहुं/लज्जेसमो/लज्जेसमु/लज्जेसम/लज्जिहिहुं/लज्जिहिमो/लज्जिहिमु/लज्जिहिम 2. तुहुं रुवेलहि/रुवेससि/रुवेसहे/
रुविहिहि/रुविहिसि/रुविहिसे 3. अम्हे/अम्हहं उच्चल्लेसहुं/उच्चल्लिहिहुं/उच्चल्लेसमो/उच्चल्लिहिमो/उच्चल्लेसमु/उच्चल्लिहिमु 4. हउं खेल्लेसउं/
खेल्लेसमि/खेलिहिउं/खेल्लिहिमि 5. सो कुत्थिहिइ/कुत्थिहिए/कुत्थेसए/कुत्थेहए 6. ते जुज्झेसन्ति/जुज्झेसन्ते/जुज्झेरे/जुज्झेसहिं/
जुज्झिहिन्ति/जुज्झिहिन्ते/जुज्झिहिरे/जुज्झिहिहिं 7. तुम्हे/तुम्हहं मुच्चेसह/मुच्चेसह/मुच्चेसइत्था/मुक्खिहिह/मुच्चिहिह/मुच्चिहित्था
8. अम्हे/अम्हहं चुम्भेसमो/चुम्भेसमु/चुम्भेसम/चुम्भेसहुं/चुम्भिहिमो/चुम्भिहिमु/चुम्भिहिम/चुम्भिहिहुं 9. तुम्हे/तुम्हहं अच्चिहिह/अच्चिहि/
अच्चिहित्था/अच्चेसह/अच्चेसह/अच्चेसइत्था 10. अम्हे/अम्हहं उट्ठेसहुं/उट्ठेसमो/उट्ठेसमु/उट्ठेसम/उट्ठिहिहुं/उट्ठिहिमो/उट्ठिहिमु/उट्ठिहिम
11. ते तडफडेसन्ति/तडफडेसन्ते/तडफडेसरे/तडफडेसहिं/तडफडिहिन्ति/तडफडिहिन्ते/तडफडिहिरे/तडफडिहिहिं 12. तुहुं थक्केसहि/थक्केससे/
थक्केससि/थक्किहिहि/थक्किहिसि/थक्किहिसे 13. सो उल्लसेसइ/उल्लसेसए/उल्लसिहिइ/उल्लसिहिए 14. अम्हे/अम्हहं उज्जमेसमो/
उज्जमेसमु/उज्जमेसम/उज्जमेसहुं/उज्जमिहिमो/उज्जमिहिमु/उज्जमिहिम/उज्जमिहिहुं
2. 1. हउं कंपउं/कंपमि/कंपामि/कंपेमि 2. तुहुं जुज्झ/जुज्झि/जुज्झु/जुज्झे/जुज्झहि/जुज्झेहि/जुज्झसु/जुज्झेसु 3. सो थक्केसहि/थक्केससि/
थक्केससे/थक्किहिहि/थक्किहिसि/थक्किहिसे 4. अम्हे/अम्हहं उम्मो/उरमो/उरिमो/उरेमो/उरमा/उराम/उरेम/उरिम/उरमु/उरामु/उरेमु/उरिमु/
उरहुं 5. हउं कुत्थमु/कुत्थेमु/कुत्थामु/कुत्थेमि 6. तुम्हे/तुम्हहं उच्चल्लेसह/उच्चल्लेसइ/उच्चल्लेसइत्था/उच्चल्लिहिह/उच्चल्लिहित्था/उच्चल्लिहिहु 7. तुहुं पडछी/
पडछे/पडहि/पडेसि 8. सो भिडइ/भिडेइ 9. हउं उट्ठेसमि/उट्ठेसउं/उट्ठिहिमि/उट्ठिहिउं 10. तुहुं उज्जमसि/उज्जमेसि/उज्जमसे/उज्जमहि 11. ते उच्चल्लन्तु/
उच्चल्लेन्तु/

12. अम्हे/अम्हइं/अम्हसेसहु/अम्हसेसिहिं/अम्हसेसमो - 13. हउं/हवामि/हवोमि/हवउं/हवउं/हवउं/हवहि/हवहि/हवहु/हवसु/हवेसु/हवेसु 15. ता अरेसनि/अरेसन्ते/अरेसाइरे/अरेसाहिं/अरिहिहिं/अरिहिन्ते/अरिहिन्ते/अरिहिइरे 16. सो/अच्चए/अच्चाए/अच्चाएइ/अच्चाए 17. अम्हे/अम्हं अच्चम्हो/अच्चेमो/अच्चेमो/अच्चम्हो 18. हउं/चुमिहिमि/चुमिहिउं/चुमेहिमि/चुमेहिमि/चुमेहसउं 19. तं थक्कानी/थक्कन्ते/थक्किरे/थक्कहिं 20. अम्हे/अम्हं खेत्तिहिहुं/खेत्तिहिमो/खेत्तिहिमु/खेत्तिहिम/खेत्तेसहु/खेत्तेसमो/खेत्तेसमु/खेत्तेसम 21. सा कंपीहिए/कंपीहिए/कंपेसए/कंपेसए 22. सा डरइ/डरए/डरेए/डरेए 23. सो जुज्झउ/जुज्झेउ 24. ता लज्जिहिनि/लज्जिहिन्ते/लज्जिहिरे/लज्जिहिहिं/लज्जेसन्ति/लज्जेसन्ते/लज्जेसइरे/लज्जेसाहिं 25. ता डूहनि/डूहिहिं/डूहन्ते/डूहिरे 26. तुम्हे/तुम्हं उज्जमह/उज्जमेह 27. तुम्हे/तुम्हं कुव्वह/कुव्वेह

3. 1. हउं 2. अम्हे/अम्हं 3. अम्हे 4. तुहं 5. तुहुं 6. तुम्हे 7. तउं 8. तुहं 9. अहं/अम्हे 10. सो 11. हउं 12. तीता 13. तुहं 14. सा 15. तुम्हे 16. हउं 17. अम्हे 18. तुम्हे 19. तं 20. सा 21. वहुं 22. हउं 23. तुम्हे 24. हउं 25. तुम्हे 26. अम्हे 27. - 28. तं 29. - 30. हउं।

पाठ 22

1. सो रुवि/रुविज्जु/रुवि/रुविवि/रुवावि/रुवेविणु/रुवोप्पि/रुवोप्पिणु सयइ/सयेइ/सयए/सयेए 2. सा वज्जि/वज्जिउ/वज्जिवि/वज्जावि/वज्जोप्पि/वज्जोप्पिणु/वज्जेवि/वज्जेविणु डहइ/डहेइ/डहए/डहेए 3. ते पडि/पडिउ/पडिवि/पाडेवि/पडिविणु पडेवि/पडेप्पि/पडेप्पिणु डहन्ति/डहहिं/डहिरे 4. तुम्हे वक्कि/थक्किउ/थक्किवि/थक्कावि/थक्केवि/थक्केविणु/थक्केप्पि/थक्केप्पिणु उच्चहह/उच्चेह 5. अम्हे खेत्ति/खेत्तिउ/खेत्तिवि/खेत्तावि/खेत्तेवि/खेत्तेविणु/खेत्तेप्पि/खेत्तेप्पिणु उच्चसहुं 6. अम्हे उट्ठि/उट्ठिउ/उट्ठिवि/उट्ठावि/उट्ठेवि/उट्ठेविणु/उट्ठेप्पि/उट्ठेप्पिणु उच्चहुं/उच्चेस्सो/उच्चेसमु/उच्चेसम/उच्चिहिहुं/उच्चिहिन्ते/उच्चिहिहिमु/उच्चिहिते कुप्पि/कुप्पिउ/कुप्पिवि/कुप्पावि/कुप्पेवि/कुप्पेविणु/कुप्पेप्पि/कुप्पेप्पिणु खेत्तेसन्ति/खेत्तेसन्ते/खेत्तेसइरे/खेत्तेसाहिं

7. 8. तुहुं खेत्ति/खेत्तिउ/खेत्तिवि/खेत्तावि/खेत्तेवि/खेत्तेविणु/खेत्तेप्पि/खेत्तेप्पिणु उच्चसइ/उच्चसए/उच्चसाहि/उच्चसेहि/उच्चसेसु 9. तं रूसि/रूसिउ/रूसिवि/रूसावि/रूसेवि/रूसेविणु/रूसेप्पि/रूसेप्पिणु रुच्चकनि/रुच्चकन्ते/रुच्चकिरे/रुच्चकहिं 10. सा चुमि/चुमिउ/चुमिवि/चुमावि/चुमेवि/चुमेविणु/चुमेप्पि/चुमेप्पिणु उच्चसइ/उच्चसेइ/उच्चसए/उच्चसेए

पाठ 23

1. सो थक्केवं/थक्कणु/थक्कणहं/थक्कणहिं/थक्कावि/थक्कावि/थक्केविणु/थक्केप्पि/थक्केप्पिणु पडइ/पडेइ/पडए/पडेए 2. ते जुज्झणहिं/जुज्झाणहं/जुज्झेवं/जुज्झेप्पि/जुज्झेप्पिणु/जुज्झेविवि/जुज्झेविणु रुच्चकनि/रुच्चकहिं 4. तुम्हे डहेवं/डहण/डहणहं/डहणहिं/डहेविवि/डहेविणु/डहेप्पि/डहेप्पिणु उच्चहह/उच्चेह 5. अम्हे खेत्तेवं/खेत्तण/खेत्तणहं/खेत्तणहिं/खेत्तावि/खेत्तेविवि/खेत्तेविणु/खेत्तेप्पि/खेत्तेप्पिणु चुमेसहुं/चुमेहिहुं 6. तुम्हे उच्चसेवं/उच्चसेवि/उच्चसेविणु/उच्चसेप्पि/उच्चसेप्पिणु/उच्चसण/उच्चसणहं/उच्चसणहिं जीवहं/जीवेह 7. तं सयेवं/सयण/सयणहं/सयणहिं/सयावि/सयेविवि/सयेविणु/सयेप्पि/सयेप्पिणु थक्कन्तु/थक्कन्तु 8. सो जज्जेवं/जज्झण/जज्झणहं/जज्झणहिं/जज्झावि/जज्झेविवि/जज्झेविणु/जज्झेप्पि/जज्झेप्पिणु उज्जमउ/उज्जमेउ 9. ते णच्चेवं/णच्चण/णच्चणहं/णच्चणहिं/णच्चावि/णच्चेविणु/णच्चेप्पि/णच्चेप्पिणु रुट्ठिहिनि/रुट्ठिहिहिं/रुट्ठिसहिं 10. ता कुत्तेवं/कुत्तण/कुत्तणहं/कुत्तणहिं/कुत्तावि/कुत्तेविणु/कुत्तेप्पि/कुत्तेप्पिणु डहेसहिं/डहिहिन्ते

पाठ 24 (क)

1. 1. मेहे/मेहा गज्जनि/गज्जन्ते/गज्जिरे/गज्जहिं 2. वड/पडा/पेडु/वडे झुबकइ/झुबकेइ/झुबकए/झुबकेए 3. रयण/रयणा/रयणु/रयणो सोहइ/सोहेइ/सोहए/सोहेए 4. दुज्जस/दुज्जसा/दुज्जसु/दुज्जसो चमरइ/चमरेए 5. हुंडावहा/हुंडावहा/हुंडावहु/हुंडावहो जलइ/जलेइ जणेर/जणेरो/जणेरु/जणेरा/जणेरु डहेइ 7. गंथ/गंथा/गंथु/गंथो नयसेइ 8. मित्त/मित्ता/मित्तु/मित्तो उज्जमए 9. रहुणन्दण/रहुणन्दणा/रहुणन्दणु/रहुणन्दणो हरिवइ/हरिवए 10. कुक्कुर/कुक्कुरा/कुक्कुरु/कुक्कुरो चुक्केए 11. पुत्त/पुत्ता/पुत्तु/पुत्तो कंपइ/कंपेइ 12. घर/घरा/घरु/घरो पडेइ 13. णर/णरा जरानी/जरहिं 14. गल्ल/गल्ला/गल्लु/गल्लो गलए/गलेए 15. पिआमह/पिआमहा/पिआमहु/पिआमहो थक्केए

16. वया/वया सोहनो/सोहहिं 17. कह/कहा णच्चिरे/णच्चहिं 18. दिवायर/दिवायरा/दिवायरु/दिवायरो उगइ 19. रयणस/रयणसा डरानी/डरहिं सीह/सीहा उच्चन्ति/नइसन्ते/उच्चिरे/खसहिं

(ख) 1. भाउत्त/भाउत्ता/भाउत्तु/भाउत्तो डहुउ/डहेउ 2. पोत्ता/पोत्तु/पोत्ता/पोत्तो चुकउ/चुकेउ 3. गल्ल/गल्ला/गल्लु/गल्लो नयसेइ/खयेइ 4. खत्तिअ/खत्तिआ/खत्तिअसु/खत्तिअसे खेत्तन्तु/खेत्तेन्तु 5. रयणस/रयणसा/रयणसु/रयणसो मरन्तु 6. दुहु/दुहा गच्छेन्तु 7. भागम/भागमा रोहन्तु 8. मित्त/मित्ता/मित्तु/मित्तो उत्तमस हरिसेउ 9. सायर/सायरा/सायरु/सायरे चलइ 10. पुत्त/पुत्ता/पुत्तो/पुत्तु जीवेउ

(ग) 1. हुंडावहा/हुंडावहा/हुंडावहु/हुंडावहो जलेसइ 2. जोगिआ/जोगिआ नरसेसन्ति/खयेहिहिं 3. साप/साप्पा डहेसहिं/डहिहिन्ते 5. रहुणन्दण/रहुणन्दणा हरिसेसहिं/हरिसेहिरे/उच्चसेसन्ते/उच्चसिहिन्ते 6. अम्हो खयेसइ/नइसेसए 6. रयणस/रयणसु च्चयेसहिं/उच्चिहिहिन्ते

७. लोल्लसो|लिल्लसो|बालसु|बालसो|रूसेसइ|रूसीहिए ८.णरो/णर उज्जोसहिं|उज्जोसीहिइ ९.घरं|घरा पडिहीहिं|पडेसन्ते १०.कूव|कूवा|कूवु|कूवो भूवकेसहिं|सुक्कीहिन्ति|

5.(क) १. कुक्कुर|कुक्कुरा|कुक्कुरु|कुक्कुरो डरि|डरिए|डरिवि|डरावि|डरेवि|डरेविणु|डरेप्पि|डरेप्पिणु सत्तइ २.बप्प|बप्पा|जणेरु|जणेरा|हसिहसिए|हसावि|हसाविए|हसेविणु|हसेप्पि|हसेप्पिणु जीवइ ३.नरिं|नरिंदा|रायु|रायो|हरिसि|हरिसिए|हरिसेवि|हरिसाविं|उत्थयसेविणु| उत्थयसेवी उत्थयसेप्पि|उत्थयसेप्पिणु नट्ठेइए ५.सप्प|सप्पा डरि|डरिए|डरावि|डरेवि|डरेविणु|डरेप्पि|डरेप्पिणु नस्सइ पत्तघनि|पत्तनो पत्ताइरे|पत्तादिं ६.ससुरो|ससुरु|ससुरा|ससुरो रूसि|रूसिए|रूसीवि|रूसावि|रूसेवि|रूसेविणु|रूसेप्पि|रूसेप्पिणु जीवइ ८.रयण|रयणा| रयणो|रयणु पीडि|पीडिए|पीडिवि|पडावि|पडेवि|पडेविणु|पडेप्पि|पडेप्पिणु नट्ठेइए ७.जणेर|जणेरा|बप्पु|बप्पो जाणि|जाणिए|जाणिवि|जणावि| जणेवि|जणेविणु|जणेप्पि|जणेप्पिणु पुत्तइ|

(ख) १. जणेर|जणेरा|बप्पु|बप्पो हसेवं|हसण|हसणहं|हसणहिं|हसेवि|हसेविणु|हसेप्पि|हसेप्पिणु जीवइ २.घोत्त पत्तेवं|पत्तण|पत्तणहं| पत्तणहिं|पत्तोहि|पत्तोविणु|पत्तेप्पि|पत्तेप्पिणु डेट्ठइ ३.दुसवहु नस्सेवं|सासस्सण|नस्सणहं|नस्सणहिं|खयेवि|खयेविणु|खयेप्पिणु खयेप्पि जलइ ५.पिआगहो चुमेवं|चुमण|चुमणहं|चुमणहिं डेट्ठइ ६.सत्तिल|सत्तिला|सत्तिलु|सत्तिलो चुक्केवं|चुक्कण|चुक्कणहं|चुक्कणहिं णिज्झइ ६.मित्त|मित्तु दुक्खि|दुक्खिए|दुक्खिवि|दुक्खावि|दुक्खेवि|दुक्खेविणु|दुक्खेप्पि|दुक्खेप्पिणु जुज्झइ ७.पिआपरो|पिआपत| पिअपरा|पिआपरु सोहेवं|सोहण|सोहणहं|सोहणहिं|सोहेवि|सोहेविणु|सोहेप्पि|सोहेप्पिणु डोहइ

(ग) १. पुत्त|पुत्ता|पुत्तु|पुत्तो कत्तीहि|कत्तीहिए|कत्तीहिवि|कत्तीहावि|कत्तीहेवि|कत्तीहेविणु|कत्तीहेप्पि|कत्तीहेप्पिणु त्तज्जीहिइ|त्तज्जेसए २.मित्त|मित्ता|मित्तु| मित्तो हरिसेवं|हरिसण|हरिसणहं|हरिसणहिं|हरिसेप्पि|हरिसेप्पिणु|हरिसेवि|हरिसेविणु जीवीहिइ|जीवेसए ३.करहा|करहो|करहु|करे चक्के| चक्केवं|चक्कण|चक्कणहं|चक्कणहिं|चक्केप्पि|चक्केप्पिणु|चक्केवि|चक्केविणु णच्चिहिए|णच्चेसए ५.चरा|चरा|चरु|चरो पीडि|पीडिए| पीडिवि|पडावि|पडेवि|पडेविणु|पडेप्पि|पडेप्पिणु नस्सेहाइ|नस्सिहिए ६.बप्प|बप्पा|बप्पु|बप्पो तुट्टि|तुट्टिए|तुट्टिवि|तुट्टावि|तुट्टेवि|तुट्टेविणु|तुट्टेप्पि| तुट्टेप्पिणु गच्छिहिइ|गच्छेसए ६.खेअण|खेअणा|खेअणु|खेअणो मरेवं|मरण|मरणहं|मरणहिं|मरेप्पि|मरेप्पिणु|मरेवि|मरेविणु कुप्पिहिइ|कुप्पेसए ७.सत्तिल| सत्तिला|सत्तिलु|सत्तिलो पसरि|पसरिए|पसरावि|पसारिवि|पसारेवि|पसरेविणु|पसरेप्पि|पसरेप्पिणु सुक्किहिइ|सुक्केहिए

पाठ २७ क. १. सोअरा|सुहा|सुहु वड्ढइ २.खीर|खीरा|खीरु चुएइ ३.णयरजणाइं|णयरजणाइं|णयरजण|णयरजणा हरिसन्ति|हरिसादिं ५.पोट्टला|पोट्टला| पोट्टलु लुट्टए ६.जोव्वण|जोव्वणा|जोव्वणु विज्झसेए ६.रज्जा|रज्जा|रज्जु चुक्कइ ७.णहा|णहु|अहुं शुंजेइ ८.सील|सीला|सीलु पुरए ९.तिण|तिणा|तिणु जलेए १०.रिणा|रिणा|रिणु वड्ढइ

ख. १. वेरग्गा|वेरग्गा|वेरग्गु वड्ढइ २.दुक्ख|दुहा|दुक्खु|दुहो दोइ ३.रज्ज|रज्जु|रज्जा चेट्ठइ|उज्जोअ ५.णाण|णाणा|णाणु खिज्झइ ६.सासण|सासणा| सासणु डरेइ ८.सील|सीलो|सीलु सोहइ ९.वण|वणा|वणु दोइ ८.पोट्टल|पोट्टला|पोट्टलु लुट्टइ ९.सच्चो|सच्चा|सच्चु विज्झसेइ १०.जत्त|जत्ता| रहु|चुक्कइ

ग. १. णयरजणा|णयरजणा|णयरजणाइं|णयरजणाइं सयिहिन्ति|सत्थेसादिं २.रूवा|रूपा|रूपु विज्झसेन्तो|विज्झयिहिदिं ३.सावण|सासणा|सासणु चेट्ठइ ४. बीडा|बीडा|बीडाइं|बीडाणं उज्जोसादिं|उज्जिहिइ ५.चक्क|चक्कडा|चक्कडु जलेसए|जत्तिहिइ ६.रज्जा|रज्जा|रज्जु डरेसइ|इच्छीहिए ७. कम्म|कम्मा|कम्मु नस्सेसइ|खयिहिए ८.दुह|दुहा|दुक्खु|दुक्खो पसरेसइ|पसरिहिए ९.विमाण|विमाणा|विमाणं|विमाणाइं इट्ठेसन्ति|इट्ठिहिदिं १०. सच्च|सच्चा|सच्चु सोहेसइ|सोहिहिइ

पाठ ४० क. १. सीयासीया सोह|सोहेइ|सोहए २.ससासला भिज्जए ३.माया|माय हरिसेइ ५.वाय|वाया चक्कइ ५.आण|आणा पुरए ६.कमला|कमला घोट्ट|करुणा|करुणा चुट्टइ ८.गंग|गंगा पसरइ ९.जरा|जरा वड्ढेइ १०.संझा|संझा लोर|हुइ|हवे ११.कन्ज|कन्ना|कन्नु|कन्नाउ|कन्ना णो|कन्नाहो चोज्जादिं|चोज्जन्ति १२.झुंपडा|झुंपडा|झुंपडु| झुंपडाउ|झुंपडाओ|झुंपडाओ जलादिं|जलिरे १३.कत्तीय|कत्तीया|कत्तीयु|कत्तीयाउ|कत्तीयाओ|कत्तीयाओ तुट्टिं|तुट्टए १५.धूआ|धूआ|धूअय|धूयाउ| तणयाउ|तणयाउ खासादिं|खासन्ति १६.आहित्तास|आहित्तासा|आहित्तासु|आहित्तासाउ|आहित्तासाओ|आहित्तासाओ वड्ढादिं|वड्ढन्ते १६.परिव्वअ|परिव्वआ| परिव्वअु|परिव्वआउ|परिव्वआओ परिव्वआओ होन्ति|होदिं|हुन्ते|हुइरे|हवे|हत्थादिं १७.संझा|संझ सोहइ १८.वाय|वाया|वायउ|वायाउ|वायउो|वायाओ हिज्जादिं|हिज्जिरे १९.सरिआ|सरिआ|सरिअु|सरिआउ|सरिआओ|सरिआओ भुक्कादिं|भुक्कन्ते २०.महित्त|महित्ता|महित्तु|महित्तउ|महित्ताउ|महित्ताओ|महित्ताओ उज्जमादि|चेट्ठन्ति|उज्जमिरे|चेट्ठन्ते|

ख. १. सद्दु|सद्दा|वड्ढउ २.भुक्ख|भुक्खा|उवसमेउ ३.मार|मारइ|मारु|मारु|मुयां|तणय|उच्चसद्दु|हरिसेउ ४.आहित्य|आहित्थ|आहित्थाउ|आहित्थाओ|आहित्थाउं|आहित्थाओ|तवन्तु ६.पण्ण|पण्णा|सिज्झेउ ७.आहित्यास|आहित्यासा|आहित्यासउ|आहित्यासाउं|आहित्यासाओ|आहित्यासाओ|वाहेतु ८.वाया|वाय|वायउ|वायाउ|वायाओ|वायाओ|कुरन्तु ९.महित्थ|महित्था|महित्थउ|महित्थाउ|महित्थाओ|महित्थाओ|उच्चहेन्तु १०.थुंपड|थुंपडा|थुंपडाउ|थुंपडाओ|थुंपडाओ|दारन्तु|

ग. १. सिक्ख|सिक्खा|पसरेसइ|पसरिहिए २.आहित्यास|आहित्यासा|आहित्यासाउ|आहित्यासाओ|आहित्यासाओ|उवसमेसन्ति|उवसमीहि सक्ति|सक्तिआ|सक्तिआउ|सक्तिआउ|आयिआओ|सक्तिआओ|सुक्केसहिं|सुक्कि हिन्तो ५.तिमितिसा|तण्णोसइ|तण्णिहिए ६.कमत्थ|कमत्था|दारेसए| ३. धारिहिए ६.पवित्थ|पवित्था|पवित्थउ|पवित्थाउ|पवित्थाओ|पवित्थाओ|होहिहिं|होसहिं|होसन्ति|होसन्ते|होसइरे|होहिन्ति|होहिन्ते|होहिरे ७. करुणा|करुणा|पसरेसइ|पसरिहिए ८.गुह|गुह|गुहउ|गुहाउ|गुहाओ|गुहाओ|नस्सेयन्ति|नाहिहिहिं ९.कन्न|कन्ना|कन्नउ|कन्नाउ|कन्नाओ|कन्नाओ|चिरावेसन्ति|चिरावेहिहिं १०.वस|वसा|वसउ|वसाउ|वसाओ|वसाओ|ठासन्ति|ठासन्ते|ठासइरे|ठासहिं|ठाहिन्ति|ठाहिन्ते|ठाहिरे

पाठ पृ.(क) १. पुत्त|पुत्ता|पुत्तु|पुत्तो|तज्जन्त|तज्जन्ता|तज्जन्तु|तज्जन्तो|तज्जमाणु|तज्जमाणा|चिट्ठइ|अच्छेइ|बइसए|चिट्ठउ|वविसेइ २. कुक्कुर|कुक्कुरो|कुक्कुरा|कुक्कुरु|कुक्कन्त|कुक्कन्ता|कुक्कमाणु|कुक्कन्तु|कुक्कमाणो|पलाइ ३.पिडाग्रह|पिडागहा|पिडागहु|पिडागहो|पुक्कन्त| पुक्कमाणा|दुक्कन्तु|दुक्कमाणो|सक्कइ|सक्केइ|समए|सक्किउ|सक्किआ|सक्किउ|सक्किओ ४.मित्त|मित्ता|मित्तु|मित्तो|हरिसेइ|हरिसिआ| हरिसिउ|हरिसिओ ५.वायस|वायसा|वायसु|वायसो|विहन्त|विहमाणा|डरन्तु|डरमाणो|रुवइ ६.हुअवहु|हुअवहु|जलन्त|जलन्ता|जलमाणु|जलमाणा| जलमाणो|नस्सइ|खणेइ ७.खग्ग|खग्गा|कंपन्त|कंपमाणा|मच्छन्ति|चिट्ठहिं|डयन्ते|उवविसेइ ८.रायउ|रायरा|पसरन्त|पसरन्ता|सुक्कहिं| पोत्त|पोत्ता|जुज्झन्त|जुज्झमाणा|कंपिया|कंपिया १०.करह|करहो|पलायमाण|पलायन्ता|पलायहिं ११.पुत्त|पुत्तु|पुत्तो|पुत्ता|गडयडन्त|गडयडमाणा| गडयडन्ता|गडयडमाणो|चिट्ठइ|बइसिया|उवविसिओ|उच्चिट्ठेयु १२.णर|णारा|णरु|णरो|हसन्त|हसन्तु|हसमाण|हसमाणो|जीवउ जणेर|जणेरो|वप्प|वप्पो|उत्थरसन्त|उत्थरसमाण|हरिसन्तु|हरिसमाणो|उज्जमेउ|चोट्ठउ १४.रुक्खस|रुक्खसा|रुक्खसु|रुक्खसो तडफडन्त|तडफडमाणो|तडफडन्तु|तडफडमाण|मरिअ|मरिया|मरियु|मरियो १६.सल्लिल्ला|सल्लिल्ला|सल्लिलु|सल्लिलो|चुअन्त|चुअमाण| चुअन्तु|चुअमाणो|सुक्किया|सुक्किओ|सुक्किआ|सुक्किउ

(ख) १. नक्कउ|नक्कुडा|नक्कुडु|जलन्त|जलमाणा|जलमाणु|नस्सइ २.णायरजण|णायरजणा|णायरजणु|लोअन्त|लोअन्तु|लोअमाणा जीविय|जीवियु|जीविअ ३.वेरग्ग|वेरग्गा|वेरग्गु|वड्ढन्त|वड्ढन्ता|वड्ढमाणु|सोहइ ४.विमाण|विमाणा|विमाणु|उडुन्त|उडुन्तु| उडुमाण|पडिआ|पडिउ|पडियु ५.रज्ज|रज्जा|रज्जु|जुज्झन्त|जुज्झन्ता|जुज्झमाणु|नस्सहिं ६.सील|सीला|सीलु|वड्ढन्त|वड्ढन्ता|वड्ढमाणु|सोहइ ७.सासण|सासणा|सासणु|चुक्कमाण|चुक्कन्ता|चुक्कमाणु|किहइ|प्रेइ ८.मज्ज|मज्जा|मज्जु|सिज्जन्त|सिज्जन्ता| सिज्झमाणु|सोहसइ|सोहिहिए ९.कम्म|कम्मा|कम्मइं|कम्माइं|गच्छन्त|गच्छन्ता|गच्छन्तइं|छुट्टहिं|छुट्टन्ते १०.पोट्टल|पोट्टला| पोट्टलइं|पोट्टलाइं|तुट्टन्त|तुट्टन्ता|तुट्टमाणइं|तुट्टन्तइं|ठाअ|ठाया|ठाअइं|ठायाइं

(ग) १. सूअ|सूआ|सुय|सुया|तणया|तणया|हरिसन्त|हरिसमाण|उट्ठिअ|उट्ठिया २.सद्दु|सद्दा|वड्ढन्त|वड्ढमाण|सोहइ ३.आसा|आसा उस्ससन्त|उस्ससमाण|सयंइ ५.माय|माया|उच्चहमाणा|उच्चहन्त|उच्चहइ|चिट्ठइ|बइसए|उवविसइ ६.णग्गय|णग्गया पसरन्त|पसरमाण|सुक्केइ|सुक्किया|सुक्किआ ६.थुंपड|थुंपडा|थुंपडउ|थुंपडाउ|थुंपडाओ|थुंपडाओ|जलन्त|जलमाणा|जलन्तु जलमाणु|जलन्ताओ|जलमाणाओ|नस्सिय|नस्सिया|नस्सियउ|नस्सियाउ|नस्सियाओ|नस्सियाओ ७.पडु|पडुआ|वड्ढन्त| वड्ढमाण|सोहइ ८.महित्थ|महित्था|महित्थउ|महित्थाउ|महित्थाओ|महित्थाओ|खिज्जन्त|खिज्जन्ता|खिज्जमाणु|खिज्जमाणा| खिज्जन्ताओ|खिज्जमाणाओ|चुमहिं|चुमंति ९.वाय|वाया|कुरन्त|कुरमाण|सिक्खिय|सिक्खिया १०.तिण|तिणा|तिणु|जलन्त|जलन्ता| जलन्तु|नस्सिय|नस्सिउ|नस्सिया

पाठ पृ. १. सत्तिएं|सत्तिएण|सत्तिएणं|णिज्जरिआ|णिज्जरिउ|णिज्जरिआ २.मेहहिं|मेहाहिं|मेहेहिं|गज्जिय|गज्जिया|गज्जिउ ३.मिलें|मिलेंतें हरिसिय|हरिसिउ ४.रिसिया ५.दुज्जसें|दुज्जसेण|दुज्जसेणं|पसरिउ|पसरिआ|पसरिय ६.सायहिं|सायाहिं|सायहिं सुक्किय|सुक्किउ|सुक्किआ ६.हुअवहें|हुअवहेण|हुअवहेणं|जलिय|जलिउ|जलिया ७.कयहें|कयहेण|कयहेणं|पलाइउ|पलाइआ|पलाउ ८.अंसूहिं|कंपिय|कंपिउ|कंपिआ ९.तुम्हहिं|चुमिउ|चुमिआ|चुमिय १०.तें|तेण|तेणं|खेलिय|खेलिआ|खेलिउ ११.विमाणे|विमाणेण|विमाणेणं

उड्डिय।उड्डिया।उड्डिउ 12. पोट्टलों।पोट्टलेण।पोट्टलेणं लुढिय।लुढिया।लुढिउ 13. कुक्कुडेहिं।कुक्कुडेहिं।कुक्कुडाहिं जलिय।जलिया।जलिउ 14. बीआहिं।बीआहिं।बीएहिं उगिय।उगिउ।उगिया 15. णरें।णरेण।णरेणं जम्मिय।जम्मिया।जम्मिउ 16. कुक्कुरहिं।कुक्कुराहिं।कुक्कुरेहिं कुक्किय।कुक्किया।कुक्किउ

17. कूवहिं।कूवेहिं।कूवाहिं सुक्किय।सुक्किया।सुक्किउ 18. खवसें।खवसेण।खवसेणं मरिय।मरिया।मरिउ 19. रयणहिं।रयणेहिं।रयणाहिं सोहिय।

सोहिया।सोहिउ 20. सीहहिं।सीहेहिं।सीहाहिं गज्जिय।गज्जिया।गज्जिउ 21. परिक्खवर।परिक्खवर होउ।होउ।होया 22. कण्णहिं।कण्णाहिं

लुक्किय।लुक्किउ।लुक्किया 23. महिलहिं।महिलाहिं उवसमिय।उवसमिया।उवसमिउ 24. सूअर।सुयार।तणयार खासिय।खासिउ।खासिया

25. पट्टुरो।पट्टुार वट्टिय।वट्टिउ।वट्टिया 26. जरर।जरार वड्ढिय।वड्ढिउ।वड्ढिया 27. सुहें।सुहेण।सोक्खेणं गलिय।गलिउ।गलिया 28.

धन्नहिं।धन्नेहिं।धन्नाहिं उप्पज्जिय।उप्पज्जिया।उप्पज्जिउ 29. भुक्खर।भुक्खर गलिय।गलिउ।गलिया 30. रज्जहिं।रज्जाहिं।रज्जेहिं

जुज्झिय।जुज्झिया।जुज्झिउ 31. तहिं।ताहिं।तेहिं थक्किय।थक्किया।थक्किउ 32. पइं।पइं डरिय।डरिया।डरिउ 33. ताहिं।तहिं खेलिय।खेलिउ।

खेलिया 34. तुम्हेहिं ण्हाय।ण्हाया।ण्हाउ 35. तए।ताए हरिसिय।हरिसिया।हरिसिउ

पाठ 47 1. विमाणहिं।विमाणाहिं।विमाणेहिं उड्डिज्जइ।उड्डिअइ 2. सलिलें।सलिलेण।सलिलेणं णिज्झरिज्जइ।णिज्झरियइ 3. मित्तें।मित्तेण।मित्तेणं हरिसियइ

हरिसिज्जइ 4. सायरहिं।सायराहिं।सायरेहिं सुक्किज्जइ।सुक्कियइ 5. हुअवहें।हुअवहेण।हुअवहेणं जलिज्जइ।जलियइ 6. अम्हेहिं कंपिज्जइ।कंपियइ

7. तें।तेण।तेणं खेलिज्जइ।रमियइ 8. पोट्टलें।पोट्टलेणं।पोट्टलेण लुढिज्जइ।लुढियइ 9. सीहहिं।सीहाहिं।सीहेहिं गज्जियइ।गज्जिज्जइ 10.

कण्णहिं।कण्णाहिं लुक्कियइ 11. तहिं।ताहिं।तेहिं खेलिज्जइ।खेलियइ 12. णरहिं।णरेहिं।णराहिं जम्मियइ 13. महिलहिं।महिलाहिं उवसमिज्जइ

14. रज्जहिं।रज्जेहिं।रज्जाहिं जुज्झियइ 15. सूयहिं।सूयाहिं।सुयाहिं।सुयाहिं।तणयहिं।तणयाहिं थक्किज्जइ 16. मायर।मायार हरिसियइ 17. सिक्खवर।

सिक्खवार वसरिज्जइ 18. सद्दूर।सद्दूार वड्ढियइ 19. परिक्खवर।परिक्खवार हविज्जइ 20. तहिं।ताहिं लज्जिज्जइ 21. विमाणें।विमाणेण।विमाणेणं

उड्डिज्जइ।उड्डिअइ।उड्डिहिइ 22. रज्जहिं।रज्जाहिं।रज्जेहिं जुज्झिहिइ।जुज्झेसइ 23. तें।तेण।तेणं उच्छलिहिइ।उच्छलेसइ 24. कुक्कुरहिं।

कुक्कुराहिं।कुक्कुरेहिं कुक्केसइ 25. बीअहिं।बीएहिं।बीआहिं उगिहिइ।उगेसइ।

पाठ 49 1. रज्जें।रज्जेण।रज्जेणं जुज्झिअव्व।जुज्झिअव्वा।जुज्झिअव्वु।जुज्झेअव्व।जुज्झेअव्वा।जुज्झेअव्वु।जुज्झेव्वउं।जुज्झिएव्वउं।जुज्झेवा

2. सद्दूर।सद्दूार वड्ढिअव्व।वड्ढिअव्वा।वड्ढिअव्वु।वड्ढेअव्व।वड्ढेअव्वा।वड्ढेअव्वु।वड्ढिएव्वउं।वड्ढेव्वउं।वड्ढेवा 3. तहिं।तेहिं।ताहिं खेलिअव्व

खेलिअव्वा।खेलेअव्वु।खेलिएव्वउं।खेलिएव्वउं।खेलेव्वउं।खेलेवा 4. मायर।मायार उत्पयसिअव्व।उत्पयसेअव्वा।उत्पयसिअव्वु।उत्पयसिएव्वउं।

उत्पयसेव्वउं।उत्पयसेवा 5. णरहिं।णराहिं।णरेहिं जम्मिअव्वु।जम्मेअव्व।जम्मिअव्वा।जम्मेव्वउं।जम्मिएव्वउं।जम्मेवा 6. तहिं।ताहिं लज्जिअव्वु।लज्जेअव्व

लज्जिअव्वा।लज्जेअव्व।लज्जिएव्वउं।लज्जेव्वउं 7. कुक्कुरें।कुक्कुरेण।कुक्कुरेणं कुक्किअव्व।कुक्केअव्वु।कुक्किअव्वा।कुक्किएव्वउं।कुक्केव्वउं।कुक्केवा

8. महिलहिं।महिलाहिं णच्चेअव्व।णच्चेअव्वा।णच्चेअव्वु।णच्चिएव्वउं।णच्चेव्वउं।णच्चेवा 9. कण्णहिं।कण्णाहिं लुक्किअव्व।लुक्किअव्वा।लुक्किअव्वु।

लुक्किएव्वउं।लुक्केव्वउं।लुक्केवा 10. मित्तहिं।मित्ताहिं।मित्तेहिं हरिसेअव्व।हरिसेअव्वा।हरिसेअव्वु।हरिसिएव्वउं।हरिसेव्वउं।हरिसेवा 11. हुअवहें।हुअवहेण

हुअवहेणं जलिअव्व।जलिअव्वा।जलिअव्वु।जलेव्वउं।जलिएव्वउं।जलेवा 12. पियरें।पियरेण उगेअव्व।उगेअव्वा।उगेअव्वु।उगिएव्वउं।उगेव्वउं।

उगेवा 13. सीहें।सीहेणं गज्जिअव्व।गज्जेअव्वा।गज्जिअव्वु।गज्जेव्वउं।गज्जिएव्वउं।गज्जेवा 14. तें।तेण।तेणं खेलेअव्व।खेलेअव्वा।खेलेअव्वु।खेले

खेलिएव्वउं।खेलेव्वउं 15. मइं कुद्दिअव्व।कुद्देअव्वा।कुद्दिअव्वु।कुद्दिएव्वउं।कुद्देव्वउं।कुद्देवा 16. तुम्हेहिं उच्छलिअव्व।उच्छलिअव्वा।उच्छलेअव्वु।

उच्छलिएव्वउं।उच्छलेव्वउं।उच्छलेवा 17. अम्हेहिं डरिअव्व।डरिअव्वा।डरेअव्वु।डरिएव्वउं।डरेवा।डरेव्वउं 18. खवसें।खवसेणं मरेअव्व।मरेअव्वु।मरेअव्वा

मरिएव्वउं।मरेव्वउं।मरेवा 19. बीअहिं।बीएहिं।बीआहिं उगिअव्व।उगेअव्व।उगिअव्वु।उगिएव्वउं।उगेव्वउं।उगेवा 20. विमाणें।विमाणेणं उड्डिअव्व।

उड्डिअव्वा।उड्डिअव्वु।उड्डिएव्वउं।उड्डेव्वउं।उड्डेवा

पाठ 52 2. 1. जणेर।जणेरा।बप्पु।बप्पो पुत्त।पुत्ता।पुत्तु गरहइ 2. पियामह।पियामहा।पियामहु पोत्त।पोत्ता।पोत्तु कोक्कइ 3. परमेसर।परमेसरा।

परमेसरु।परमेसरो भव।भवु।भवा देखइ 4. दियर।दियरा।दियरु।दियरो वत्थ।वत्था।वत्थु।पड।पडा।पडु धोइ 5. णरिंद।णरिंदा।रायु।रायो

गव्व।गव्वा।गव्वु छंडइ।छोड्डइ 6. मित्त।मित्ता।मित्तु।मित्तो तं पुक्कारइ 7. रहुणन्दणु परमेसर।परमेसरा।परमेसरु अच्चेइ 8. कुक्कुर

कुक्कुरु।कुक्कुरो।कुक्कुरा खवस।खवसा।खवसु रोक्कइ 9. राय।राया।णरिंदु।णरिंदो रयण।रयणा गवेसइ 10. णर।णरा।वय।वया

छंडहिं।छोडन्ते 11. हो बालय।बालया।बालउ वत्थइ 12. तुहुं सीह।सीहा।सीहु देखहि।देखसि 13. हउं तं कुसुमइं।कुसुमेहिं।कुसुमाहिं

14. तं ता।ता कंपेहिं।कंपंति 15. सो पड।पडा।वत्थ।वत्था फाडइ 16. दुक्ख।दुहा।दुक्खु सुह।सुहा।सोक्खु रक्खइ 17. मित्त।मित्ताइं।
सीह।सीहा देखइ 18. माउल।माउला।माउलु।माउलो आगम।आगमा छड्डेइ 19. हणुवन्त।हणुवन्तो।हणुवन्तु।हणुवन्ता तं उक्कारेइ

उड्डिय।उड्डिया।उड्डिउ 12. पोट्टलें।पोट्टलेण।पोट्टलेणं लुढिय।लुढिया।लुढिउ 13. लक्कुडहिं।लक्कुडेहिं।लक्कुडाहिं जालिय।जालिया।जालिउ 14. बीआहिं।
बीआहिं।बीएहिं उगिय।उगिउ।उगिया 15. णरें।णरेण।णरेणं जम्मिय।जम्मिया।जम्मिउ 16. कुक्कुरहिं।कुक्कुराहिं।कुक्कुरेहिं कुक्किय।कुक्किया।कुक्किउ
कूवहिं।कूवेहिं।कूवाहिं सुक्किय।सुक्किया।सुक्किउ 18. खवसें।खवसेण।खवसेणं मरिय।मरिया।मरिउ 19. रयणहिं।रयणेहिं।रयणाहिं सोहिया।
17. सोहिया।सोहिउ 20. सीहहिं।सीहेहिं।सीहाहिं गज्जिय।गज्जिया।गज्जिउ 21. परिक्खर।परिक्खार होउ।होउ।होया 22. कण्णाहिं।कण्णाहिं
लुक्किय।लुक्किउ।लुक्किया 23. महिलहिं।महिलाहिं उवसमिय।उवसमिया।उवसमिउ 24. घुआर।सुयार।तणयार खासिय।खासिउ।खासिय
25. पट्टुर।पट्टुआर वाटिय।वाटिउ।वाटिया 26. जरर।जरार वड्डिय।वड्डिउ।वड्डिया 27. सुहें।सुहेण।सोक्खेणं गलिय।गलिउ।गलिया 28.
धन्नहिं।धन्नेहिं।धन्नाहिं उप्पज्जिय।उप्पज्जिया।उप्पज्जिउ 29. भुक्खर।भुक्खार गलिय।गलिउ।गलिया 30. रज्जुहिं।रज्जाहिं।रज्जेहिं
जुज्झिय।जुज्झिया।जुज्झिउ 31. तहिं।ताहिं।तेहिं थक्किय।थक्किया।थक्किउ 32. तइं।पइं डरिय।डरिया।डरिउ 33. ताहिं।तहिं खेलिय।खेलिउ।
खेलिया 34. तुम्हेहिं ण्हाय।ण्हाया।ण्हाउ 35. तर।तार हरिसिय।हरिसिया।हरिसिउ

पाठ 47

1. विमाणहिं।विमाणाहिं।विमाणेहिं उड्डिज्जइ।उड्डिअइ 2. सलिलें।सलिलेण।सलिलेणं णिज्झरिज्जइ।णिज्झरियइ 3. मित्तें।मित्तेण।मित्तेणं हरिसियइ
हरिसिज्जइ 4. सायरहिं।सायराहिं।सायरेहिं सुक्किज्जइ।सुक्कियइ 5. हुअवहें।हुअवहेण।हुअवहेणं जालिज्जइ।जालियइ 6. अम्हेहिं कंपिज्जइ।कंपियइ
7. तें।तेण।तेणं खेलिज्जइ।रमियइ 8. पोट्टलें।पोट्टलेणं।पोट्टलेण लुढिज्जइ।लुढियइ 9. सीहहिं।सीहाहिं।सीहेहिं गज्जियइ।गज्जिज्जइ 10.
कण्णहिं।कण्णाहिं लुक्कियइ 11. तहिं।ताहिं।तेहिं खेलिज्जइ।खेलियइ 12. णरहिं।णरेहिं।णराहिं जम्मियइ 13. महिलहिं।महिलाहिं उवसमिज्जइ
14. रज्जहिं।रज्जेहिं।रज्जाहिं जुज्झियइ 15. घुयहिं।घुयाहिं।सुयहिं।सुयाहिं।तणयहिं।तणयाहिं खासिज्जइ 16. मायर।मायार हरिसियइ 17. सिक्खर।
सिक्खार वसरिज्जइ 18. सद्दर।सद्दार वड्डियइ 19. परिक्खर।परिक्खार हविज्जइ 20. तहिं।ताहिं लज्जिज्जइ 21. विमाणें।विमाणेण।विमाणेणं
उड्डिज्जइ।उड्डिसइ।उड्डिहिइ 22. रज्जहिं।रज्जाहिं।रज्जेहिं जुज्झिहिइ।जुज्झेसइ 23. तें।तेण।तेणं उच्छलिहिइ।उच्छलेसइ 24. कुक्कुरहिं।
कुक्कुराहिं।कुक्कुरेहिं बुक्केसइ 25. बीअहिं।बीएहिं।बीआहिं उगिहिइ।उगेसइ।

पाठ 49

1. रज्जें।रज्जेण।रज्जेणं जुज्झिअव्व।जुज्झिअव्वा।जुज्झिअव्वु।जुज्झेअव्व।जुज्झेअव्वा।जुज्झेअव्वु।जुज्झेवउं।जुज्झिएव्वउं।जुज्झेवा
2. सद्दर।सद्दार वड्डिअव्व।वड्डिअव्वा।वड्डिअव्वु।वड्डेअव्व।वड्डेअव्वा।वड्डेअव्वु।वड्डिएव्वउं।वड्डेव्वउं।वड्डेवा 3. तहिं।तेहिं।ताहिं खेलिअव्व
खेलिअव्वा।खेलेअव्वु।खेलिएव्वउं।खेलिएव्वउं।खेलेव्वउं।खेलेवा 4. मायर।मायार उवसमिअव्व।उवसमेअव्वा।उवसमिअव्वु।उवसमिएव्वउं।
उवसमेव्वउं।उवसमेवा 5. णरहिं।णराहिं।णरेहिं जम्मिअव्वु।जम्मेअव्व।जम्मिअव्वा।जम्मेव्वउं।जम्मिएव्वउं।जम्मेवा 6. तहिं।ताहिं लज्जिअव्वु।लज्जेअ
लज्जिअव्वा।लज्जेअव्व।लज्जिएव्वउं।लज्जेव्वउं 7. कुक्कुरें।कुक्कुरेण।कुक्कुरेणं बुक्किअव्व।बुक्केअव्वु।बुक्किअव्वा।बुक्किएव्वउं।बुक्केव्वउं।बुक्केवा
8. महिलहिं।महिलाहिं णच्चेअव्व।णच्चेअव्वा।णच्चेअव्वु।णच्चिएव्वउं।णच्चेव्वउं।णच्चेवा 9. कण्णहिं।कण्णाहिं लुक्किअव्व।लुक्किअव्वा।लुक्किअव्वु।
लुक्किएव्वउं।लुक्केव्वउं।लुक्केवा 10. मित्तहिं।मित्ताहिं।मित्तेहिं हरिसेअव्व।हरिसेअव्वा।हरिसेअव्वु।हरिसिएव्वउं।हरिसेव्वउं।हरिसेवा 11. हुअवहें।हुअवहेण
हुअवहेणं जलिअव्व।जलिअव्वा।जलिअव्वु।जलेव्वउं।जलिएव्वउं।जलेवा 12. दिवायरें।दिवायरेण उगेअव्व।उगेअव्वा।उगेअव्वु।उगिएव्वउं।उगेव्वउं।
उगेवा 13. सीहें।सीहेणं गज्जिअव्व।गज्जिअव्वा।गज्जिअव्वु।गज्जेव्वउं।गज्जिएव्वउं।गज्जेवा 14. तें।तेण।तेणं खेलेअव्व।खेलेअव्वा।खेलेअव्वु।खेले
खेलिएव्वउं।खेलेव्वउं 15. मइं कुद्दिअव्व।कुद्देअव्वा।कुद्दिअव्वु।कुद्दिएव्वउं।कुद्देव्वउं।कुद्देवा 16. तुम्हेहिं उच्छलिअव्व।उच्छलिअव्वा।उच्छलेअव्वु।
उच्छलिएव्वउं।उच्छलेव्वउं।उच्छलेवा 17. अम्हेहिं डरिअव्व।डरिअव्वा।डरेअव्वु।डरिएव्वउं।डरेवा।डरेव्वउं 18. खवसें।खवसेणं मरेअव्व।मरेअव्वु।मरेअव्वा
मरिएव्वउं।मरेव्वउं।मरेवा 19. बीअहिं।बीएहिं।बीआहिं उगिअव्व।उगेअव्व।उगिअव्वु।उगिएव्वउं।उगेव्वउं।उगेवा 20. विमाणें।विमाणेणं उड्डिअव्व।
उड्डिअव्वा।उड्डिअव्वु।उड्डिएव्वउं।उड्डेव्वउं।उड्डेवा

पाठ 54

2. 1. जणेर।जणेरा।बप्पु।बप्पो पुत्त।पुत्ता।पुत्तु गरहइ 2. पिआमह।पिआमहा।पिआमहु पोत्त।पोत्ता।पोत्तु कोकेइ 3. परमेसर।परमेसरा।
परमेसरु।परमेसरो भव।भवु।भवा देक्खए 4. दिअर।दिअरा।दिअरु।दिअरो वत्थ।वत्था।वत्थु।पड।पडा।पडु थोइ 5. नरिंद।नरिंदा।रायु।रायो
7. गव।गवा।गवु छंडइ।छोड्डउ 6. मित्त।मित्ता।मित्तु।मित्तो तं पुक्करउ 7. रहुणन्दणु परमेसर।परमेसरा।परमेसरु अच्चेउ 8. कुक्कुर
कुक्कुरु।कुक्कुरो।कुक्कुरा रक्खस।रक्खसा।रक्खसु रोक्कइ 9. राय।राया।नरिंदु।नरिंदो रयणा।रयण गवेसइ 10. णरा।णरा वयाव्वा
छंड्डहिं।छोड्डतो 11. हो वायस।वायसा।वायसु दक्खर 12. दहु सीह।सीहा।सीहु देक्खहि।देक्खसि 13. हउं तं कुक्कउं।कुक्कामि।कुक्कामि
तं ता।ता कलंकहिं।कलंकिरे 15. सो पड।पडा।वत्थ।वत्था फाडइ 16. दुक्ख।दुहा।दुक्खु सुह।सुहा।सोक्खु रक्खा 17. मित्तालत्तो।मित्तु
14. भीह।भीहा देक्खए 18. माउल।माउला।माउलु।माउलो आगम।आगमा।आगमु 19. हणुवन्त।हणुवन्तो।हणुवन्तु।हणुवन्ता तं उपकरेइ

Page No.
Date :

२०. अम्हेहिं/विच्चए/विणाएण/विणाएण/वक्काओ/वक्काइं/वक्कानु/वक्कम

(अ) १. से/तेन्तो/केता/केतु/खणेवइ/खणीहिंइ २. तुहं/भोयणं/भोयणं/भोयणु/जिमेहिंहिं/जिमेसासि ३. सो/तक्कुडो/तक्कुडा/तक्कुडु/दलक्कइ
४. हुउ/तच्चा/तच्चा/तच्चु/चात्तेसउं/चात्तिहिमि ५. सो/भोयण/भोयणा/भोयणु/रायेउ ६. तुहं/खीरं/खीरा/खीरु/चक्खवा/चक्खवे/चक्खवु/चक्खे
चक्खवहिं/चक्खेहिं/चक्खवसु/चक्खवेस्तु, ते/चोद्दसा/चोद्दला/चोद्दत्तु/कट्टेमहिं/कट्टिहिंइरे ८. अम्हे/अम्हं/धन्ना/धन्ना/धन्नु/कुट्टेसहं/
कुट्टिहिमो ९. ते/वण/वणा/वणुकट्टे/कट्टिहिं १०. सो/बीअ/बीआ/बीअ/पीसइ

(आ) १. रहुणन्दण-णाणुणो/सीया/सीया/कोकेइ २. हउं/कन्ना/कन्ना/पुक्करउं/पुक्करेमि ३. महित्ता/महित्ता/गड्डा/गड्डा/खणए
४. ससा/ससा/धूआ/धूआ/सुयउ/सुयउ/तणयओ/तणयाओ/देखइ ५. कन्ना/कन्ना/कत्तसि/कत्तसिया/कत्तसिया/उग्घाडेइ ६. जाउआ/
जाऊ/गड्डा/खणेइ ७. अम्हे/अम्हइं/गंगा/गंगा/नु/अच्चहं/अच्चम्म ८. भुक्खा/भुक्खा/तिसा/तिसा/रोवइए/बुम्मि/तण्हा/तण्हा
णिद्दा/णिद्दा/करइ १०. सो/मइरा/मइरा/घोडए/घेंटए

पाठ ६ क. १. सामी/सामी/सामिएं/सामीएं/सामिणं/सामीणं/सामिण/सामीण/भोयण/भोयणा/भोयणु/खादिज्जउ/खादियइ
२. कई/कई/कइएं/कईएं/कइणं/कईणं/कइण/कईण/वया/वया/वयु/वयो/पालिज्जउ/पालियइ ३. हत्थी/हत्थी/हत्थिएं/
हत्थीएं/हत्थिणं/हत्थीणं/हत्थिण/हत्थीण/सालित्त/सालित्त-धुत्तो/पिविज्जउ/पिवियइ ४. ~~सालिअ~~-डारिं/डारी/डारिएं/डारीएं/
डारिणं/डारीणं/डारिण/डारीण ५. तुहं/खलिज्जासि/खलियहिंइ ६. पहु/पहू/पहुएं/पहूएं/पहुणं/पहूणं/पहुण/पहूण/अम्हं/
देखिज्जहु/पेक्खिअम्हो ७. पुणि/मुणी/मुणिएं/मुणीएं/मुणिण/मुणीण/मुणिणं/मुणीणं/तुम्हं/पेसिज्जह/पेसियह ८. आयए/आयए
सो/थुणिज्जउ/थुणियइ ९. गुरुं/गुरुं/गुरुणं/गुरूणं/गुरुण/गुरूण/गुरुएं/गुरूएं/हउं/सुमरिज्जउं/सुमरियउं ७. मित्ति/मित्तिण/
मित्तिणं/अम्हं/वट्टिज्जमो/वट्टियइ १०. तं/तेणं/तेणं/वणा/वणा/वणु/मग्गिज्जउ/मग्गियइ

(ख) १. भाइ/भाई/भाइण/भाईण/भाइणं/भाईणं/भाइएं/भाईएं/हउं/पुक्करिज्जउं/पुक्करियामि २. तं/तेणं/तेण/तक्कुडा/तक्कुडा/
तक्कुडु/रेंगिज्जउ/रेंगियइ ३. कइं/कई/कइएं/कईएं/कइण/कईण/कइणं/कईणं/गान/गाणा/गाणु/गाइज्जउ/गाइयइ
४. मइं/वत्ता/वत्ता/पत्तु/विहिज्जउ/विहियइ ५. बप्पो/जणेरा/पिऊ/पिउ/पिउरं/पिउरं/पिऊणं/पिऊणं/पिउण/पिऊण/उम्हइं/पेसिज्
पेसियहुं ६. सासए/सासाए/तुहं/लाइज्जहिं/लाइहिंथ ७. साहु/साहू/तुहं/तुम्हं/ठेम्ह/खेडा/खेडे ८. मइं/तं/देखिज्जहिं/देखिअंत
पडेतइं/या/थुणिज्जउ/थुणियइ १०. तइं/पइं/हउं/वंचिज्जउं/वंचियमि

(ग) १. सत्तुहिं/अरीहिं/रिउहिं/हउं/मारिज्जउं/हणियउं २. अम्हेहिं/दुहं/दुक्खा/दुहु/भुत्तिज्जइ ३. महित्तहिं/महित्ताहिं/परमेसरं/परमेसरा
परमेसरु/परमेसरो/थुणिज्जइ ५. जामाउं/जमाऊ/जामाऊएं/जामाऊएं/जमाऊण/जामाउण/जामाऊणं/जामाउणं/भोयण-ख
खादिज्जउ/खादियइ/खादियए ५. कइहिं/कईहिं/गाण/गाणा/गाणु/गाइज्जउ/गाइयउ ६. जोगिं/जोगी/जोगिएं/जोगीएं/जोगिण/
जोगीण/जोगिणं/जोगीणं/जमाउ/जमाऊ/जमाओ/जमाउ/सुमिज्जइ/सुमियइ ७. जणेरं/बप्पेणं/पिउं/पिऊ/पिउणा/पिऊणं/पिउएं/
पिऊएं/पिउणं/पिऊण तुहं/कोकिहिहि/कोकेसहि ८. तवस्सिं/तवसी/तवस्सिएं/तवसीएं/तवस्सिण/तवसीण/तवस्सिणं/तवसीणं/
तवस्सीणं/अम्हे/अम्हइं/सुमरेसहहुं/सुमरिहिंइ ९. सरिअए/सरिआए/ते/धारेसन्ति/धारिहिंहिं/वहेसन्तो/वहिहिइ १०. भंती
भंति/तं/नामेहिंइ/नमेसइ

पाठ ७ क. १. मइं/गंधा/गंधा/गंधु/गंधो/पढिआ/पढिआ/पढिओ/पढिउ २. तें/तेणं/तेण/भित्त/भित्ता/भित्तु/कोकिआ/कोकिआ/कोकिआ
३. पिआमहें/पिआमहेण/पिआमहेणं/पुत्त/पुत्ता/पुत्तु/पुत्तो/तोडिअ/तोडिआ/तोडिउ/तोडिओ ५. नरईं/नरयें/नरवइं/नरवई/
नरवईं/नरवईएं/नरवइण/नरवईण/नरवइणं/नरवईणं/गत्त/गत्ता/गत्तु/गत्तो/धारिज्जइ/धारिअ/धारिआ/धारिओ/धारीअ
६. अम्हेहिं/मोत्तिआ/मोत्तिओ/उयगु/पिविअ/पिविआ/पिविउ/पिविओ ८. तहिं/तहिं/तेहिं/कूव/कूवा/खणिअ/खणिआ ९. रहुणन्दणे
रक्खस/रक्खसा/मारिआ/हणिया ४. लायएं/रिसिं/रिसिणं/पड/पडा/कत्थ/कत्थइं/कत्था/कत्थाइं/फाडिअ/फाडिआ/फाडिअइं/
फाडिआइं ७. सत्तुं/सत्तूं/अरिएं/अरिएं/अरीएं/रिऊणं/रिऊणं/रिउणं/मेणावइ/मेणावई/भारिअ/भारिआ/हणियो/हणिए १०.
गुरु/गुरुं/गुरुणं/गुरूणं/गुरुएं/गुरूएं/गुरुण/गुरूण/मुणि/मुणी/जइ/जई/रिसी/रिसी/साहू/साहू/थुणिउ/थुणिया/
थुणियो/थुणिए।

Page No.
Date :

अ. १. अयरजणे | जयरजणेण | णयरजणेणं | भोयणं | भोयणा | भोयणु | खाइअ | खाइआ | खाइउ | आसिअ | आसिआ | आसिउ | खादिअ | खादिआ | खादिउ | २. भाइहिं | भाईहिं | खीर | खीरं | खीरु | पेहिअ | पेहिआ | पेहिउ | ३. पाणीहिं | पाणीहिं | कम्म | कम्मा | कम्मइं | कम्माइं | ढंचिय | ढंचिया | ढंचियु | वंदिअ | वंदिआ | ४. करं | करिं | करुं | करिअं | करिआं | करिउं | करिइं | करिआं | गाण | गाणा | गाणइं | गाणाइं | गाइय | गाइया | गाइयु | गाइयाइं | ५. मइं | मिआणं | मिआणा | मिआणइं | मिआणाइं | देखिय | देखिया | पेच्छियइं | पेच्छियाइं | ६. तें | तेण | तेणं | वेरग्ग | वेरग्गा | वेरग्गु | इन्द्रिय | इन्द्रिया | इन्द्रियु | ७. मइं | चक्कड | चक्कडा | चक्कडइं | चक्कडाइं | ढोलिया | ढोलिआ | ढोलियइं | ढोलियाइं | ८. तुम्हेहिं | वसण | वसणइं | वसणा | वसणाइं | वण्णिअ | वण्णिआ | वण्णिउ | वण्णिअइं | वण्णिउं | अयरजणे | पत्त | पत्ता | पत्तइं | पत्ताइं | विहिअ | विहिआ | विहिउ | विहिअइं | विहिउं | सामिं | सामी | सामिएं | सामिणं | सामिणं | सामीएं | सामीणं | सामीणं | सुत्त | सुत्ता | सुत्तु | करिज्ज | करिज्जा | करिज्ज

ब. १. तें | तेण | तेणं | अक्ख | अक्खा | अक्खइ | पालिअ | पालिआ | २. रुहुणन्दणें | रुहुणन्दणेण | रुहुणन्दणु | रुहुणन्दणे | भद्दा | भद्द | सुणिअ | सुणिआ | ३. जइं | जईं | जण | जणि | जइएं | जइएं | जउणं | जइणं | सिक्ख | सिक्खा | धारिअ | धारिआ | ४. थुयए | थुयाए | थूअए | थूआए | तणयए | तणयाए | कमलं | कमला | इन्द्रिअ | इन्द्रिया | ५. तें | तेण | तेणं | करुण | करुणा | करुणु | भणिअ | भणिआ | ६. सामिं | सामी | सामिएं | सामीएं | सामिण | सामीणं | सामीणं | सामीणं | पइट्ठ | पइट्ठा | सुणिअ | सुणिआ | ७. जोमिं | जोमी | जोगिएं | जोगीएं | जोगिण | जोगीणं | जोगिणं | जोगीणं | हट्ठ | हट्ठा | करिअ | करिआ | ८. जामइं | जामाइं | जामाउं | एं | जामाउएं | जामाउएं | जामाउण | जामाउणं | जामाउणं | जामाउणा | डुंपड | डुंपडा | देखिअ | देखिआ | पेच्छियइं | ९. दिट्ठिहिं | दिट्ठीहिं | पण्ण | पण्णा | भुणिअ | भुणिआ | १०. अयरजणहिं | करुण | करुणा | करिअ | करिआ

पा.ब.प. क. १. भाइ | भाई | भाइएं | भाईएं | भाइण | भाईण | भाइणं | भाईणं | सक्क | सक्का | रुक्ख | रुक्खा | रुक्खु | सिंचिअल्ल | सिंचिआल्ला | सिंचेअल्लो | सिंचिएल्लउं | सिंचेल्लउं | सिंचेवा | २. रुहुवइं | रुहुवईं | रुहुवइणं | रुहुवइए | रुहुवईएं | रुहुवइणं | रुहुवईणं | साहु | साहू | साहुजई | जउ | सुणि | सुणी | रिसि | रिसी | कोकिअल्ल | कोकेअल्ला | कोकिएल्लउं | कोकेल्लउं | कोकेवा | ३. करिहिं | करिहिं | गाण | गाणा | गाणइं | गाणाइं | गाइएल्ल | गाएअल्ला | गाइएल्लाइं | गाएल्लाइं | गाएवा | गाएल्लउं | ४. हत्थि | हत्थिएं | करी | करीएं | करेणु | करेणूएं | करेणुं | करेणूणं | करेणुण | सीहु | सीहो | केसरी | केसरि | मारिअल्ल | मारेअल्ला | मारिएल्लउं | मारेल्लउं | मारेवा | ५. रिसिं | रिसी | रिसिएं | रिसीएं | मुणीण | जइण | साहुणं | जईणं | सखी | सखी | दिवायरु | दिवायरो | वंदिअल्ल | वंदेअल्लु | वंदिअल्लो | वंदिएल्लउं | वंदेल्लउं | वंदेवा

अ. १. मइं | टारिं | पत्ती | खादिअल्ल | असिअल्ला | खाइअल्लु | भुंजेअल्लु | भुंजिएल्लउं | असिल्लउं | खादेवा | २. अम्हेहिं | सत्तित्थ | सत्तित्थु | उदग | उदगा | वारि | वारी | पिविअल्ल | पिवेअल्लु | पिविअल्ला | पिवेअल्लो | पिविएल्लउं | ३. तहिं | तहिं | ताहिं | वत्थु | वत्थू | चम्म | वण्णिअल्ल | वाण्णिअल्ला | वण्णिअल्लु | वण्णिएल्लउं | वण्णेल्लउं | वण्णेवा | ४. तुम्हेहिं | वत्थु | वत्थू | वत्थुइं | वत्थूइं | झाइअल्ल | झाएअल्ला | झाइअल्लाइं | झाएअल्लाइं | झाइएल्लउं | झाएल्लउं | झाएवा | ५. तें | तेण | तेणं | झाउ | झाअ | केच्चिअल्ल | केच्चेअल्ल | केच्चेअल्लु | केच्चिएल्लउं | केच्चेल्लउं | केच्चेवा

ब. १. तुम्हेहिं | रिद्धि | रिद्धी | लग्गिअल्ल | लग्गेअल्ला | लग्गिएल्लउं | लग्गेल्लउं | लग्गेवा | २. तें | तेण | तेणं | तत्ति | तत्ती | माणि | अल्ल | अल्लो | अल्लि | एल्लउं | अल्लेवा | ३. पिहिमिए | पिहिमीए | मणि | मणी | धारिअल्ल | धारेअल्ल | धारिएल्लउं | धारेल्लउं | धारेवा | ४. जुवइए | जुवईए | प्रति | प्रती | करिअल्ल | करेअल्ला | करिएल्लउं | करेल्लउं | करेवा | ५. ज्ञानप्रीए | ज्ञानप्रीए | साडि | साडी | साडिउ | साडीउ | साडिओ | साडीओ | कीणिअल्ल | कीणेअल्ला | कीणिअल्लउ | कीणेअल्लाउ | कीणिअल्लओ | कीणेअल्लओ | ६. तुम्हेंहिं | रज्जु | रज्जू | गुंथिअल्ल | गुंथिअल्ला | गुंथेअल्लु | गुंथिएल्लउं | गुंथेल्लउं | गुंथेवा | ७. तें | तेण | तेणं | वेणु | वेणू | वेणुउ | वेणूउ | वेणुओ | वेणूओ | पालिअल्ल | पालिअल्ला | पालेअल्लउ | पालेअल्लाउ | पालिअल्लओ | पालेअल्लाओ | ८. अम्हेहिं | जंबु | जंबू | सिंचिअल्ल | सिंचेअल्ला | सिंचिएल्लउं | सिंचेल्लउं | सिंचेवा | ९. लात्तुहिं | लात्तूहिं | लहु | लहू | लहुउ | लहूउ | लहूओ | लाडिअल्ल | लाडेअल्ला | लाडिअल्लउ | लाडेअल्लाउ | लाडिअल्लओ | लाडेअल्लाओ | १०. तुम्हेंहिं | तिण | तिणा | तिणु | जत्तेअल्ल | जात्तिअल्ल | जत्तेअल्लु | जात्तिएल्लउं | जत्तेल्लउं | जत्तेवा

अ. ६ प. क. १. सामि | सामी | रुहुवइ | रुहुवई | नमन्त | नमन्ता | नमन्ताण | नमन्ताणु | नमन्ताणो | रुहु | २. कइ | कई | गुरु | गुरू | पाणन्तु | पाणन्तो | पाणन्तण | पाणन्ताण | अन्धइ | चिट्ठइ | वइसए | ३. आए | आई | तं | पुक्करन्त | पुक्करन्ता | पुक्करन्ताणु | पुक्करन्ताणो | वज्जए | ४. सीह | सीहा | सीहु | सीहू | केसरि | केसरी | हत्थि | हत्थी | करि | करी | करेणु | करेणू | ५. गामणी | गामणि | गुणी | गुणि | रिद्धि | रिद्धी | जइ | जई | साहु | साहू | णिसुणन्त | णिसुणन्ता | णिसुणन्ताण | णिसुणन्तु | णिसुणन्ताणे | सोहए | ६. सो | दहि | दही | भसन्त | झुंजन्ताण | खाअन्तु | खाअन्ताणो | खाएन्तु | ७. लहु | सत्तिअ | सत्तिआ | सत्तित्थु | उदग | उदगा | उदगु | वारि | वारी | वासिअन्त | सिंचमाणु | सिंचन्त | सिंचन्तो | अच्चन्ति | अच्चन्ती | अच्चन्ते | अच्चन्तो | ८. अम्हे | अम्हइं | मागि | मागी | दुग्गअ | दुग्गआ | दुग्गअहु | वेच्चन्त | वेच्चन्ता | वेच्चन्ताण | वच्चइ | वच्चए | वच्चन्ते | ९. सहे | गामणि | गामणी | सेवन्त | सेवन्ता | सेवन्ताण | सेवन्तु | सेवन्ताणे | थक्कइ | १०. सो | गहु | गहू | चलन्त | चलन्ता | चलन्ताण | चलन्तु | चलन्ताणे | थक्कइ

अ. 1. सो भत्ता/भत्ती करेवं/करण/करणहं/करणहिं/करेवि/करेविणु/करेप्पि/करेप्पिणु गच्छइ 2. तुहुं तत्ति/तत्ती तत्थेवं/तत्थण/तत्थणहो/तत्थणहिं/पावेप्पिणु पावेवि/पावेविणु/पावेप्पि/पावेप्पिणु उज्जमहि/चेट्ठसि 3. सो पुत्ती/पुत्ति/सुय/सुया/धूय/धूआ/तणय/तणया/कहेवं/कहण/कहणहं/कहणहिं/भणेवि/भणेविणु/विण्णवेविणु/विण्णवेप्पिणु उच्चाहइ 4. अहे/अम्हइं रज्जु/रज्जू बंधेवं/बंधण/बंधणहं/बंधणहिं/बंधेवि/बंधेविणु/बंधेप्पि/बंधेप्पिणु उज्जमहु/चेट्ठह 5. ते धेणु/धेणू/धेणुए/धेणुउ/धेणुओ/धेणूओ/धेणूउ पेच्छेवं/पेच्छण/देक्खणहं/देक्खणहिं/देक्खेप्पि/णिरक्खेप्पि/णिरक्खेवि/णिरक्खेविणु गच्छहिं/ठिहिरे/ठहन्ते/ठहन्ति

आ. 1. सामी/सामी रुवइ/रुअइ वंदे/वंदउं/वंदिवि/वंदावि/वंदेवि/वंदेविणु/वंदाप्पि/वंदाप्पिणु हरिसइ/उल्लसेइ 2. करु/करई गुरु/गुरू वंदि/वंदेउ/वंदिवि/वंदवि/वंदेवि/वंदेविणु/वंदापि/वंदप्पिणु चिट्ठइ/अच्छेइ/वइसए/उवविसेइ 3. सो भत्ति/भत्ती करि/करिउ/करिविं/करावि/करेवि/करेविणु/करेप्पि/करेप्पिणु जीवइ 5. तुहुं तत्ति/तत्ती त्थामि/तत्थेवि/तत्थेविणु/तत्थावि/तत्थेवि/तत्थेविणु/तत्थेप्पि/तत्थेप्पिणु हरिसाहि/हरिससे 5. ते धेणु/धेणू/धेणुए/धेणुउ/धेणुओ/धेणूओ/धेणूउ गच्छहिं/ठहिरे

पाठ 69 क. 1. नरिंद/नरिंदा/नरिंदस्सु/नरिंदासु/नरिंदहो/नरिंदाहो/नरिंदस्सु पुत्त/पुत्ता/पुत्तु/पुत्तो रहुणन्दण/रहुणन्दणा/रहुणन्दणु वंदइ/वंदेइ/वंदए, वंदउ/वंदेइ/वंदिहिइ/वंदिहिए वंदेसइ/वंदेसए/वंदिहिए 2. प्राउत्ता/प्राउत्ता/प्राउत्तसु/प्राउत्तासु/प्राउत्तस्सु/प्राउत्ताहो/प्राउत्ताहे ससा/ससा गला/गला/गिवु करइ/करेइ/करए, करउ/करेउ, करिहिइ/करिहिए/करेसइ/करेसए 3. रज्जा/रज्जा रज्जसु/रज्जासु/रज्जस्सु/रज्जाहो/रज्जाहे सासण/सासणा/सासणसु तं रक्खइ/रक्खेइ/रक्खए, रक्खउ, रक्खिहिइ/रक्खिहिए/रक्खेसइ/रक्खेसए 4. रहुणन्दण/रहुणन्दणा/रहुणन्दणासु/रहुणन्दणाहो/रहुणन्दणाहे सुहु/सुहा/सुहु/सौख्य/सौख्खा/सोक्खु प्रहु/प्रज्जु सुह/सुहा/सोक्खु आत्थि/हवइ/हुइ/होइ/होउ/हुउ/हवेइ/हविहिइ/होसए/होहुहिए

5. सीया/सीया/सीयहे/सीयाहे साप/सया कह/कहा णिसुणइ/णिसुणेउ/णिसुणिहिइ 6. हउं गंगा/गंगा/गंगाहे/गंगाहे कहा/कह सुणउं/सुणउ/सुणेमु/सुणिहिमि/सुणिहिउं/सुणेसउं/सुणिसामि 7. प्रहु/प्रज्जु पुत्त/पुत्ता/पुत्तु/पुत्तो सुह/सुहा/सोक्खु वंदइ/वंदेउ/वंदेसइ 8. ता/ता/तसु/तासु/तस्सु/तहो/ताहो पुनु/पुत्तो पया/पया घरु वज्जइ/गज्जेइ/याहिइ 9. सो णम्मया/णम्मया/णम्मयाहे/णम्मयाहे सलिला/सलिला/सलिलु/सलिलो/उदगु/उदगा/उदगु/वारि/वारी पिवइ/पिवेइ/पिवए, पिवउ/पिवेउ, पिविहिइ/पिविहिए/पिवेसइ/पिवेसए 10. ता/ता/तसु/तासु/तस्सु/तहो/ताहो/प्राप/प्राया तहिं/पइं पात्तइ/पात्तेइ/पात्तए/पात्तेउ/पात्तिहिइ/पात्तिहिए/पात्तेसइ/पात्तेसए

ख. 1. नरिंद/नरिंदा/राय/रायसु/रायासु/नरवइ/नरवई/नरिंदस्सु/नरिंदहो/नरिंदाहो पुत्त/पुत्ता/पुत्तु/पुत्तो रहुणन्दण/रहुणन्दणा/रहुणन्दणासु/रहुणन्दणाहो/रहुणन्दणाहे/रहुणन्दणस्सु पोढ्कव्व/पोढ्कव्वा/पोढ्कव्वु/पोढ्कव्वो/प्रगाढ/प्रगाढा/प्रगाढु/प्रगाढो/प्रगाढे सो तत्ता/तत्ता/तत्तु/तात्तु/तस्सु/तहो/ताहे/गंधा/गंधा/गंधु परिक्खा/परिक्खा/परिक्खहे/परिक्खाहे पढइ/पढेइ/पढए, पढउ, पढिहिइ/पढिहिए/पढेसइ/पढेसए 2. प्रहु/प्रज्जु पुत्त/पुत्ता/पुत्तु/पुत्तो सुह/सुहा/सोक्खसु/सोक्खासु/सुहस्सु/सुहहो/सोक्खाहो हसए, हसेइ, हसेसए 3. सो तत्तीए तणु/तणू/णम्मया/णम्मया/णम्मयाहे/णम्मयाहे सलिलपो/उदगु/वारि/वारी पिवइ, पिवेइ, पिविहिइ/पिविहिए 4. रहुणन्दण/रहुणन्दणा/रहुणन्दणासु/रहुणन्दणासु/रहुणन्दणस्सु/रहुणन्दणाहो/रहुणन्दणाहे सुह/सुहा/सोक्खु सव्व/सव्वा/सव्वसु/सव्वासु/सव्वहो/सव्वाहो/सव्वस्सु सुह/सुहु/सोक्खा आत्थि, हवइ, हवेइ, होहिइ, हुई हुइ

ग. 1. सामि/सामी/सामिहं/सामीहं/सामिहुं/सामीहुं भाइ/भाई तं वंदहिं/वंदन्ति/पणमन्ते/पणमिरे 2. कइ/कई/कइहं/कईहं/कइहुं/कईहुं गुरु/गुरू अम्हहं/अम्हइं पेच्छहिं/देक्खंति/णिरक्खिरे/णिरक्खन्ते 3. नरिंदा/नरिंदा/रायहं/रायाहं/नरवइ/नरवई/नरवइहं/नरवईहं/नरवइहुं/नरवईहुं रिद्धि/रिद्धा/सत्तु/सत्तू/अरि/अरी जुज्झेवं/जुज्झण/जुज्झणहं/जुज्झणहिं/जुज्झेवि/जुज्झेविणु/जुज्झेप्पि/जुज्झेप्पिणु झामहिं/झामन्ति/झामन्ते/झामरे 4. अम्हहं गुरु/गुरू भोयण/भोयणा/भोयणा जिमन्ति/जिमन्ते/जिमिरे/जिमहिं/जेमन्ते/जेमिरे/जेमंति 5. गुरु/प्रज्जु माउसी/माउसि/माउलिउ/माउसीउ/माउसिहो/माउसीए सो साडी/साडि किणहिं/किणन्ते/किणंति/किणिरे

पाठ 70 1. वात्तम/वात्तमा/वात्तउ/वात्तमो सप्पाहे/सप्पाहे/सप्पहु/सप्पाहु ऽऽइ/ऽऽइ/ऽऽए 2. खेत्तहे/खेत्ताहे/खेत्तहु/खेत्ताहु धन्न/धन्ना/धन्नु उप्पज्जइ 3. सो धेणुहे/धेणूहे ऽऽइ 4. जन्तुहे/जन्तूहे जन्तुहु/जन्तूहु पइट्ठ 5. खेत्तहे/खेत्ताहे/खेत्तहु/खेत्ताहु कुक्कुर/कुक्कुरा/कुक्कुरु/कुक्कुरो धावइ/पत्थाइ 6. णरा/णरे/णरु/णरो हिंसाहे/हिंसाहु ऽऽइ 7. चाहे/चाहे/चाहु/चाहु वात्तम

पा०74

बालअ।बालअ।बालअो पउए 8.गिरिहे।गिरीहे गंग।गंगा उप्पज्जए 9.सो हिमइ।मज्जु डरेइ 10.सो तउ।दुहुं तुज्झ दुज्झ गंथा।जेसुं गंथा पढेइ 11.बीमाहे।बीमाहे।बीमइ।बीमाउ तरु।तरू उप्पज्जेइ 12.पुत्त।पुत्ता।पुत्तु।पुत्तो चिक्खे चिट्ठेइ।अप्पइ।जणेराइ।जणेरइ सो चरि।चरे णज्जइ 2.णहे।णहिं णेहे।मेहा गज्जहिं।गज्जंति 3.सा पंखिखाहिं।पंखिखाहिं पुच्चेइ 4.णामयाहिं। णामयाहिं उदगु।वालित्तो।वारि।वारी सुक्कए 5.सीया।सीया चरि।चरे कह।कहा सुणइ 6.सो पोट्टलि।पोट्टले भरुज्झ बइसेइ।पविसइ।पिसुइ 7.जरहिं।जराहिं बाघ।बाघा थक्कइ 8.रहुणन्दण।रहुणन्दणा।रहुणन्दणसु।रहुणन्दणासु। रहुणन्दणस्सु।रहुणन्दणहो।रहुणन्दणाहो रज्जि।रज्जे कमल।कमला वड्ढेइ 9.ताताताहु।ताताहुताहो ताप।ताया चरि।चरे पुत्त।पुत्तौ।पुत्तु पालइ 10.तुहं हसि।हसिउ।हसावि।हसिवि।हसेवि।हसेविणु।हसेप्पिणु। हसेप्पि चरि।चरे णज्जहि।णज्जसि।णज्जसे।णज्जैसि

पा०76

1. हे सामि।सामी तुम्हे।मम्हं रक्खह।रक्खेइ 2.हे नरिंद।नरिंदा।नरिंदं।नरिंदो।राय।रायु।राचो।राचा। नरवइ।नरवई तउ।तुज्झ।तुज्झु रज्जे।रज्जि सुहा।सुहा।सोक्खु।नत्थि।7.हे मित्त।मित्ता।मित्तु।मित्तो तुहुं महु।मज्झु चरि।चरे आगच्छ।आगच्छि।आगच्छु।आगच्छे।आगच्छसु।आगच्छेसु।आगच्छहि।आगच्छेहि 4.हे माया।माया तुहुं बालअ।बालआ।बालआ।बालि।बालु।बाले।बालसु।बालेसु।चवहि।चवेहि 7.हे जुवइ।जुवई तुहुं हसा हसो।हसी।हस्सु।हसेसु।हस्सहि।हसेहि 8.बालअ।बालआ तुम्हे।तुम्हइं गंथ।गंथा पढह।पढेह 9.मित्त।मित्ता।तुम्हे। तुम्हइं रज्जु।रज्जा।रज्जसु।रज्जेसु।रज्जस्सु।रज्जेस्सु।रज्जहो।रज्जेरज्जहे।रज्जाहे डरह।डरेह 10.हे साहु।साहू।साहुहो।साहूहो। संजअ।संजआ।संजसु।संजेसु पालह।पालेह

पा०78 क. 1. जो णर।णरा।णरु।णरो थक्कइ, सो सच्चइ 2.जो कुद्धइ सो लुक्कइ? जेंजेण।जेणं सच्चिज्जइ, तेंतेण।तेणं हविज्जइ 4. जाजा।जसु।जासु।जस्सु।जहो।जाहो तणु।तणू थक्किआ, तातातस्सु।तासु।तस्सु।तहो।ताहो जरा वाट्टिअ-हआ 5. हउं जाजाजु कोकउं।कोकाम्मि।कोकाम्मि।कोकम्मि, सो तुहुं प्राप्ति 6.जहिं।जाहिं लक्कडि, लक्कडे तुहुं लिहहि।लिहेहि मज्झेहि सो मइं तं महु।मज्झु भत्थि 7.तुहुं जाजा जहु।जासु।जहे।जाहे डरहि।डरसि, तहु।तासु।तहो।ताहो हउं डरउं।

ख. 1. आया।आया।आयु।आयो एहो।इमा।इमा।इमो णरा।णरा णरु।णरो हसइ 2.आया।आया।एइ।इमा।इमा णरा।णरा हसहिं 3. सो एहो।इमा।इमा।इमु।आय।आया।आसु गंथा।गंथा।गंथु पढइ 4.ते एइ।इमा।इमा।आय।आया गंथ।गंथा पढहिं।पढंति 5.इमो।इमेण।इमेणं।आयें।आयेण।आयेणं।एतें।एतेण।एतेणं णरेण।णरें।णरेणं हविज्जइ।हविअइ 6.इमहिं।इमाहिं।इमेहिं। आयहिं।आयाहिं।आयेहिं णरेहिं गंथा।गंथा पढिज्जन्ति।पढिज्जहिं।पढिअन्ते 7.हउं इमा।इमा।इमसु।इमासु।इमस्सु।इमहो। इमाहो।आया।आया।आयसु।आयासु।आयस्सु।आयहो।आयाहो जीवउं 8.सा जीवइ एत।एता।एत्तइ।एत्ताहे। हउं इमा।इमा।इमु।एहो।आया।आया।आयु वय।वया।वयु पालउं 10.इहि इमहिं।इमाहिं।एतहिं।एताहिं।आयहिं।आयाहिं णरि।णरे णाण।णाणा।णाणु भत्थि।

ग. 1. तुहुं कॉउ।कवण।कवणा।कवणु करहि? 2.तुहुं कवण।कवणइं।कवणा।कवणइं।कॉइ कज्ज।कज्जा।कज्जइं।कज्जाइं करहि 3.सो कॉइं।कवणहे।कवणाहे कवणासु।कवणासु।कवणस्सु।कवणाहो।कवणाहो सलिलु।उदगु।वारि।वारी पिबइ। सो कॉउ।कवण।कवणा।कवणहो।कवणाहो।कवणासु।कवणासु।कवणस्सु।कवणाहु पुत्त।पुत्ता।पुत्तु।पुत्तो भत्थि 5.सो कवणहे।कवणाहे।कवणासु।कवणासु डरइ 6.तुहुं कवण।कवणा।कवणासु।णासु।कवणहे।णाहे।कवणस्सु जीवहि 7.कहिं।काहिं कवणहिं।कवणाहिं वुद्धु।तउ।तुज्झ।तुज्झु भाई।भाती भत्थि।

घ. 1. कवण।कवणा।कवणु।कवणो।कॉउ णज्जइ? 2.सो क।काहु वय।वया।वयु पालइ 3.कें।केण।केणं सलिलो सिच्चिज्जइ सिंचिज्जइ 4. क।का।कासु।कासा।कस्सु।कहो।काहो तुहुं उट्ठहि।5.सो कासु।क।का।कासु।कस्सु।कहो।काहो पुत्तो हविअइ 6.इमा इमा।इमु।इमो।एहो।आया।आया।आयसु।आयासु गंथा।गंथो कवणसु।कासु।कस्सु।अस्मि 7.क।का।कु रज्ज।रज्जा।रज्जु तुहुं रक्खहि 8.कहिं।काहिं चरि।चरे सो तस्सु

पाठ ४०

1. जप्प तुहुं जग्गाहि तप्प हउं रूप।रूपा।रूपु पेच्छउं।देक्खामि।णिरुवमि 2.जेत्थु तउं।तुज्झ।तुघ्र गामो तेत्थु मइ।मज्झु घरो।
3. जहा।जेम सो सुह।सुहा।सोक्खु वंछइ, तहा।तेम हउं सुह।सुहु।सोक्खु वंछउं 4.तुहुं केत्थु वसहि ? 5. हउं एत्थु वसउं 6.तुहुं म हत्थी।हत्थु।
हत्थेहत्त।हत्थसु।हत्थेसु।हत्थाहि।हत्थेहि 7. रुणवदण ण।णवि उट्ठइ 8.जइ तुहुं कहहि तो हउं इमा।इमु।इदु।माया।माय।माय
कज्ज।कज्जा।कज्जु करउं।

शब्द रूपो

1. अ पुं (नरिंद)

नरिंद, नरिंदा, नरिंदु, नरिंदो	नरिंद, नरिंदा
नरिंद, नरिंदा, नरिंदु	नरिंद, नरिंदो
नरिंदं, नरिंदेण, नरिंदेणं	नरिंदेहिं, नरिंदाहिं, नरिंदेहिं
नरिंदे, नरिंदा, नरिंदासु, नरिंदासु	नरिंद, नरिंदा, नरिंदहं, नरिंदं
नरिंदहो, नरिंदासे, नरिंदस्सु	नरिंदाहं
नरिंदहं, नरिंदाहं, नरिंदहु	नरिंदहं, नरिंदाहं
नरिंदाहु	
नरिंदि, नरिंदे	नरिंदेहिं, नरिंदाहिं
नरिंद, नरिंदा, हु, हे	नरिंद, हो

2. अ. नपुं. (कमल)

कमल, कमला, कमलु	कमल, कमला, कमलइं, कमलाइं
कमल, कमला, कमलु	कमल, कमला, कमलइं, कमलाइं
कमलें, कमलेण, कमलेणं	कमलहिं, कमलाहिं, कमलेहिं
कमले, कमला, कमलासु, कमलासु	कमल, कमला, कमलहं
कमलस्सु, कमलहो, कमलाहो	कमलहं
कमलहं, कमलाहं, कमलहु	कमलहं, कमलाहं
कमलाहु	
कमलि, कमले	कमलहिं, कमलाहिं

3. इ पु. (मुणि)

मुणि, मुणी	मुणि, मुणी
मुणि, मुणी	मुणि, मुणी
मुणिं, मुणीं, मुणिएं, मुणीएं	मुणीहिं
मुणीण, मुणीण, मुणिणं, मुणीणं	मुणीहिं
मुणी, मुणि	मुणिहुं, मुणीहुं
	मुणि, मुणी
मुणिहे, मुणीहे	मुणीहं, मुणीहं
मुणीहिं, मुणीहि	मुणीहिं, मुणीहिं, मुणिहिं, मुणीहिं

4इ. नपुं

अच्छि, अच्छी	अच्छि, अच्छी, अच्छिइं, अच्छीइं
अच्छि, अच्छी	अच्छी, अच्छि, अच्छिइं, अच्छीइं
अच्छिं, अच्छीं, अच्छिएं, अच्छीएं	अच्छीहिं, अच्छिहिं
अच्छिण, अच्छीण, अच्छिणं, अच्छीणं	
अच्छिहे, अच्छीहे	अच्छिहुं, अच्छीहुं, अच्छी, अच्छि
अच्छिहिं, अच्छीहिं	अच्छिहिं, अच्छीहिं, अच्छिहिं, अच्छीहिं

5. उ पुं (साहु)

साहु, साहू	साहु, साहू
साहु, साहू	साहु, साहू
साहुं, साहूं, साहुएं, साहूएं	साहुहिं, साहूहिं
साहुण, साहूण, साहुणं, साहूणं	
साहु, साहू	साहु, साहू, साहुहुं, साहूहुं
साहुहे, साहूहे	साहुहं, साहूहं
साहुहिं, साहूहि	साहुहिं, साहूहिं, साहुहुं, हूहुं
	साहू, साहु, साहुहो, साहूहो

6.ऊ.नपुं (प्रभु)

प्रभु, प्रभू	प्रभु, प्रभू, प्रभुइं, प्रभूइं
प्रभु, प्रभू	प्रभु, प्रभू, प्रभुइं, प्रभूइं
प्रभुं, प्रभूं, प्रभुएं, प्रभूएं, प्रभुण, प्रभूण, प्रभुणं, प्रभूणं	प्रभुहिं, प्रभूहिं
प्रभु, प्रभू, प्रभू	प्रभु, प्रभू, प्रभूहं, प्रभूहं
प्रभुहे, प्रभूहे	प्रभुहं, प्रभूहं
प्रभुहि, प्रभूहि	प्रभुहिं, प्रभूहिं
	प्रभुहो, प्रभूहो

प्रौढ प्राकृत रचना सौरभ

(संज्ञा सूत्र - 1-10) (संख्यावाची शब्द पृष्ठ ५) (सर्वनाम - 57-66)

★ संज्ञा सूत्र [1-10]

1/1 1. अतः सेर्डोः
अकारान्त पुल्लिंग शब्दों से पर रहे सि (प्र.एक व.) का डो' ओ होता है।
देव + सि = देव + डो = देव् + ओ = देवो

1/1 2. वैतत्तदः
एतत् और तद् से पर सि का विकल्प से ओ होता है।
एतत् → एस → एस + सि = एस + ओ = एस, एसो
तत् → स → स + सि = स + ०, ओ = स, सो

1-2/2 3. जस्-शसोर्लुक्
जस्-शस् का लुक् उक्त में होता है। देव + जस् = देव + ०
लोप देव + शस् = देव + ०

2/1 4. अमोऽस्य
प्राकृत में अम् के 'म' का लोप होता है और म् शेष रहता है) मोनुस्वारः से म का अनुस्वार होता है। देव + अम् = देव + म् = देवं।

3/1-6/2 5. टा-आमोर्णः
टा और आम् के स्थान पर ण होता है। देव + टा = देव + ण, देव + आम् = देव + ण

3/2 6. भिस ऐस्-ओस्
भिस का हि, हिं, हिं होता है। देव + भिस् = देव + हि, हिं, हिं

5/1 7. ङसेस्तो-दो-दु-हि-हिन्तोलुकः
प्र.पु. में ङसि के स्थान पर तो, दो, दु, हि, हिन्तो और ० (लोप) होते हैं)
देव + ङसि = देव + तो, ओ, उ, हि, हिन्तो, ०

5/2 8. भ्यसस्तो-दो-दु-हि-हिन्तो-सुन्तो
देव + तो + ओ, उ, हि, सुन्तो, हिन्तो

6/1 9. ङसः स्सः
प्र.पु. में ङस् (का) के → स्स होता। देव + ङस् = देव + स्स = देवस्स

7/1 10. ङेर्म्मि ङेः
ङे → ङ (ए) और म्मि होते हैं। देव + ङे = देव + ङ = देव + ए = देवे
देव + ङे = देव + म्मि = देवम्मि

★ सर्वनाम सूत्र [57-66]

1/2 57. अतः सर्वादेर्ङसेः
स.पु. सर्व → सव्व आदि सर्वनाम से पर ङस् → ङ (ए) होता है। eg. सव्व + ङस् = सव्व + ए = सव्वे
तं, कं, जं, एतं/एए, इमं, अन्नं)

7/1 58. ङेः ङसिं-म्मि-त्थाः
स.एक व. के ङि. प्रत्यय के स्थान पर ङसिं, म्मि और त्थ होता है।
सव्व + ङि = सव्व + ङसिं, म्मि, त्थ = सव्वस्सिं, सव्वम्मि, सव्वत्थ
स्सिं स्मिं

7|1 59. न वानिदमेतदो हिं ⇒ न वा अमीदमेतदो हिं
(हि) (इदम् एतद् सिवाय)
स. एकव. के डि. का विकल्प से हिं होता है किन्तु इदम् और एतद् से पर नहीं।
सव्वहिं, तहिं, जहिं ...

6|2 60. आम्मो डसिं
आम् की जगह डसिं ⇒ एसिं विकल्प से होता है। तासिं, एतेसिं, जेसिं ...

6|2 61. किं-तद्भ्यां डासः
किं और तद् सर्वनाम से पर विकल्प से अम् का डास (आस) होता है।
कास, तास।

6|1 62. किं-यत्तद्भ्यो ङसः
किं, यत् और तद् सर्वनाम से पर च. एकव. के ङस् प्रत्यय का डास (आस) विकल्प से होता है। कास, जास, तास
(संयुक्ताक्षर पूर्व ह्रस्व)

6|1 63. ईद्भ्यः स्सा से (किं-यत्तद्भ्यो)
ईकारान्त शब्दों से पर ङस् का स्सा और से होते हैं। (विकल्प से) की + स्सा, से = किस्सा, कीसे, तिस्सा, तीसे

7|1 64. ङे-ङहि-डाल्ला-ड्डा काले (किं-यत्तद्भ्यो)
काल वाचक शब्दों के होने पर ङि के स्थान पर डहे (आहे), डाल्ला (आल्ला), ड्डा होते हैं।
यु. काहे, काल्ला, कड्डा, ताहे, ताल्ला, तड्डा

5|1 65. ङसेर्म्हा (किं-यत्तद्भ्यो)
किं, यत् तद् सर्वनाम से पर ङसि के स्थान पर विकल्प से म्हा होता है।
यु. त + ङसि = त + म्हा = तम्हा, जम्हा, कम्हा

5|1 66. तदो डोः
तत् से पर ङसि का डो (ओ) विकल्प से होता है। यु. तत् + डो = त् + ओ = तो

क्रियासूत्र

प्रो० प्राकृत अपभ्रंश रचना सौरभ – 2 (क्रियासूत्र 1–5, कृदन्त 42–46)

3|1 1. त्यादीनामाद्यत्रयस्याद्यस्येच्चे च्चौ
ति + आदीनाम् + आद्यत्रयस्य + आद्यस्य + इच् + एच्चौ
(ति + आदि) 6|3 (आद्य – त्रय) 6|1 आद्य (6|1) (इच् + एच्) 1|2
वर्त्तमानकाल में तीन पुरुषों में से प्रथम (अन्य) पुरुष के एक व. के प्रत्यय ति आदि की जगह ए, ए होते हैं। यु. हस + इ, ए = हसइ, हसए

2|1 2. द्वितीयस्य सि से
तीन पुरुषों में से द्वितीय (मध्यम) पुरुष के एक व. के सि, से के स्थान पर सि से होते हैं। हससि, हससे, ठाससि, होसि

1|1 3. तृतीयस्य मिः
तीन पुरुषों में से तृतीय (उत्तम) पुरुष के एक व. के मि, इ → मि होता है।
यु. हसामि, आमि, होमि

4. बहुष्वाद्यस्य न्ति न्ते इरे
बहु व. में आद्य (अन्य) पुरुष के अन्ति, अन्ते → न्ति, न्ते, इरे होते हैं। हसन्ति होन्ति

5. मध्यमस्येत्था-हच्चौ
बहु व. में प्रत्यय पु. का थ, थे → इत्था, इ होता है।
eg. हसित्था, हसइ, ठाइत्था, ठाइ

★ कृपनता सूत्र

42. इह-हच्चो र्हस्य
मध्यम पु. वर्तमानकाल बहु व. के इह (प्रत्यय) और हच् के ह का विकल्पे थ होता है।
इह → इत्थ . हसह → हसत्थ

43. क्त्वा इय-दूणौ
क्त्वा (सं.भूकृ.) → त्वा के स्थान पर शौरसेनी प्राकृत में इय और दूण होते हैं। वैकल्पिक पक्ष में त्ता होता है। हसिय, हसिदूण, हसित्ता

44. दिरित्येचोः
इच्, एच् → दि होता है। हसदि

अतो देश्च

45. अकारान्त से पर दे और दि होते हैं। हसदि, हसदे

भविष्यति स्सिः

46. भविष्य काल में स्सि प्रत्यय जोड़ा जाता है। फिर वर्तमान कालत्व के पुरुष और वचन बोधक प्रत्यय जोड़ दिये जाते हैं।
स्सि हस + स्सि + मि, मे = हसिस्सामि, हसिस्सामे
हसिस्सिन्ति नं, इरे

संख्यावाची शब्द (शौर प्राकृत) - Pg. 144-173

★ संख्यावाची गणना बोधक विशेषण

1. एक, एग, एम, इक शब्द → सब सर्वनाम प्रमाणे तीनों लिंग में

2. दु दो, तिण्ह, चउ, पंच के बहु व. तीनों लिंग में एक ही रूप। [2-18 तक हमेशा बहुवचन]
6-18 तक पंच प्रमाणे

3. 19-58 तक के 'वीस' प्रमाणे। इन शब्दों में 'सा' लगाकर 'कहा' प्रमाणे। वीसइ → सइ प्रमाणे।

4. 59-99 साहि प्रमाणे। साहि के रूप 'सइ' प्रमाणे

5. सय - लक्ख तक 'कमलत्व' प्रमाणे।

6. कोडि, पकोडि आदि के सइ प्रमाणे।

★ 7. प्रयोग - 2 प्रकार से → 20 मनुष्य जाते हैं वीसा णरा गच्छन्ति
वीसा णराण गच्छइ (मनुष्यों की बीस जाती है)

★ 8. 19-100 तक और आगे भी संख्यावाची शब्द एक व. में ही प्रयुक्त होते हैं, भले ही विशेष्य बहु व. हो।
eg. 30 फल खा = तीसं फलाइं खादि (विभक्ति विशेष्य प्रमाणे, व. लिंग नहीं)
जब ये शब्द स्वयं की अनेकता बताएंगे तब बहु व. में।)
eg. 3 तीस फल खा = तिण्णि तीसाउ फलाइं खादि)

9. बीच की संख्या के लिए लघु संख्या के साथ अहिंसु या उत्तर। उत्तरीय शब्द लगा दिया जाता है।
अट्ठोत्तर सय = 108, अट्ठोत्तर सहस्स = 1008, बारहाहिय दोसहस्स = 2012।

10. २००, २०००, ३०००० आदि के लिए संख्यावाचक शब्द के बीच सय, सहस्स, लक्ख आदि लगाना दोसय = २००, दो सहस्स = २०००, तिलक्ख = ३ लाख।
11. प्रकार वाचक शब्द बनाने के लिए 'तिह' शब्द लगाना। दुविह, तिविह ... ।
12. कइ (कितना) तीनों लिंग में एक ही रूप, बहुव.।
13. क्रमवाचक संख्या के लिए 'म' लगाना। ~~पञ्चम~~ पंचम ... ।
कुछ अपवाद हैं - पढम, बीअ, तइअ, छट्ठ, चउत्थ,

अभ्यास-

1. एगो अंती भगच्छइ। २. तं चत्तारि कम्माणि खयन्ति। ३. सो तीसुं लोएसु पियो अत्थि।
4. दो कन्नाउ गच्छन्तो/जाइरे ५. पंच बालसा हसन्ति ६. सत्त विमाणं उड्डन्ते ७. ~~चित्ताए~~ अट्ठ हरिसन्ते ८. दस/दह बालसा खेलन्ति ९. सो दहु फलाइं ~~भक्खिअ~~ लइऊण घरं ~~भग्गयो~~
10. ~~बारस~~ करहा अच्छन्ते ११. ~~म~~ तत्थ चउदस ~~नईओ~~ णईओ अत्थि १२. सो सोलस वयासत्तइ
13. सट्ठादस सीहा / केसरी गज्जिहिन्ति १४. वीसा वंचसा उड्डीअ १५. दो / दुण्णि वीसाउ वायसा पालिस्सइ उड्डीअ
16. बावीस रक्खसा प्रहिं कुत्तिहिन्ते १७. पण्णवीसा मित्ता हरिसिइं खेलीअ १८. तीसा कन्नाउ
थंभन्ति १९. चउतीसा पूयाउ हरिसेन्तु २०. तिण्णि तीसाओ कन्नाओ थंभन्ते २१. सत्ततीसा
गुहाओ नस्सिस्सइरे २२. बायाला कन्नाउ चिरावन्ति २३. छायालीसा महिलाओ तवं करन्तु
24. चत्तारि छायालीसाओ महिलाओ तवेन्तु २५. पण्णास बालसा रूसिरे २६. चउवण्णा रक्खसा
डन्ति २७. अट्ठावण्णा णरा रक्खहेन्तु २८. ~~बासट्ठि~~ बासट्ठी रयणाइं सोहंति २९. पंचबासट्ठीओ
रयणाइं सोहेन्ति ३०. पणसट्ठी पुक्काइं विभसन्ति ३१. ~~सत्तसत्त~~ सत्तरी मुत्ताइं गलिहिन्ति ३२. तेवुत्तर
णयरजणाइं ठान्तु → ठन्तु ३३. दुण्णि तेवुत्तरीउ णयरजणाइं ठन्तु ३४. पञ्चसयाइं भुंजाओ
सोहन्ति ३५. अट्ठहत्तरी महिलाउ हरिसिस्सन्ते ३६. बासी पत्ताइं जलयन्ति ३७. चउसीई बालसा
खेलिहिइरे ३८. णउई रयणाइं पडिऊण तुट्टन्ते ३९. तिण्णि णउईओ रयणाणि पडिअ तुट्टिरे
40. तेणाई सप्पा डसित्ता पलयन्ति ४१. छण्णवई पोत्ता णच्चेउं उट्ठिस्सन्ति ४२. सयं लक्खुडाणि
जलन्ति ४३. दोसयं बालसा खेलेस्सन्ते ४४. तिण्णि दोसयाइं बालसा खेलीहिइरे ४५. पंचसयं णरा
उव्वसन्ति ४६. चत्तारि पंचसयाणि णरा हरिसेन्ति ४७. सत्तसयं णरा हरिसेउं जीविस्सन्ति ४८. सहस्सं
णरा वसन्ति ४९. तिण्णि सहस्साइं णरा वसन्ति ५०. तत्थ दह/पत्त लक्खाइं महिलाओ वसन्ति ५१. तहिं छहु
पसलक्खाइं महिलाओ वसन्ति ५२. कोडी रयणाणि सोहिहिन्ति ५३. दोण्णि कोडी रयणाइं सोहेहिइरे ५४. सो
चउहिहाइंकम्माणि नस्सइ ५५. तुमं नाना विहुं इच्छ अहिलासाओ ~~नस्सन्ति~~ करसि ५६. तस्स चउत्थी परिक्खा
होहिइ ५७. सत्तमी जुवई हरिसिय जीवइ ५८. अट्ठमो पुत्तो खेलतु ५९. अहं दसमं पुरंथं पढामि ६०.
अट्ठावसमी मुंजा णिग्गिया ६१. ~~इक्कतीसामी~~ एगवीसमीओ भाए मुणी झायइ ६२. तीसमो कई आयइ।

Page No.
Date :

राजस्थान में प्राकृत-अपभ्रंश पाण्डुलिपियाँ - परिचय (पाण्डुलिपि-उपयोगिता)

राज्य स्तर पर
- प्राचीन काल से ही साहित्य का केंद्र
- शासकों से जन साधारण
- राज्यों कवि-विद्वानों का सम्मान
- ग्रंथालय स्थापन
- जगह के नाम - सरस्वती, बीकानेर

जैन
- सेवा
- नवीन साहित्य का निर्माण
- प्रतिलिपियाँ + भंडारों में
- जीर्णोद्धार
- सुरक्षा + संरक्षण

- जौहरी बाजार
- उत्तम पैराद
- ग्रंथ निर्माण की काफी बाद

→ चट्टानीय - पहाड़ों की चट्टानों पर
- सन् 1170 - भीलवाड़ा विजौलिया - शिलालेख उन्नत शिखर पुराण

पाण्डुलिपि विज्ञान Summary.

Page No.
Date :

प्र. 1. पाण्डुलिपि विज्ञान को विज्ञान कहा जा सकता है? क्यों? अन्य विज्ञानों से इसका संबंध?

उत्तर – 21वीं सदी के वर्तमान युग को आधुनिक कंप्यूटर युग या Modern युग कहा जा सकता है। इस युग में एक ओर जैसे-जैसे आधुनिक Electronic उपकरणों का चलन बढ़ा है, वैसे-वैसे दूसरी ओर लोगों में (विशेष में युवा पीढ़ी) प्राचीन भारतीय संस्कृति और सभ्यता की उपेक्षा कर रही है, जिससे उसका संरक्षण संकट में आ गया है। हमारे पूर्वपुरुषों द्वारा चिर संचित ज्ञान-विज्ञान जिन हस्तप्रतों-पाण्डुलिपियों में सुरक्षित हैं, वह आज संकट की घड़ी से गुजर रहा है। इस समस्या के दो कारण मुख्यतः हैं- प्रथमतः, इन पाण्डुलिपियों को पढ़ने की समस्या. द्वितीय, उनकी भाषा-भाषा का अर्थ समझने की समस्या। संक्षेप में, पाण्डुलिपियों के संरक्षण-संशोधन के लिए दो प्रकार के विचारकों की आवश्यकता है- प्रथम, पाण्डुलिपि या हस्तलेख के पाठक, द्वितीय, पाठ के अर्थ को समझने वाले भाषाविद् की।

यद्यपि पाण्डुलिपि के क्षेत्र में देश-विदेश अनेक प्रयास जारी हैं किंतु पश्चिम देशों में अधिक कार्य हुआ है। डॉ. सत्येन्द्र, मुनि पुण्यविजयजी, आदि अनेक भारतीय विद्वानों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है।

वस्तुतः लेखन-कला का विकास मनुष्य ने हजारों वर्ष पूर्व आविष्कार किया था। आदिम मानव के काल से मनुष्य इतिहास बनाता आया है और उसे लेखों में या चित्रों में सुरक्षित करता आया है। आदिम मानव पहले स्वयं की स्मृतियों को गुफाओं, ईंटों, पत्थरों, शिलाओं पर अंकित कर चिरस्मरणीय बनाता था। फिर सभ्यता और संस्कृति के साथ लेखन कला भी विकसित हुई, जिससे भोजपाटी, Papyrus, Parchment, चमड़े, ताड़पत्र, भोज-पत्र आदि का उपयोग हुआ। फिर कागज बनने लगा और मानव वर्तमान 'कागज' तक या कागज को छोड़कर Soft copy तक पहुँचा। इतिहास

इन सभी प्राचीन हस्तलेखों आदि के अध्ययन का पाण्डुलिपि में समावेश कर दिया जाता है। इतिहासकारों ने हस्तलेख, प्रस्तरलेख, शिलालेख आदि नाम दिए हैं, वहीं English में इन्हें Manuscripts कहा जाता है।

'मैन्युस्क्रिप्ट्स' Latin भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ होता है 'हाथ की लिखावट'। अर्थ विस्तार की दृष्टि से हाथ से लिखी सभी वस्तु कपड़ा, Papyrus, Parchment, भोजपट्टी, ताड़पत्र, भोजपत्र, काष्ठ-पट्टी आदि Manuscripts के अन्तर्गत आ जाती हैं।

विकास-क्रम से पाण्डुलिपि निम्नलिखित भेद हो सकते हैं-

1. गुहा लेख या भित्ति चित्र - यह लेखन कला की शुरुआत की अवस्था है। जब आदिम मानव स्वयं के विचारों को व्यक्त करने के लिए गुफाओं, शिलाओं, पत्थरों पर चित्र अंकित करता था। इस प्रकार के लेख 3 लाख वर्ष पूर्व ई.पू. के मिलते हैं। इन लेखों को बनाने के लिए पत्थरों का उपयोग किया गया है।

2. मृदा लेख - मानव ने प्रस्तर के बाद धीरे-धीरे मिट्टी और ईंटों का उपयोग किया। अनेक अभिलेख पुरातत्व ईंटों पर प्राप्त हुए हैं।

3. Papyrus अभिलेख- लेखन कला के विकास में मानव ने मिट्टी के बाद, पेपीरस के खरीतों का उपयोग किया। ये खरीते या खरडे (Roll) बहुत लम्बे होते थे। इन पर ग्रंथों को लिपिबद्ध किया जाता था। इनकी साज-सम्हाल बहुत कष्टप्रद होती थी इसलिए इन्हें दुगुना-तिगुना करके पृष्ठ या पन्ने का रूप

हो, वह सब इस विज्ञान के विषय में आते हैं। भाषा के आधार पर क्षेत्र-काल का अनुमान भी किया जा सकता है। माइकिल वेंट्रिस ने क्रीट की लाइनियर बी नामक भाषा का उद्धारण किया ऐसा एक ही उदाहरण है।

4. ज्योतिष - पाण्डुलिपि वैज्ञानिक को ज्योतिष का ज्ञान भी बहुत आवश्यक है। पाण्डुलिपि के काल, तिथि, वार, नक्षत्र, योग, संवत्, सन् आदि की गणना के लिए ज्योतिष ज्ञान ही आधार है।

5. पुरातत्त्व (Archaeology) - पाण्डुलिपि के कई प्राचीन लेख पुरातत्त्व विभाग के संधोधकों को ही प्राप्त हुए हैं। पुरातत्त्व द्वारा उद्घारित बहुत सी प्राचीन सामग्री का उपयोग पाण्डुलिपि वैज्ञानिक भी करता है। मिस्र के पेपीरस, सुमेरियन सभ्यता के ईंट लेख, मोहनजोदड़ो की मुद्राएँ, अशोक के शिलालेख, संगई खेड़े से प्राप्त ईंटों के ब्राह्मी लेख आदि पुरातत्त्व के द्वारा ही उद्घारित हुए हैं।

9. पाण्डुलिपि के विविध प्रकारों का वर्णन कीजिए।

उ. 'पाण्डुलिपि' शब्द का अर्थ विस्तार हो जाने के कारण पाण्डुलिपि में अनेक प्रकार समाहित हो गए हैं। अनेक प्रकार के लिप्यासन पर लिखित या अंकित ग्रंथ, राज्यादेश, चिट्ठी-पत्र आदि सभी का समावेश 'पाण्डुलिपि' में हो गया है। 'पाण्डुलिपि विज्ञान' के सम्यग् ज्ञान हेतु पाण्डुलिपि के सभी प्रकारों का ज्ञान भी आवश्यक है।

सामान्यतः पाण्डुलिपि के भेद इस प्रकार देखे होते हैं -

पाण्डुलिपि
- राजकीय
  - ग्रंथ
  - राज्यादेश
  - चिट्ठी-पत्र
  - कार्यालयी नत्थियाँ
- लौकिक
  - ग्रंथ
  - अन्य

स्थूल रूप से पाण्डुलिपियों के दो भेद किए जाते हैं -

1. राजकीय - राजा के आदेश से या स्वराज्य संबंधी कोई कार्य में जो ग्रंथ, राज्यादेश, संदेश, चिट्ठी, पत्र आदि लिप्यासन पर उकेरे या लिखे गए थे, वे सभी 'राजकीय पाण्डुलिपि' कहे जाते हैं। इस प्रकार की पाण्डुलिपि सरकारी कार्यालयों - दफ्तरों, म्युजियमों आदि में संगृहीत हैं। (राष्ट्रीय पुरातत्त्व संग्रहालय)

2. लौकिक - राजकीय के अलावा जो कोई भी पाण्डुलिपि हैं, वे 'लौकिक' भेद में समावेशित हैं। जैसे - कोई धार्मिक ग्रंथ, शिलास्तम्भ, व्यक्तिगत पत्र या चिट्ठी आदि।

लिप्यासन के आधार पर भी पाण्डुलिपि के भेद किए जा सकते हैं -

पाण्डुलिपि (लिप्यासन के आधार पर)
- (अ) कठोर लिप्यासन (उत्कीर्ण करने हेतु)
  - पाषाणीय
    - चट्टानीय
    - स्तम्भीय
    - मूर्तीय
    - शिलापट्टीय
    - अन्य
  - मृण्मय
    - ईंट
    - दीवार
    - मुहर
    - घट
  - सीपदंतिकी
  - ताम्रपत्रीय
  - स्वर्णपत्रीय
  - रजतपत्रीय
  - अन्य
- (ब) कोमल लिप्यासन (लेखन हेतु)
  - पत्र
    - ताड़पत्रीय (लेखनी लिखित)
    - भोजपत्रीय (धातु शलाका कीलित)
    - अगरुपत्रीय
  - अन्य
    - कागजीय
    - काष्ठीय
    - चर्मपत्रीय
    - पटीय

A. कठोर लिप्यासन - कठोर लिप्यासन पर उकेरी गई या खोदी गई पाण्डुलिपियाँ सामान्यतः सात प्रकार की बताई गई हैं। इनके अनेक भेद हो सकते हैं। इनके प्रतिभेद निम्न हैं -

1. (अ) पाषाणीय के 5 प्रकार -

(i) चट्टानीय - पहाड़ों की चट्टानों पर जो लेख उकेरा गया हो, वह चट्टानीय पाण्डुलिपि कही जाती है। दिगंबर जैन समुदाय की कृति 'उन्नत शिखर पुराण' राजस्थान के भीलवाड़ा जिले के बिजौलिया ग्राम

में एक चट्टान पर ही खोदा गया है। यह सन् 1170 ई. में खोदा गया था।

(ii) शिलापट्टीय - प्राचीनकाल में शिलापट्टों पर लेख उत्कीर्ण करने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। राणा कुम्भा के समय में मेवाड़ के कुम्भलगढ़ में कुंभि स्वामिन् या मामादेव के मंदिर में एक विस्तृत लेख 5 शिलापट्टों पर उत्कीर्ण किया गया था। मेवाड़ के ही राजसमुद्र तालाब के पुश्तों पर राजकवि रणछोड़ कृत 'राज प्रशस्ति' 24 खण्डों में उकेरी गई है। इसके अलावा मल्ल पदन की 'पारिजात मंजरी' (प्रथम भाषा काव्य) (संस्कृत नाटक), भोज परमार का 'कूर्मशतक' (प्राकृत भाषा काव्य), अजमेर के शासक विग्रहराज चतुर्थ बीसल (1153-63 ई.) कृत 'हरकेलि नाटक', उनके राजकवि सोम शेखर कृत 'ललित विग्रह नाटक' आदि प्रमुख उदाहरण हैं।

(iii) स्तम्भीय - प्रस्तर स्तम्भों पर लेख खुदवाने की परम्परा भी अतिप्राचीन है। जैसे - ये लेख भी कई प्रकार के हो सकते हैं -

(a) शिलास्तम्भ - सम्राट् अशोक कालीन (272-32 ई.पू.) शिलास्तम्भ प्रायः प्राचीनतम शिलास्तम्भ हैं। इन पर उत्कीर्ण लेख में इन्हें शिलास्तम्भ ही कहा गया है।

(b) जय स्तम्भ - युद्ध में जय होने पर राजा की प्रशस्ति लिखने के लिए ये स्तम्भ बनाए जाते थे। सम्राट् समुद्रगुप्त का एरण का और यशोवर्मन का मंदसौर (म.प्र.) के जय स्तम्भ हैं।

(c) ध्वज स्तम्भ - ये स्तम्भ प्रायः मंदिरों के सामने स्थापित किए जाते थे। होलियो-डोरस का गरुड़ ध्वज और दिल्ली के महरौली में प्रसिद्ध विष्णुध्वज के अभिलेख इसी कोटि के हैं।

(d) कीर्तिस्तम्भ - किसी व्यक्ति की धार्मिक, सामाजिक पुण्यकार्यों की कीर्ति उजागर करने के लिए ये स्तम्भ खड़े किए जाते थे।

(e) वीर पुरुष स्तम्भ - युद्ध में अपार शौर्यपूर्ण कार्य करते हुए वीरगति को प्राप्त किसी सामान्य व्यक्ति की स्मृति में ऐसे स्तम्भ बनाए जाते थे। ऐसे ही एक वीर पुरुष का स्तम्भ गाँव समाई (कोटपूतली) से उद्धार कर कोटपूतली के राजकीय महाविद्यालय में स्थापित किया गया है।

(f) सती स्तम्भ - पूर्व काल में अपने पति के मृतक के साथ सती होने वाली स्त्रियों की स्मृति में ये स्तम्भ भी बनाए जाते थे।

(g) धर्मस्तम्भ - ऐसे स्तम्भ प्रायः धर्म स्थलों पर बनाए जाते थे। विशेषतः ये स्तम्भ जैन धर्म एवं बौद्ध धर्म के स्थलों पर होते थे। महाकूट का धर्म-स्तम्भ ऐसा ही एक धर्मस्तम्भ है।

(h) स्मृति स्तम्भ - किसी पारिवारिक या स्वजन संबंधी की स्मृति में लेख को उत्कीर्ण कर ऐसे स्तम्भ खड़े किए जाते थे।

(i) छाया स्तम्भ - ये स्तम्भ भी स्वगोत्री की स्मृति में बनाए जाते थे किन्तु इन पर मृतक व्यक्ति की छाया/आकृति उकेरी जाती थी।

(j) यूप-स्तम्भ - ये स्तम्भ यज्ञ में बलि चढ़ाने वाले पशुओं को बांधने के लिए बनाए जाते थे। इन पर भी लेख अंकित होते हैं।

2. मृण्मय - पाषाण के अलावा मिट्टी की ईंटों, मुहर-मुद्राएँ आदि भी प्राप्त होते हैं -

(a) ईंटों पर - कच्ची-पक्की दोनों प्रकार की ईंटों पर प्राचीन लेख अंकित किए हुए मिलते हैं। कुछ ईंटों पर ये लेख उकेरे गए होते हैं अथवा कुछ पर उभारे गए होते हैं। भारत में कुछ बौद्ध धर्म

के ग्रंथ ईंटों पर मिले हैं। दामामित्र और यशोवर्मन जैसे राजाओं के अश्वमेध संबंधी लेख भी प्राप्त होते हैं। इसके अलावा म.प्र. के अंगई खेड़ी से पुरातत्त्व खुदाई में प्राचीन नींव से प्राप्त एक ईंट पर 'तातिजसो इटाकु' प्राचीन ब्राह्मीलिपि में खुदा हुआ मिला है। यह लगभग ई.पू. प्रथम शती का अनुमानित है।

(b) घोंचे- ईंटों के अलावा मिट्टी के ढेलों पर भी लेख अंकित कर इन्हें अग्नि में पका लिया जाता था प्रायः ऐसे घोंचे धार्मिक मनौतियों के लिए बनाए जाते थे।

(c) मुहर-मुद्राएँ- तक्षशिला और नालन्दा की ऐतिहासिक पुरातत्त्व खुदाई में अनेक मुहर और मुद्राएँ प्राप्त हुई हैं, जिन पर लेख अंकित हैं।

(d) घाट- पुरातत्त्व खुदाई में ऐसे प्राचीन मृद्भाण्ड, घड़े या उनके ढक्कनों पर अंकित अभिलेख प्राप्त हुए हैं।

3. सीप-दाँतिकी- सीप, शंख, हाथीदाँत आदि की बनी मुद्राओं एवं लाट या स्तम्भों पर भी प्राचीन लेख प्राप्त हुए हैं जैसे- किरारी से प्राप्त काष्ठ स्तम्भ और भज की गुफा की छत्तों ~~पर~~ की काष्ठ महराबें।

4. ताम्रपत्र- भारत में उत्कीर्ण लेखों में ताम्र पत्र का सर्वाधिक उपयोग किया गया है। ताम्र धातु के पत्रों पर कई लेख प्राप्त होते हैं। इनका विवरण निम्न है-

ताम्र ~~पत्र~~ वस्तु
- पत्र रूप में
  - (a) ग्रंथ
  - (b) शासन
  - (c) प्रशस्ति
  - (d) यंत्र
- मूर्ति रूप में
- (e) अन्य

(a) ताम्र पत्र पर ग्रंथ उत्कीर्ण कराने का उल्लेख ह्वेनसांग ने भी किया है। उन्होंने कहा है कि कनिष्क ने बौद्ध धर्म के ग्रंथ ताम्र पत्र पर अंकित कराए थे। इसी प्रकार तिरुपति में तेलुगु भाषा में रचित 'तालपा कमवरी' भी ताम्र पत्र पर ही है।

(b) ताम्र पत्र पर प्राचीन काल में राज्यादेश भी लिखे जाते थे। अकबर और शाहजहाँ कालीन ऐसे अनेक ताम्र पत्रीय राज्यादेश प्राप्त हुए हैं।

(c) ताम्र पत्र पर प्रशस्तियाँ उत्कीर्ण करने के उल्लेख भी मिलते हैं।

(d) ताम्र पत्र पर अंकित अनेक यंत्र, अभिमंत्रित मंत्र आदि प्राचीन देवालयों और मंदिरों में देखने को मिलते हैं।

(e) ताम्र धातु की अन्य वस्तुओं में चमचे (तक्षशिला की खुदाई में), दीपक (जमालगढ़ में), कढ़ाही आदि भी सलेख प्राप्त हुए हैं। दक्षिण भारत से ऐसी अनेक घंटियाँ प्राप्त हुई हैं, जिन पर 10-11 वीं सदी के लेख उत्कीर्ण हैं।

5. स्वर्णपत्रीय- स्वर्ण धातु पर भी दो प्रकार की पाण्डुलिपियाँ मिलती हैं-

(a) स्वर्ण पत्र पर- स्वर्ण पत्र पर एक ग्रंथ ढाका (बांग्लादेश) के धामराह नाल से प्राप्त हुआ था, जो 2 पृ स्वर्ण पत्रों पर अंकित था। इसी प्रकार बौद्ध धारणी भी स्वर्ण पत्र पर अंकित भारत के बाहर मिली है। प्राचीन अभिमंत्रित मंत्र भी स्वर्ण पत्र पर अंकित मिले हैं। इनके अतिरिक्त अनेक राजपत्र और व्यापारिक पत्र भी मिले हैं।

(b) स्वर्ण निर्मित वस्तुओं पर- स्वर्ण पत्र के अतिरिक्त स्वर्ण निर्मित अनेक वस्तुओं जैसे प्याले, कटोरे, सुराही, लटकन, देव-पालकियों पर भी लेख मिलते हैं। ब्रिटिश museum में कुछ पाण्डुलिपियाँ यद्यपि लिखित तो ताम्र पत्र पर हैं किन्तु स्वर्ण द्वारा मंडित हैं।

⑥ रजतपत्रीय- स्वर्ण की तरह रजतपत्र पर भी अनेक प्रकार के अभिलेख मिलते हैं। इनमें तक्षशिला की खुदाई में प्राप्त सामग्री विशेष ध्यान देने योग्य है। वहाँ अभिलेख के अलावा प्याले, कटोरे, रकाबी, तश्तरियां आदि प्राप्त हुए हैं। सन् 78 ई. का एक रजत अभिलेख, जो तक्षशिला से प्राप्त हुआ है, कुण्डली आकार में प्राप्त हुआ है, भी उल्लेखनीय है।

⑦ अन्य धातुओं- इनके अतिरिक्त कांस्य, लौह, पीतल, पंचधातु या अष्टधातु निर्मित अनेक सलेख सामग्रियाँ प्राप्त हुई हैं। जैसे- लौह स्तम्भ (दिल्ली), लौह त्रिशूल (आबू)

प्रकार- 1. सामान्य से 6. इश्तहार
2. लिप्यासन के 7. स्याही
3. आकार 8. उपसंहार
4. लेखन शैली
5. चित्र सज्जा

Page No.
Date :

पाण्डुलिपि: प्रकार Summary

'पाण्डुलिपि' शब्द का अर्थ विस्तार हो जाने के कारण पाण्डुलिपि के अनेक प्रकार इसमें समाहित हो गए हैं। अनेक प्रकार के लिप्यासनों पर लिखित या कोरित लेख-चित्र आदि 'पाण्डुलिपि' में समावेशित हैं। इसलिए पाण्डुलिपि विज्ञान के सम्यग् ज्ञान हेतु इसके अनेक प्रकारों का ज्ञान भी आवश्यक है।
स्थूल रूप से पाण्डुलिपि के दो भेद किए जा सकते हैं-

पाण्डुलिपि
राजकीय — लौकिक
ग्रंथ, राज्यादेश, चिट्ठी-पत्र, कार्यवाही नत्थियाँ — ग्रंथ, अन्य

लिप्यासन के आधार पर भी पाण्डुलिपि के दो भेद होते हैं-

पाण्डुलिपि (लिप्यासन)

कठोर (उत्कीर्ण करने हेतु) — (लेखन हेतु) कोमल

1. पाषाणीय - चट्टानीय, शिलापट्टीय, स्तम्भीय, मूर्तीय, अन्य
2. मृण्मय - ईंट, ठीकरे, मुहर, घट
3. ताम्रपत्रीय - पत्र (ग्रंथ, राज्यादेश, प्रशस्ति, कवच), मूर्ति, अन्य
4. स्वर्ण पत्रीय - पत्र, अन्य
5. रजत पत्रीय
6. सीप वर्तिकी
7. अन्य

लिखित, शस्त्रादि कोरित
1. ताड़ पत्रीय
2. भोज पत्रीय
3. तूलिका सुगढ़ पत्रीय
4. वस्त्रीय
5. चर्म पत्रीय
6. काष्ठीय
7. कागजीय

1. चट्टानीय- पहाड़ों की चट्टान पर जो लेख उत्कीर्ण किए गए हैं, वे चट्टानीय पाण्डुलिपि कहे जाते हैं। जैसे सन् 1170 में दिगम्बर कृति 'उन्नत शिखर पुराण' एक चट्टान पर राजस्थान के भीलवाड़ा जिले के बिजौलिया गाँव में उत्कीर्ण किया गया है।

2. शिलापट्टीय- प्राचीनकाल में शिलापट्ट पर भी ग्रंथादि उत्कीर्ण करने की परंपरा थी। राणा कुम्भा के समय में मेवाड़ के कुम्भलगढ़ में कुंभि स्वामिन् या प्रासादेव के मंदिर में एक विस्तृत लेख 5 शिलापट्टों पर उत्कीर्ण है। मेवाड़ के ही राजसमुद्र तालाब की पुश्तों पर राजकवि रणछोड़ कृत 'राज प्रशस्ति' 24 खंडों में 24 शिलापट्ट पर उकेरे गए हैं। इसके अलावा कूर्मशतक भोज परमार कृत कूर्मशतक, मदन की पारिजात मंजरी आदि अनेक उदाहरण हैं।

3. स्तम्भीय- इनके कई प्रकार होते हैं। जैसे-(क) शिलास्तम्भ- सम्राट अशोक कालीन (272-232 ई.पू.) शिलास्तम्भ प्राचीनतम हैं। इन पर उत्कीर्ण लेख में इन्हें शिलास्तम्भ कहा गया है।
(ख) ध्वज स्तम्भ - ये प्रायः मंदिरों के सामने बनाए जाते थे। होलियो डोरस का गरुड़ ध्वज और दिल्ली में महरौली का विष्णु ध्वज प्रमुख उदाहरण है।
(ग) जय स्तम्भ - किसी युद्ध में विजेता राजा की प्रशस्ति इन स्तंभों पर उकेरी जाती है। जैसे- सम्राट समुद्रगुप्त का एरण और राजा यशोवर्मन का मंदसौर (MP) में जय स्तम्भ है।
(घ) धर्म स्तम्भ - ये स्तम्भ मंदिरों में बनाए जाते थे। जैसे- महाकूट का धर्म स्तम्भ
(ङ) वीर पुरुष स्तम्भ - युद्ध में अपार शौर्यपूर्ण कार्य करते हुए वीरगति को प्राप्त किसी सामान्य व्यक्ति की स्मृति में ये स्तंभ बनाए जाते थे। जैसे- कोरपूरची में
इनके अलावा कीर्ति स्तंभ, यूप स्तंभ, स्मृति स्तंभ, सती स्तंभ, पद्म स्तंभ आदि भी प्रकार होते हैं।

4. मृण्मय-(क) ईंट - कच्ची-पक्की दोनों प्रकार की ईंटों पर लेख प्राप्त होते हैं। बौद्ध धर्म ग्रंथ प्राचीन ईंटों पर उत्कीर्ण प्राप्त हुए हैं। इसके अलावा संगई खेड़ा (MP) से प्राप्त एक ईंट पर 'तातिजसो

इराकु' प्राचीन ब्राह्मी लिपि में अंकित प्राप्त हुआ है, जो लगभग पहली शती का अनुमानित है।

(ख) ठीकरे - पूर्वकाल में मिट्टी के टुकड़ों पर भी लेख अंकित कर उन्हें अग्नि में पक्का किया जाता था। ये प्रायः धार्मिक प्रतीतियों के लिए पकाए जाते थे।

(ग) मुहर-मुद्राएँ - मोहनजोदड़ो और नालन्दा की ऐतिहासिक खुदाई में ऐसी अनेक मुद्राएँ प्राप्त हुई हैं, जिन पर लेख अंकित हैं।

(घ) घट - प्राचीन मृद्भाण्ड, घड़े या ढक्कनों पर अभिलेख उत्कीर्ण किए हुए पुरातात्विक खुदाई में प्राप्त हुए हैं।

5. ताम्रपत्र - ताम्र (i) पत्र रूप में - ताम्र पत्रों पर ग्रंथ लिखने की परंपरा प्राचीन काल से रही है। कनिष्क ने बौद्ध धर्म ग्रंथों को ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण करवाया था, इसका उल्लेख त्सेनसांग ने किया है। अकबर और शाहजहाँ कालीन अनेक राज्यादेश ताम्रपत्र पर मिले हैं। प्रशस्तियाँ ताम्रपत्र पर उकेरने के उल्लेख मिलते हैं। यंत्र आदि ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण प्राचीन वैज्ञानिकों में आज भी देखे जा सकते हैं।

(ii) मूर्ति (iii) अन्य - तक्षशिला में चमचे, जमालगढ़ में दीपक, कड़ाही, और दक्षिण में अनेक घंटियाँ प्राप्त हुई हैं।

6. स्वर्णपत्र - (i) पत्र रूप में - एक ग्रंथ ढाका (BD) के धामदह ताल में 2 स्वर्ण पत्रों पर अंकित मिला है। इसके अलावा अनेक ग्रंथ, व्यापारिक-राजकीय पत्र, मंत्र आदि स्वर्ण पत्र पर उत्कीर्ण मिले हैं।

(ii) अन्य - पत्र के अलावा प्याले-कटोरे, सुराही, तलवार, पात्रकियों आदि सलेख मिली हैं।

7. रजत पत्र - रजत पत्र पट्ट के विषय में तक्षशिला की खुदाई में प्राप्त सामग्री विशेष ध्यान देने योग्य है। सन् 79 ई. में 2 उत्कीर्ण एक रजत अभिलेख तक्षशिला से कुंडली आकार में मिला है।

8. अन्य - अन्य धातुओं में लौह, पीतल, कांस्य, पंचधातु और अष्टधातु की अनेक वस्तुएँ सलेख प्राप्त होती हैं। जैसे - लौह स्तंभ (दिल्ली), लौह त्रिशूल (आबू)

कोमल लिप्यासन वाली पाण्डुलिपि के भी 2 प्रकार हैं, जिनके प्रतिभेद अनेक हो सकते हैं।

ताड़पत्रीय - ताड़ पत्र पर लेख लिखने की 2 विधि हैं, जिसके आधार पर इनके 2 भेद हो जाते हैं।

1. (i) लेखनी लिखित - (ii) धातु शलाका कोरित। पहले प्रकार के ताड़पत्र उत्तर में और दूसरे प्रकार के दक्षिण में होते हैं। पूर्वकाल में ताड़ पत्रों को पानी में उबालकर, शंख से घिसकर चिकना किया जाता था। फिर लौह की शलाका से कुरेदते हुए उस पर अक्षर लिखे जाते थे। फिर उस पर स्याही का लेपकर अक्षर उभारे जाते थे। इस प्रकार की पद्धति दक्षिण में प्रचलित थी। यद्यपि दक्षिण में ताड़पत्रों पर अधिक कार्य किया गया है किन्तु वहाँ की गर्म जलवायु के कारण ये जल्दी नष्ट हो जाते हैं। इसलिए वर्तमान में ठंडे जलवायु वाले उत्तर भारत के प्रदेश जैसे-कश्मीर, नेपाल, गुज. राज. आदि में ताड़ पत्र अधिक मिलते हैं।

ताड़पत्र पट्ट की प्राचीनतम कृति आचार्य रामेश्वर खजन कृत 'कुसुमांजलि टीका' और 'प्रबोधसिद्धि' नामक ग्रंथ की है जो लगभग पहली या दूसरी शती की अनुमानित है। नेपाल में भी स्कन्दपुराण (नवीं शती) और 906-7 ई. सन् में लिखी गई पंचरक्षा की प्रति सुरक्षित है। इनके अलावा जैसलमेर के संग्रह में तो ताड़पत्र बहुत है, जिनमें वि.सं. की 9वी, 10वी, और 11वी शती की प्रमुख हैं। खंभात, पाटन आदि में भी ताड़पत्र के बड़े भण्डार हैं।

2. भोजपत्रीय - भूर्ज धातु के वृक्ष की छाल पर लिखी रचनाएँ भोजपत्रीय रचनाएँ कही जाती हैं। इनका

चलन उत्तर भारत में ज्यादा था। 'धम्मपद' ग्रंथ का कुछ अंश, जो खोतान में प्राप्त हुआ था, वह प्राचीनतम भोज पत्रीय रचना है। इसके अलावा जयपुर, जोधपुर आदि में भी संग्रह है।

3. अगरु पत्रीय – पूर्वी भारत के आसाम वगैरह प्रदेशों में अगरु वृक्ष की छाल पर लेखन प्रचलित था। अगरु वृक्ष की छाल पर माहीमाइ घिसकर उसे चिकना किया जाता था। फिर उसपर कृमि-नाशक हरताल (पीले) रंग देते थे। धूप में सूखने के बाद ये पत्र चिकने और मुलायम हो जाते हैं, जिससे ये दीर्घायु भी होते हैं।

कामरूप के राजा भास्कर वर्मा ने हर्षवर्धन राजा को अगरु पत्र पर लिखे ग्रंथ भेंट स्वरूप भेजे थे, ऐसा उल्लेख बाणभट्ट ने हर्षचरित में किया है।

4. पटीय – कपड़ों पर लेखन और चित्रण करने की परंपरा भी बहुत प्राचीन है। अधिकतर सूती कपड़ों का प्रयोग किया जाता था। सूती कपड़ों के छिद्र भरने के लिए आरा, चावल का मांड, मोमा, व्हाई आदि का उपयोग किया जाता था। फिर उस पर पत्थर, आकीक, कसौटी पत्थर, शंख आदि घिसकर उसे चिकना कर उस पर लेखन या चित्रांकन करते थे। जैन सम्प्रदायवंती उस पर अढाई द्वीप, जंबूद्वीप, स्वप्न आदि के चित्र बनाते थे। धीरे-धीरे मंदिरों में भगवान के पीछे दीवार पर लटकाने के लिए चित्र बनना भी शुरू हुए। इन्हें पिछवाई कहा जाता है। राजस्थान में पिछवाई बनवाने का केंद्र नाथद्वारा रहा है। यहाँ श्रीनाथजी की पिछवाई बनाई जाती थी। सन् 1711 से 1736 वि.सं. के बीच में लिखी रामसिंह महाराजा की के पुत्र कृष्णसिंह की जन्मपत्री 48 फीट लम्बी और 12 इंच चौड़ी सुरक्षित है। इसके अलावा जैन लोग पर्यूषण पर्व में क्षमापना के पत्र भी कपड़ों पर लिखवाते थे। इन्हें 'विज्ञप्ति पत्र' कहा जाता है।

5. चर्म पत्रीय – चर्म पत्र का उपयोग भारत में धार्मिक कारणों से बहुत कम हुआ है। किन्तु जैसलमेर के संग्रह में कुछ चर्मपत्र मिले हैं, जिससे अनुमान किया जा सकता है कि चर्मपत्र भारत में भी उपयोग किए जाते थे। अलबत्त जिल्द चढ़ाने या सुरक्षा के लिए चर्म का ही व्यापक उपयोग किया जाता था।

अरब, यूनान, यूरोप आदि देशों में चर्म पत्र (पार्चमेन्ट) का उपयोग बहुत प्राचीन काल से किया जाता है। कहीं-कहीं भेड़ के चर्म के उपयोग के उल्लेख मिलते हैं। 11वीं शती तक चर्म पत्रों पर मुसलमानों की पवित्र कुरान की अनेक प्रतिलिपियां तैयार की गई थी।

6. काष्ठीय – काष्ठ – लकड़ी पर भी लेखन और चित्रांकन किया गया है। चित्रकला के उपादानों में काष्ठ ही सबसे टिकाऊ और सबसे ज्यादा समय तक चमकीला रहता है। काष्ठ पर खड़िया या मुलतानी मिट्टी पोत कर उस पर कार्य करते थे।

काष्ठ का

सं. 1129 में नेमिचंद्र सू.म. ने उत्तराध्ययन सूत्र पर टीका की रचना की है। उस टीका में उल्लेख है। कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य म. और कुमारपाल महाराजा का संवाद तथा कलिकालाचार्य आदि के चित्र काष्ठ पर अंकित प्राप्त होते हैं। वादिदेव सूरि म. – कुमुदचंद्र के वाद के चित्र भी मिले हैं।

खोतान में खरोष्ठी लिपि में लिखित काष्ठीय पाण्डुलिपि प्रायः प्राचीनतम है।

7. कागज़ीय – कागज बनाने का सर्वप्रथम प्रयास 105 ई. सन् में चीन में हुआ था। सिकंदर

ई के
महान् के भारत आक्रमण के समय में कागज़ के उपयोग के उल्लेख मिलते हैं।

भारत में अहमदाबाद, दौलताबाद, पटना, कानपुर, में प्राचीन उद्योग हैं, जहाँ कागज के अनेक प्रकार और रंगों में तैयार होते हैं।

सं. ११४१ में लिखित भागवत पुराण वाराणसी में और सं. १२०८ में लिखित आनंदवर्धन कृत देवन्यात्लोक टीका, जोधपुर में सुरक्षित है।

आकार के आधार पर पाण्डुलिपि के ५ भेद मुनि पुण्यविजयजी ने इस प्रकार बताएँ हैं -

1. गण्डी - ये पाण्डुलिपि ताड़पत्रीय, लम्बाई-चौड़ाई में समान और बहुत लंबी होती हैं।
2. कच्छपी - ये पाण्डुलिपि कछुए के आकार की, किनारे पर संकरी और बीच में चौड़ी होती है।
3. मुष्टी - ४ अंगुल के माप की पाण्डुलिपि, जो मुट्ठी में पकड़ी जा सकती है, इसे मुष्टी कहते हैं।
4. सम्पुट फलक - सचित्र काष्ठफलक पर ~~अंकित~~ लिखित लेख को, सम्पुट फलक कहा जाता है।
5. छेदपाटी - ये पाण्डुलिपि लम्बी-चौड़ी किन्तु संख्या में कम पन्नों वाली होती हैं।

लेखन शैली के आधार पर पाण्डुलिपि के ३ भेद किए हैं -

1. त्रिपाट - जो पाण्डुलिपि, तीन भाग में लिखी गई हो, उसे त्रिपाट कहते हैं। बीच में मूल पाठ या ग्रंथ ~~असंख्य~~ दो भागों में छोटे अक्षरों में टीका या अर्थ या खंडा लिखा जाता है।
2. पंचपाट - त्रिपाट के अलावा आजु-बाजु के हाशिए में भी जिस पाण्डुलिपि में कुछ लिखा हो, वह ऊपर-नीचे पंच भागों के कारण पंचपाट कही जाती है।
3. शूंड - इस प्रकार की पाण्डुलिपि में लिपिक ऊपर बड़ी पंक्ति में लिखना शुरू कर, पंक्ति क्रमशः छोटी-छोटी कर, जब सबसे नीचे सबसे छोटी पंक्ति लिखता है, तब पूरे पृष्ठ का आकार हाथी की सूंड जैसा लगता है। इस प्रकार की पाण्डुलिपि उपलब्ध नहीं है किन्तु उल्लेख मिलते हैं।

चित्र - सज्जा के आधार पर भी पाण्डुलिपि के भेद किए जा सकते हैं। चित्रांकन पाण्डुलिपि में दो कारण से किया जाता है - १. साज-सज्जा हेतु २. संदर्भगत उपयोग हेतु। ये चित्र भी एक ही रंग में या अनेक विविध रंगों में प्राप्त होते हैं।

जैन अतावलंबियों की पाण्डुलिपि में कल्पसूत्र, कालकाचार्य आदि के चित्र बनाने की प्राचीन परंपरा रही है। ये चित्र अपनी प्राथमिक अवस्था के प्रतीत होने से इन्हें 'अपभ्रंश शैली' नाम दिया गया। अकबर राजा के काल तक 'राजस्थान शैली' और 'मुगल शैली' भी अपने अस्तित्व में आ चुकी थी।

चित्रकला का विकास ११वीं से १६वीं शताब्दी के बीच अधिक हुआ। ११वीं शती की हस्तलेखों में पशु-पक्षियों आदि के चित्र विशेष देखे गए हैं। १३वीं शती की पाण्डुलिपियों में देवताओं के चित्र अधिक देखे जाते हैं।

अक्षरों के आधार पर भी पाण्डुलिपि के २ भेद किए जा सकते हैं - १. सूक्ष्म अक्षरीय २. स्थूल अक्षरी

इस प्रकार किसी भी प्रकार के लिप्यासन पर लिखित हस्तलेख पाण्डुलिपि की श्रेणी में आ जाते हैं। यहाँ पाण्डुलिपि के प्रकारों का सामान्य चित्रण प्रस्तुत है।

सूक्ष्म अक्षर वाली पाण्डुलिपि में अधिक पदार्थ लिखने की कोशिश की जाती है, किन्तु ये इन्हें पढ़ने के लिए अतिरिक्त शीशे की जरूर होती है।
स्थूलाक्षरी पाण्डुलिपि में मोटे या बड़े अक्षर होने से मंद दृष्टि पाठकों को सुविधाजनक रहती है।

स्याही के आधार पर भी पाण्डुलिपि के भेद संभव है। सामान्यतः पाण्डुलिपि काली स्याही से लिखी जाती है। किन्तु कोई-कोई पाण्डुलिपि में सुवर्ण, रजत, प्याल (रक्त), पीले रंग की स्याही के प्रयोग भी देखे हैं।

पाठालोचन : Summary

1. प्रस्तावना

जब हमें एक ही ग्रंथ की अनेक पाण्डुलिपियाँ प्राप्त होती हैं और उनमें पाठान्तर भेद रहते हैं, तब उस ग्रंथ के संशोधक या संपादक के सामने अनेक समस्याएँ खड़ी होती है। वह दुविधा में पड़ जाता है कि किस पाठ को सही माने या प्रामाणिक माने। इस समस्या के समाधान के लिए पाठालोचन विज्ञान का ही सहारा लेना पड़ता है। इसलिए 'पाठालोचन विज्ञान' आज 'भाषाविज्ञान' जितना ही महत्त्वपूर्ण विषय बन गया है।

2. मूलपाठ का महत्त्व

मूल लेखक-ग्रंथकार द्वारा लिखी गई जो हस्तप्रति होती है, वह मूल पाठ कहा जाता है। यह मूलपाठ अत्यन्त उपयोगी होता है, इसलिए विशेष सुरक्षा इसे अपेक्षित है। मूल पाठ के उपयोग को निम्न सात बिन्दुओं से समझा जा सकता है -

1. मूलपाठ से लेखक की लेखन शैली का पता चलती है।
2. मूलपाठ से लेखक के शब्द-भण्डार का ज्ञान होता है।
3. मूलपाठ से तत्कालीन स्थिति और अभ्यास आदि की विशेष जानकारी मिलती है।
4. मूलपाठ से लेखक के जीवन का, काल का परिचय भी होता है।
5. मूलपाठ से कई ऐतिहासिक तथ्यों का ज्ञान होता है, जैसे - कागज, स्याही, सुरक्षा के उपाय, हस्ताल आदि का उपयोग। 6. मूलपाठ ग्रंथ संपादन में आदर्श होता है।

इन कारणों से पाठालोचन का ध्येय मूलपाठ को खोजना ही है।

3. विकार-मूल के कारण

पूर्वकाल में जब छापाखाने नहीं थे, तब ग्रंथ की प्रतिलिपियाँ लिपिक द्वारा तैयार कराकर अभ्यासुओं को दी जाती थी। इससे लिपिक की समस्त अयोग्यताओं के कारण मूलपाठ में अनेक विकार उत्पन्न हो जाते हैं। जैसे - किसी लिपिक का सुलेख अच्छा नहीं होता है, तो किसी लिपिक का शब्द कोश ज्ञान सीमित होता है, कोई लिपिक ग्रंथ के विषय से ही अपरिचित होता है। ये विकार 3 कारण से उत्पन्न होते हैं -

1. प्रमादवश - कभी-कभी लिपिक प्रमाद वश कुछ-का कुछ पढ़कर लिख देता है, जिससे अनेक विकार मूल उत्पन्न होती है।
2. काल्पनिक (भ्रम) - लिपिक मूल-पाठ या अन्य प्रति में पढ़कर ही लिखता है किन्तु कभी-कभी

३८०

बिंदु, चन्द्रबिंदु, अनुस्वार और ह्रस्व-गुरु मात्राओं की भूल तो होती ही रहती है।

Page No.
Date :

पढ़ने में उसे भ्रम हो जाता है, जिससे परिणाम गलती हो जाती है। जैसे - मूलपाठ में लिखा हुआ 'राम' कोई 'राय', 'सच' आदि पढ़ सकता है।

2. छूट-भूल एवं आगम - यद्यपि लिपिक पूरी अप्रमत्तता से सावधानी पूर्वक लिखता है किन्तु, मन में वह पाठ पूरा भी बोलता है किन्तु लिखने में कभी-कभी कोई अक्षर / शब्द रह जाता है (एक अक्षर को छूटना) अथवा कोई शब्द दो बार आ जाता है। कभी-कभी वह पूरी पंक्ति ही भूल जाता है। फिर उस छूटे हुए अक्षर या शब्द की जगह दूसरा व्यक्ति कमी अनुभव करता है तो पूर्ण करने के लिए स्वयं के मन से कोई भी शब्द लिख देता है। इस प्रकार कभी-कभी कोई लिपिक मूल लेखक से स्वयं को ज्यादा योग्य मानता है और रचना के अक्षर या शब्द स्वयं की अज्ञानता के कारण बदल देता है। जैसे - 'आखत तवे' को 'आख तवे' और 'आँख तवे' करना।

इन सब कारणों से मूल पाठ में अनेक विकार उत्पन्न होते हैं और विकारों की परंपरा चलती है।

5. वंशवृक्ष

पाण्डुलिपि लेखन करने वाले प्रत्येक लिपिकर्ता की लेखन शैली अलग-अलग होती है। जैसे- कोई शिरोरेखा लगाते हैं, कोई नहीं लगाते; कोई प और य में स्पष्ट अंतर नहीं करते; कोई र और व को पास-पास लिखते हैं, जिससे वह द्वरेख लगता है आदि। इस प्रकार प्रत्येक लिपिक की स्वयं की कुछ विशेषताएँ होती हैं। इन विशेषताओं के कारण ही एक मूलपाठ से जितनी पाण्डुलिपि तैयार की जाए, वे प्रथम संतानीय पाण्डुलिपियाँ भी परस्पर भिन्न-होंगी। यहाँ तक की कभी-कभी तो एक ही लिपिक की दो पाण्डुलिपि भिन्न होती हैं। फिर उन प्रथम संतानीय पाण्डुलिपि से तैयार की गई अन्य द्वा पाण्डुलिपि भी भिन्न होंगी। जैसे -

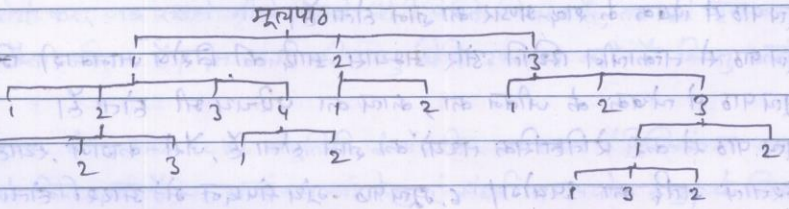

6. पाठालोचन की आवश्यकता

इस प्रकार ऊपर के रेखाचित्र जैसे पाण्डुलिपियों का वंशवृक्ष तैयार होता है। पाठालोचन विज्ञान का ध्येय, मूलपाठ की खोज, इसी प्रकार वंशवृक्ष बनाने से प्राप्त होता है। प्रत्येक ग्रंथ की जितनी भी प्रतियाँ प्राप्त हो, उनका अध्ययन, विश्लेषण, संशोधन कर वंशवृक्ष तैयार कर, प्रामाणिक मूल पाठ को खोजना यही पाठालोचन विज्ञान का विषय है। यही आवश्यकता है।

4. समस्याएँ

लिपिक की अयोग्यताओं और अ विशेषताओं के कारण निम्न लिखित समस्याएँ उत्पन्न होती हैं

क्षेपक: पाण्डुलिपि के मूलपाठ में जो शब्द / अक्षर आदि न हो, वे भी प्रक्षिप्तांश जुड़ते जाते हैं, जिससे हम मूल लेखक या ग्रंथ के भाव तक नहीं पहुँच सकते। कहा जाता है कि महाभारत और पृथ्वी राजरासो अपने आप में लघु काव्य ही थे, किन्तु प्रक्षिप्तांशों के कारण वे महाकाव्य बन गए।

2. छूट-भूल - पाण्डुलिपि में कई अक्षर, शब्द यहाँ तक की पंक्तियाँ भी छूट जाती हैं, जिससे हम सही

पाठालोचन में दो सारणियों का उपयोग होता है -1. वैज्ञानिक संपादन 2. साहित्यिक संपादन। वैज्ञानिक संपादन शब्द को और साहित्यिक संपादन अर्थ को महत्त्व देता है। अर्थ को मूलतः ग्रहण किए बिना काव्यों का संपादन निश्चिन्त नहीं है। इसलिए पाठालोचन विज्ञान में शब्द और अर्थ का भी महत्त्व स्वीकारना पड़ेगा। 9/8/2

Page No.
Date :

अन्तर्य तक नहीं पहुँच सकते।

3. अप्रामाणिक रचनाएँ - कभी-कभी कोई श्रद्धालु या लेखक के शिष्य द्वारा लिखी गई पूरी-की-पूरी रचना ही अप्रामाणिक होती है अर्थात् वह जिसके नाम से लिखी गई है, उसकी नहीं होती है। पाण्डुलिपि वैज्ञानिक को ऐसी रचनाएँ भी निकालकर अलग करना होती है। इन भूलों में, त्रुटियों के अध्ययन के बिना से वंशवृक्ष तैयार किया जाता है।

7. पाठालोचन प्रणालियाँ

पाठालोचन की तीन प्रणालियाँ हैं - 1. स्वेच्छया पाठ निर्धारण प्रणाली - इस प्रणाली में संपादक को प्राप्त हुई एक ही प्रति को प्रामाणिक मानकर ग्रंथ का संपादन कर देता है।

2. तुलनात्मक प्रणाली - पुस्तक का संपादन करते समय संपादक इस प्रणाली में 2 या अधिक प्रति की तुलना करता है। उसमें से जो प्रति उसे स्वेच्छया अच्छी लगती है, उसे प्रामाणिक मानकर संपादन करता है।

3. वैज्ञानिक प्रणाली - इस प्रणाली में कई हस्तलेखों की तुलनात्मक आधार पर साम्य-वैषम्य का अध्ययनकर, वंशवृक्ष बनाकर, मूलपाठ को शोध कर, उसका संपादन करता है।

8. पाठालोचन प्रक्रिया

पाठालोचन की प्रक्रिया को निम्न बिंदुओं से संक्षेप में समझा जा सकता है -

1. ग्रंथ संग्रह - पुस्तक के पाठालोचन के पूर्व उस ग्रंथ संबंधी जितनी प्रकाशित या अप्रकाशित पाण्डुलिपियाँ, या पाण्डुलिपि न मिलने पर उसकी फोटोकॉपी आदि सामग्री, जितनी ज्यादा हो सके उतनी ज्यादा संग्रह करे।

2. सभी ग्रंथों को कालक्रमानुसार लगा लेना चाहिए और कुछ संकेत नाम देना भी चाहिए, जिससे समय और परिश्रम की बचत हो सके। ग्रंथ का नाम-संकेत देने की अनेक प्रणाली है। जैसे-

(क) क्रमांक प्रणाली - सभी ग्रंथों को सूचीबद्ध कर, क्रमांक दिया जाता है। जैसे- (1) जयपुर वाली प्रति (2) जैसलमेर...

(ख) लिपिकार प्रणाली - ग्रंथकर्ता लिपिकर्ता के नाम के प्रथम अक्षर को संकेत बना सकते हैं।

(ग) स्थानसंकेत " - ग्रंथ प्रति की रचना का स्थान हो, तो उसका...।

(घ) पाठ साम्य समूह प्रणाली - सभी ग्रंथों का पाठ साम्य के आधार पर वर्गीकरण किया जा सकता है। मान लें 3 समूह बने - उनमें प्रथम में 5, द्वितीय में 3, तृतीय में 2 ग्रंथ है। इनके नाम प्र. 2, द्वि. 1, तृ. 4 आदि। प्रति के उल्लेख के साथ उसका परिचय भी देना चाहिए जैसे- वह प्रति किसके पास है, प्रति की स्थिति, पृष्ठ संख्या, रचना काल, स्याही, आकार आदि।

3. तुलना - प्रतियाँ तैयार होने के बाद इन प्रतियों के संकेत के आधार पर पाठान्तर, चरण, छंद, वर्तनी आदि की सूची बना लेना चाहिए। इसी प्रकार आगम-लोप की सूची भी बना लेना चाहिए।

4. इस प्रकार प्रतिलिपि संबंध, प्रक्षेप संबंध और पाठान्तर संबंध की दृष्टि से वंशवृक्ष तैयार कर मूलपाठ का निर्धारण करना चाहिए।

9. बाह्य-अंतरंग साक्ष्य

मूलपाठ के निर्धारण के बाद भी उसे प्रामाणिक नहीं मानना चाहिए। पूर्णतः प्रामाणिक मानने के लिए समस्त बाह्य एवं अन्तरंग साक्ष्यों से पाठ निर्णय करना चाहिए। मूलपाठ के संदिग्ध स्थलों के शब्दों

तोर संवत् का उल्लेख - रामगढ़वी (भुज्जमेर) से प्राप्त शिलालेख पर तोर वंश का उल्लेख है।

Date :

ज्यादा प्रचलित है।

इस प्रकार ईसवी, वि.सं. और शक सं. और वी.सं. का समीकरण

वीरसं.	~~विक्रम~~ ई.सन्	वि.सं.	शकसं.
~~—~~ 527	0	57	~~—~~ -78 ~~+92~~

इन सभी संवत् के अलावा और भी अनेक स्वतंत्र संवत् हैं।

वस्तुतः जब कोई भी पाण्डुलिपि को काल की दृष्टि से 2 वर्गों में बाँटा जाता है - 1. जिसमें काल-संकेत हो, वह पाण्डुलिपि 2. जिसमें काल संकेत न हो।

3. काल संकेत वाले लेख की पद्धति

इन दो प्रकार के वर्गों में से पहले प्रकार में काल-संकेत के 4 प्रकार होते हैं -

1. गत संवत् का उल्लेख

राज्यारोहण के काल का आधार - इसे हम राज्य वर्ष नाम भी दे सकते हैं। इस प्रकार के उल्लेख हमें अशोक और गुप्तों के शिलालेखों में मिलते हैं। इसके बाद शातवाहन, महाराष्ट्र के क्षहरात और उज्जयिनी के महाक्षत्रपों के शिलालेखों में विस्तार मिलता है।

2. नियमित या शक संवत् का उल्लेख - शक संवत् 500 को दक्षिण और उत्तर, सभी जगह लोकप्रिय होने से नियमित संवत् के नाम से भी प्रख्यात हुआ था।

3. समकालीन संदर्भों के आधार - जिन लेखों में राज्यारोहण वर्ष या नियमित संवत् का उल्लेख नहीं होता, उन लेखों में इस पद्धति का सहारा लिया जाता है। इस पद्धति में उल्लेख में आए हुए समकालीन व्यक्तियों, शासकों आदि के आधार पर काल निर्णय किया जाता है। जैसे- अशोक के 13वें शिलालेख में यूनानी राजा अंतियोकस-2 (ई.पू. 261-41 तक पश्चिम एशिया के शासक) और उसी समकालीन अफ्रीका के शासक टॉलेमी (ई.पू. 282-40) का उल्लेख है। इन संदर्भों के आधार अशोक का राज्यारोहण वर्ष ई.पू. 270 निकाला गया।

किन्तु इस पद्धति में पाठ पढ़ने में भूल होने से भयंकर गलती हो सकती है। जैसे - मौर्य संवत् की कल्पना।

4. अंतरंग साक्ष्य - जब कोई समकालीन संदर्भ भी न हो, तब रचना के वर्ण्य-विषय में मिलनेवाले उन संकेतों का आधार लेना होता है, जिनमें किसी-न-किसी प्रकार काल-संकेत की क्षमता हो। इस पद्धति में मुख्यतः रचनाकार किस-बात से परिचित या अपरिचित थे, इसके आधार पर काल निर्णय किया जाता है। जैसे- पाणिनी की अष्टाध्यायी- इसमें कहीं भी काल संकेत प्राप्त नहीं होता किन्तु वे बुद्ध से अपरिचित थे, यवन के बाद हुए आदि संदर्भों से कई विद्वानों ने अलग-अलग अनुमान किए हैं। कोई 1000 ई.पू. तो कोई 7-8वीं शती ई.पू. का मानता है।

5. उक्ति पद्धति - प्रायः 18वीं शती के बाद की कृतियों में यह पद्धति देखी जाती है। कभी कभी ग्रंथकार काव्यकौशल, अनोखापन या चमत्कार दिखाने की कोशिश करता है, जिसके द्वारा वह काल संकेत भी देता है। जैसे- संवत सत्रह सै सतरह दस, अति दिन तिथि रजनीस तेइ रस; माघ पुनीत सकर गत भानू, उदित पक्ष ऋतु शिशिर समानू। अर्थात् वि.सं. 1726, दिन-कवि (शुक्र), तिथि-रजनीस (चंद्र-1) तेइ (10) + रस (6) = 11 (एकादशी), महिना - माघ, उदित (कृष्ण) पक्ष, भकर राशि सूर्य, शिशिर ऋतु।

के बावजूद

कई लेखों में उपर्युक्त 4 प्रकार के काल संकेत होने पर काल-निर्णय करने में बहुत समस्याएँ

Page No.
Date :

काल संकेत की समस्याएँ

आती है।

1. पाठ-भेद - एक ही ग्रंथ की अनेक प्रतियों में काल विषयक पाठ भेद हो, तब काल-निर्णय नहीं किया जा सकता। जैसे- 'बीसलदेव रासो' की 5 प्रतियों में पाठ भेद से अलग-अलग विद्वान भिन्न-भिन्न काल मानते हैं। कोई 1212, 1272, 1077, 1377, 1309 आदि अलग-अलग मत हैं।

2. पाठ दोष - पाठ दोष यानि भ्रान्त पठन। भ्रान्त पठन के कारण साठ का आठ या चालीस का बालीस भी पढ़ा जा सकता है। कभी-कभी तो इतनी विकृति आ जाती है कि मूल की कल्पना भी दुष्कर हो जाती है।

3. तिथि सन्-संवत् का उल्लेख - जब किसी ग्रंथ में सामान्य परंपरा से हटकर रचनाकार एकाधिक संवतों का उल्लेख करता है, तब भी समस्या खड़ी हो जाती है। जैसे-

सोमत सत्रह से ऐकानवे होई, एगारह सै सन पैंतालीस सोई।

इस रचना में संवत् 1791 और सन् 1145 लिखा है, जो हमारी वर्तमान के समन्वय से को बिल्कुल गलत साबित करता है।

4. यह जानना भी कठिन है कि जिस संवत् का उल्लेख किया है वह चैत्रादि, अषाढ़ादि, श्रावणादि या कार्तिकादि है। और वह पूर्णिमान्त है या अमान्त।

5. वर्ष कभी गत, विगत या अतीत रूप में भी लिखे जाते हैं।

6. कभी तिथि की गणना में लेखक से भूल हो जाती है।

7. शब्दों में काल संख्या देना - किसी शब्द से दो संख्याएँ प्राप्त होती हैं, तो वहाँ कौनसी संख्या सही मानना, इसकी समस्या खड़ी होती है। जैसे- सागर शब्द से 4 और 7, दो संख्याएँ आती हैं। जगदुत्पत्ति कवि की कृति 'इद्दत चमत्कार' में रचनाकाल 'अष्ट सागर पयोनिधि चन्द्र' लिखा है। यहाँ पर सागर और पयोनिधि का अर्थ 4 लेना है या 7, यह समस्या है। इस पद से इतने संवत् बन सकते हैं - 1448, 1748, 1778, 1478 यद्यपि इनमें कुछ समस्याओं का समाधान पाठालोचन से हो सकता है किन्तु कभी-कभी तो पाठालोचन के विद्वान भी निर्णय लेने में असमर्थ होते हैं।

संकेत रहित

जिन लेखों में किसी भी प्रकार से कोई काल संकेत नहीं होता, इनमें काल निर्णय करने के लिए 3 पद्धतियाँ हैं -

बाह्य साक्ष्य

1. बाह्य साक्ष्य - इस पद्धति में प्रस्तुत रचना का अन्य ग्रंथ/रचनाओं के साथ तुलनात्मक अध्ययन निम्नलिखित 4 प्रकारों से किया जाता है -

(क) बाह्य उल्लेख - प्रस्तुत ग्रंथ का अन्य कोई रचना में उल्लेख हो, तो उससे काल की निचली सीमा मिल जाती है। जैसे- नाभादास कृत भक्तमाल में संत-भक्तों का उल्लेख है, अतः वे संत-भक्त भक्तमाल के समकालीन और या पूर्व में ही होंगे।

(ख) लोकानुश्रुतियाँ - रचनाकार विषयक लोकानुश्रुतियों में भी कभी-कभी खोई हुई कड़ी मिल जाती है।

(ग) ऐतिहासिक घटनाक्रम - प्रस्तुत ग्रंथ में कोई घटना का उल्लेख हो और अन्य ग्रंथ में भी उसी घटना का उल्लेख हो, तो वह भी काल निर्णय में सहायक होता है। ऐतिहासिक घटनाक्रम के आधार पर ही 'काव्यालंकार सूत्र' के रचयिता वामन का काल 800 निर्धारित किया गया है।

(घ) सामाजिक परिस्थिति एवं सांस्कृतिक परिवेश- अंतरंग साक्ष्य से प्राप्त सामाजिक एवं सांस्कृतिक सामग्री का बाह्य साक्ष्य से मिलान कर काल निर्णय में सहायता ली जा सकती है। जैसे- 'वसन्त विलास' नामक रचना में जैसा जीवन चित्र का वर्णन किया गया है, वैसा जीवन भारत में इस्लामी शासन के स्थापित होने पर समाप्त हो गया था। अतः रचना अधिकतम 12वीं शती या 13वीं शती के मध्य तक की हो सकती है। ~~इसी प्रकार~~

ये बाह्य साक्ष्य काल संकेत दे सकते हैं किन्तु हमें पहले इनकी प्रामाणिकता पर विचार कर लेना चाहिए क्योंकि वह पाठ क्षेपक या अप्रामाणिक भी हो सकता है। जैसे- वेणीमाधवदास के 'मूलगुंसाई चरित' से महात्मा तुलसी के काल की प्रामाणिक सूचना मिलने की उम्मीद थी किन्तु बाद में वह पूरी कृति ही अप्रामाणिक निकली। ऐसे ही महात्मा तुलसीदास और मीरा के संबंधों में पत्र लिखने वाली लोकानुश्रुति भी ऐतिहासिक प्रमाणों से गलत सिद्ध हो गई। अतः बाह्य साक्ष्य से काल संकेत लेने के बाद भी अंतरंग साक्ष्यों से प्रमाण लेना चाहिए।

6. अंतरंग साक्ष्य

2. अंतरंग साक्ष्य- प्रस्तुत ग्रंथ की सामग्री से ही काल संकेत निकालना। इसमें दो पक्ष होते हैं-

(क) स्थूल पक्ष- लेखन की लिपि, स्याही आदि भौतिक वस्तुओं का अध्ययन करना। इसमें अनेक भेद होते हैं, हम कुछ भेद पर प्रकाश डालेंगे-

(i) लिपि- लिपि के प्रकारों का लेखन के विविध युगों से संबंध है। जैसे- ई.पू. 3000 तक ईंटों पर, फिर बेनारस के खरड़ों पर, ई.पू. 1000 से 800 तक Codex या चर्म पुस्तक का युग माना जाता है। ई.पू. 105 ई.सन् से कागज युग का प्रारंभ हुआ। कागज भी यदि देशी है तो प्रायः 12वीं शती पूर्व का और मिल का बना हुआ है उसके बाद का हो सकता है।

(ii) स्याही- वैज्ञानिक विधि से स्याही के रंग काल का संकेत प्राप्त किया जा सकता है।

(iii) लिपि- लिपि एक विकासात्मक प्रक्रिया है। लेखक ने लिपि के रूप और अक्षर कैसे लिखे हैं, उसके आधार पर भी काल संकेत प्राप्त होता है। अक्षर का एक विशेष रूप एक काल सीमा तक चलता है। ~~अक्षर~~

एक सी लिपि की दो पाण्डुलिपियों की तुलना से भी एक के आधार पर दूसरी पाण्डुलिपि के काल का ज्ञान किया जा सकता है। 'राउलवेल' नामक रचना का काल इसी पद्धति से 'कुर्मशतक' के शिलालेख के समान 11वीं शती ई. अनुमानित किया है।

(iv) लेखन शैली- लिखने की पद्धति, प्रतीक चिह्न, संकेताक्षर, मांगलिक चिह्नों का अंकन आदि सभी काल सापेक्ष है। जैसे- संवत्सर के लिए स, सम्, सव, संवत् संकेताक्षरों का प्रयोग ईसा पूर्व 5वीं शती के बाद नहीं मिलता।

(ख) सूक्ष्म पक्ष- इसमें रचना के विषय का अध्ययन किया जाता है। इनमें कुछ अनेक बातों का सहयोग लिया जाता है। ~~जो निम्न हैं~~- उनमें से यहाँ एक उदाहरण है।

(i) विषय- इस साक्ष्य में ग्रंथ के विषयवस्तु संबंधी बातें आती हैं। जैसे- 'नाट्यशास्त्र' में 4 अलंकारों का ही जिक्र होने से इसे 300 ई. से पहले की रचना माना है।

(ii) भाषा- भाषा भी कालानुसार रूप परिवर्तन आदि को प्राप्त कर आगे बढ़ती है। उसे भी शब्द रूप, शब्द प्रयोग

2. यौगिक – जब एक से अधिक रूढ़ शब्द परस्पर मिलकर किसी विशिष्ट अर्थ को द्योतित करते हैं तब उन्हें यौगिक शब्द कहते हैं। जैसे- 'विद्या' 'वंद्य' दोनों शब्द रूढ़ हैं और मिलकर 'विद्यावत्व' विशिष्ट अर्थ को बताता है।

3. योगरूढ़ – यौगिक शब्दों के साथ भी जब कोई अर्थ रूढ़ हो जाए, उसे योगरूढ़ शब्द कहते हैं। eg. 'जलज' शब्द का अर्थ पानी में उत्पन्न होने वाला' होता है। किन्तु इस अर्थ से कमल, मछली, मोती, सीप आदि भी संकेतित होते हैं किन्तु 'जलज' शब्द के साथ 'कमल' अर्थ रूढ़ हो चुका है। अतः यह 'योगरूढ़' कहलाता है।

3. शब्द रूप

ग्रंथ रचना में 'शब्द रूप' ही उपयोगी होते हैं। अर्थ का आधार शब्द रूप ही है। 'शब्द रूप' का आधार 'अक्षर योग' है। अक्षरावली एक होने के बावजूद भिन्न शब्द रूप बनाने से अर्थ भिन्नता उत्पन्न होती है। जैसे- भानुस हों तो = यदि मैं मनुष्य होऊँ तो
भानु सहों तो = यदि मैं मान सहूँ सहन करूँ तो
अतः यह निश्चित है कि अर्थ ग्रहण शब्द रूप से होता है।

4. शब्द समस्या

पाण्डुलिपि के प्राप्त होने पर ~~सर्वप्रथम~~ उसकी भाषा और लिपि को समझने के बाद शब्द और अर्थ की समस्या आती है।
शब्द समस्या शब्द भेदों के कारण खड़ी होती है। किसी भी पाण्डुलिपि में निम्नलिखित प्रकार से शब्द भेद हो सकते हैं-

1. मिलित शब्द – ~~कोई~~ किसी पाण्डुलिपि में शब्द एक-दूसरे से मिलते हुए पूरी पंक्ति एक साथ ही लिखी जाती है, तब यह समस्या होती है। जैसे - मानुसहोंतोवहींरसखान ; ऐसी पंक्ति में पाठक अपनी सूझ-बूझ से शब्द रूप बनाता है - (i) मानुस हों तो वहीं रसखान (ii) मानु सहों तो वहीं रसखान।
इससे स्पष्ट है कि अपने द्वारा खड़े किए शब्द रूपों का अर्थ भी अपनी तरह ही निकाला जाएगा। अतः पहली समस्या यथार्थ रूप को पकड़कर कवि के अभिप्रेत अर्थ तक पहुँचने की है।

2. विकृत शब्द - प्रायः लिपिक मूलपाठ की यथावत् लिप्यंतरित प्रतिलिपि नहीं कर सकता, जिससे पाठ संबंधी विकृतियाँ स्वाभाविक हैं। ये विकृतियाँ 5 प्रकार से हो सकती हैं -

(i) मात्रा – लघु-गुरु मात्राओं की भूल तो बहुत होती है। जैसे - रात्रि - रात्री। कभी दो मात्राओं में अभेद स्थापित हो जाता है।

(ii) अक्षर – कुछ शब्द ऐसे लिखे जाते हैं, जो कुछ-के-कुछ दिखते हैं। जैसे - क>फ, ष>प, द>व, ख>स्व

(iii) विभक्त अक्षर - कुछ शब्द तोड़कर लिखे जाते हैं। जैसे - कर्म > करम, आत्म > आतम

(iv) युक्ताक्षर - पंसीटाक्षर - प्राचीन राज-काज के पत्रादि पंसीटाक्षरों में लिखने की परंपरा सी थी। अतः इन्हें समझने के लिए लिपिक को निरंतर अभ्यास करवाया जाता था। ऐसे अक्षरों को नहीं समझने के कारण अर्थ समझने में कठिनाई होती थी।

(v) अक्षरीकरण युक्ताक्षर - अक्षरीकरण के कारण एक ही अक्षर को विभिन्न रूपों में लिखा जाता है, जिससे अक्षर समझने में भ्रम हो सकती है।

2. लुप्ताक्षर शब्द - पाण्डुलिपियों में ऐसे शब्द देखे जाते हैं, जिनके भ्रम या त्वरा से जिनके कोई-कोई अक्षर छूट जाते हैं। जैसे- विद्यापति की कीर्तिलता में 'इतराहिम' का विराहिम हो गया है।

4. आगमाक्षरी - लिपिक भ्रम से कभी एक-दो अक्षर ज्यादा भी लिख देता है।

5. विपर्ययाक्षरी - मात्रा की तरह वर्ण-विपर्यय भी हो जाता है।

6. संकेताक्षरी - बड़े शब्दों को संकेत में दर्शाया जाता है। जैसे- संवत्सर के लिए सं., स आदि

7. विशिष्टार्थी शब्द - ये शब्द रूपगत नहीं होते। इनका विशिष्टार्थ जाने बिना हम यथार्थ अर्थ तक नहीं पहुँच सकते। जैसे- प्रषूयम= भूत प्रेत साधक मुसलमान धर्म गुरु, दोष= यातना देना आदि।

8. संख्यातान्तक शब्द - इन शब्द जब एक ही शब्द से दो अर्थ निकले, तब अर्थ की समस्या होती है।

9. वर्तनी-च्युत शब्द - कभी-कभी लिपिक से वर्तनी में भ्रम हो जाती है। जैसे- स का श

11. स्थापन्न शब्द - कोई शब्द पाण्डुलिपि में लिपिक द्वारा छूट गया हो, उस जगह पाठक स्वयं कोई शब्द रख दे, वह स्थापन्न या भ्रमात् शब्द कहा जाता है।

12. अपरिचित शब्द - अतिप्राचीन पाण्डुलिपि में उपयुक्त शब्द अपरिचित भी हो सकता है। उस शब्द का तत्कालीन स्रोतों से अनुसंधान कर सही अर्थ प्रस्तुत करना चाहिए, इसकी उपेक्षा नहीं करना चाहिए। जैसे- कीर्तिलता में 'कज्ज रस' अपरिचित शब्द है।

इस प्रकार अर्थ से ही शब्द की सार्थकता होती है। अतः पाण्डुलिपि-अध्येता के लिए शब्द समस्या की तरह अर्थ समस्या भी महत्वपूर्ण है। अर्थ समस्या के निम्नलिखित कारण हैं-

5. अर्थ समस्या

1. मिलित शब्दावली से उचित शब्द रूप न बनना - मिलित शब्दावली से ठीक शब्द-रूप पर पहुँचने से ठीक अर्थ मिलता है। अतः शब्द रूप बनाने की समस्या भी जटिल है। जैसे- 'भेअ करन्ता मम डवइ' इस वाक्यांश से अलग-अलग विद्वानों ने भिन्न अर्थ निकाले हैं।

2. अपरिचित शब्द के अर्थ तक पहुँचना - अर्थ समस्या का दूसरा कारण अपरिचित शब्द हैं। अपरिचित शब्द का परिचय करना भी बहुत जटिल समस्या है। जैसे- कीर्तिलता में प्रयुक्त 'डवइ' शब्द पूर्व के टीकाकारों ने उल्लेख नहीं किया है। 'अन्य उदाहरण 'संदेश रासक' के आरदृ शब्द का है।

3. व्याकरणिक दृष्टि - व्याकरण पर ध्यान नहीं देने के कारण भी अर्थ समस्या जटिल हो जाती है। जैसे- 'संदेश रासक' में प्रयुक्त 'मीरसेणस्स' शब्द का अर्थ मीर टीकाकारों ने 'मीरसेनानाथ' अर्थ किया है किन्तु कोई विद्वान ने भी इसे षष्ठ्यन्त पद माना है। अतः अर्थ की दृष्टि से व्याकरण पर ध्यान नहीं देने के कारण अर्थ समस्या खड़ी हुई है।

4. भाषाविज्ञान की दृष्टि - शब्द के जिस रूप को अर्थ का हेतु बनाया है, वह व्याकरण के साथ-साथ भाषा-विज्ञान से भी सम्मत होना चाहिए, तभी ठीक अर्थ मिलता है। जैसे- संदेश रासक के शब्द 'अद्दुड्डीणउ' का अर्थ टिप्पणकार 'अट्टोड्डिग्न' और अवचूरिकार ने 'अध्वोड्डिग्न' किया है। किन्तु किसी विद्वान का कहना है कि उद्विग्न का रूपान्तर 'उव्विग्न' होता है, 'उड्डीण' नहीं। अतः 'उड्डीण' का अर्थ 'उड़ता हुआ' होना चाहिए।

5. लक्ष्य-साक्ष्य से अर्थ लेना- किसी शब्द रूप का अर्थ लक्ष्य साक्ष्य से ~~ले~~ लेते हैं, तब भी समस्या खड़ी होती है। जैसे- संदेश रासक में 'कोसिलिं' शब्द का अर्थ लक्ष्य साम्य से कुशल किया गया। किन्तु कोई विद्वान इसका प्रभृत यानि उपहार और अर्घ करते हैं।

6. छन्दानुकूलता- कभी-कभी कवि छन्द की मात्राएँ घटा-बढ़ा देते हैं। इससे भी शब्द रूप के अर्थ ग्रहण में समस्या आती है।

7. देश-काल भेद से शब्दार्थ भेद- ~~प्राचीन~~ प्रायः देश-काल भेद से शब्द और अर्थ भेद होता ही है। प्राचीन कवियों द्वारा एक ही शब्द विभिन्न प्रदेशों में विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त किए गए हैं। अतः अर्थ ग्रहण के लिए ग्रंथकार और रचना के देश-काल का भी ध्यान रखना चाहिए।

इस प्रकार पाण्डुलिपिविज्ञानार्थी को ~~लिए~~ उत्पन्न होती शब्द और अर्थ की समस्याओं के कारण और समाधान की ओर यहाँ इंगित मात्र है।

6. उपसंहार

पाण्डुलिपि संरक्षण Summary.

पिछले दिनों एक दैनिक समाचार पत्र में आस्ट्रेलिया के विश्वविद्यालय में लगभग 10 हजार पुस्तकों को दफनाने के समाचार ~~सुनकर~~ पढ़कर बहुत हैरानी हुई। कारण में सिर्फ इतना ही कि रख रखाव के लिए पर्याप्त धन नहीं था। इस प्रकार पाण्डुलिपि साहित्य नष्ट होने में धन की कमी भी एक कारण है।

पाण्डुलिपि के नष्ट होने के अन्य कारण भी कई कारण हैं, जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं-

1. प्राकृतिक कारण- दक्षिण की जलवायु में ताड़पत्र जल्दी नष्ट होता है। इसी कारण से नेपाल में प्राप्त ताड़पत्र ग्रंथ अधिक अच्छी स्थिति में मिले हैं। इसी प्रकार कश्मीर से प्राप्त भोजपत्रीय ग्रंथ भी शायद इसलिए बचे रहे क्योंकि उन्हें स्तूपों के भीतर पत्थरों के बीच में रखा गया था।

2. भौतिक कारण- भारत देश अनेक विदेशी आक्रमणकर्ताओं का प्रिय स्थान रहा है। कितने ही विदेशी आक्रान्ता ने मंदिरों, मठों, ग्रंथागारों, पुस्तकालयों आदि को नष्ट किया है। जैसे- सिकंदर ने तक्षशिला विश्वविद्यालय का पुस्तकालय नष्ट कर दिया था।

(ii) साम्प्रदायिक वैमनस्यता भी एक भौतिक कारण है। जैसे- अलाउद्दीन खिलजी वगैरह मुस्लिम राजाओं ने ब्राह्मणों और जैनों पर अत्याचार करने में कुछ कमी नहीं रखी। उन्होंने मंदिर, ग्रंथालय, मनुष्यों, साधु-साध्वी आदि सभी का ध्वंस किया है।

3. पाठक की लापरवाही- कभी-कभी पाठक भी पाण्डुलिपियों की अवहेलना कर देते हैं। जैसे- पानी से भिगो देना, हाथ का पसीना लगना, जैसी-तैसी जगह पर रखना

पाण्डुलिपि संरक्षण Summary

1. आवश्यकता — पाण्डुलिपियों में हमारे पूर्वजों का इतिहास और संस्कृति संस्कृतिक संस्कृति और सभ्यता निहित है। अतः ये पाण्डुलिपियाँ हमारे पूर्वजों की पीढ़ियों की सख्त सांस्कृतिक धरोहर हैं। हम आज यदि इनका संरक्षण, सुरक्षा नहीं करेंगे तो आने वाली पीढ़ियाँ हमें कभी माफ नहीं करेंगी।

2. महत्त्व — पाण्डुलिपि की अन्य समस्याओं की तरह रख-रखाव की समस्या भी कम चिन्तनीय नहीं है। पाण्डुलिपि के अनेक प्रकारों (ताड़पत्र, भोजपत्र, चर्मपत्र, कागज, काष्ठ, पटीय, सोना, चाँदी, ताँबा, पीतल, हाथीदाँत, शंख, सीपी आदि) को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक प्रकार के लिए सुरक्षा की दृष्टि से अलग-अलग विधियाँ होती हैं।

3. नष्ट होने के कारण — सुरक्षा उपायों से पहले यहाँ उनके नष्ट होने के कारणों को कुछ स्पष्ट करते हैं। नष्ट होने के कारण कई हो सकते हैं, जिनका कुछ सामान्य संक्षेप यहाँ प्रस्तुत है -

1. पिछले दिनों एक दैनिक समाचार पत्र में 'आस्ट्रेलिया के एक विश्वविद्यालय में 10 हजार पुस्तकों को दफनाने' के समाचार पढ़कर हैरानी हुई। कारण में सिर्फ धन की कमी। इस प्रकार पाण्डुलिपि के नष्ट होने में धन की कमी एक कारण हो सकता है।

2. प्राकृतिक कारण - (i) सीधी धूप पड़ने से स्याही का रंग फीका हो जाता है।
(ii) वातावरण में अधिक नमी होने से कागज सीलन से सिकुड़ जाता है।
(iii) वातावरण में अम्ल गैस होने से पाण्डुलिपि नष्ट होती है।
कभी-कभी वातावरण का प्रभाव क्षेत्र संबंधी भी होता है। जैसे - (i) दक्षिण की कृष्ण हवा के कारण ताड़पत्र जल्दी नष्ट हो जाते हैं। इस कारण से नेपाल आदि ठंडे प्रदेशों में ताड़पत्र अधिक अच्छी स्थिति में प्राप्त होते हैं। (ii) भोजपत्र की भी यही स्थिति है। कश्मीर से प्राप्त भोजपत्र स्तूपों के भीतर पत्थरों के बीच रखे होने से सुरक्षित रहा हुए।

3. मानवीय कारण - (i) भारत वर्ष अनेक क्रूर विदेशी आक्रमणों का शिकार हुआ है जिससे उसने अपनी पैतृक संपत्ति बहुत खोई है अथवा लुटाई है। कहा जाता है कि सिकंदर ने तक्षशिला विश्वविद्यालय का पुस्तकालय नष्ट किया था।
(ii) साम्प्रदायिक वैमनस्यता के कारण भी मुस्लिमों ने ~~इस~~ ब्राह्मणों, जैनों एवं बौद्धों पर अत्याचार करने में कुछ कमी नहीं रखी। उन्होंने मंदिर, मठ, ग्रंथालय, विद्यापीठों, मनुष्य, साधु-साध्वी आदि सभी का ध्वंस किया।

4. पाठक की लापरवाही - पाठक भी पुस्तकों की अवहेलना प्रभावित करता है। जैसे हाथ का पसीना लगना, जैसे-तैसे स्थान पर रखना आदि।

5. पाण्डुलिपि के शत्रु - (i) फफूँद एवं फफूँद (Mould and Fungus) - ये पाण्डुलिपियों में 24 से 35°C के तापमान पर बहुत तेजी से बढ़ते हैं और उसे नष्ट कर देते हैं।
(ii) कीड़े-मकोड़े - कीड़े-मकोड़े दो प्रकार के होते हैं। (क) प्रथम प्रकार के कीड़े पाण्डुलिपि के ऊपरी भाग जिल्द, पुट्ठे, कपड़े को क्षति पहुँचाते हैं। जैसे - काकरोच, रजत कीट (Silverfish)

(ख) दूसरे प्रकार के कीड़े ग्रंथ को अंदर से क्षति पहुँचाते हैं। जैसे - पुस्तक कीट (Book worm) और सोसिड (Psocid)। Book worm के लारवे ग्रंथ के पन्नों को ऊपर से नीचे तक आर-पार छेद कर देते हैं और गुफाएँ बनाकर रहते हैं। सोसिड यही लारवा उड़कर दूसरी पुस्तक पर भी कीटों को जन्म देता है। सोसिड, पुस्तकों की जूं होती है। भीतर ही भीतर पुस्तकों को नष्ट कर देती है।

(iii) दीमक - दीमक सर्वशक्तिमान, हानिकारक और पाण्डुलिपियों का सबसे बड़ा शत्रु कीड़ा है। इसका घर भूगर्भ में होकर मकान की छत, लकड़ी, कागज आदि सर्वत्र व्यापक होता है। यह पाण्डुलिपियों को खाकर भीतर ही भीतर नष्ट कर देती है।

(iv) चूहा - ग्रंथ भंडार गृह में चूहों का प्रवेश नहीं होना चाहिए। ये चूहे ग्रंथों को बहुत बड़ा नुकसान बहुत कम समय में पहुँचा सकते हैं।

4. प्राचीन सुरक्षा उपाय

प्राचीनकाल में सुरक्षा पाण्डुलिपियों की सुरक्षा

भारत में पाण्डुलिपियों की सुरक्षा में ब्राह्मणों और जैनों का विशेष योगदान है। जैन शास्त्रीय परंपरा में ऐसे पाण्डुलिपियों के संग्रह तहखाने में किए जाते थे, जिससे वे बाह्य शत्रुओं की नज़र में न आए। और जैसलमेर जैसे रेगिस्तान के इलाके में ग्रंथ भंडार बनाने के पीछे भी यही कारण था। आज शायद इसीलिए सांगानेर, जैसलमेर, अजमेर आदि स्थानों में ऐसे तहखानों में ग्रंथालय मिलते हैं, जहाँ जैन साहित्य सुरक्षित है। अणहिल-वाड़ा के प्राचीन ग्रंथागार भी अलाउद्दीन की दृष्टि से बच गए। चूहे - काकरोच से बचाने के लिए ग्रंथों को संदूकों में रखा जाता था और कीट से बचाने के लिए कपूर की गोलियाँ या कंजार की लकड़ी का बुरादा भर दिया जाता था। संग्रह की रखवाली भी विश्वास-पात्र व्यक्तियों को सौंपी जाती थी।

पश्चिम एशिया में तुनहुआंग नामक स्थान रेगिस्तान से घिरा हुआ है। यहाँ पहाड़ी में खोदी हुई 492 से ज्यादा गुफाएँ हैं जहाँ अजन्ता जैसी चित्रकारी और मूर्तियाँ हैं। यहाँ एक बंद कमरा था, जिसमें कहीं भी द्वार नहीं था। एक बार नदी में बाढ़ आई, पानी ऊपर चढ़ा, उससे कक्ष की दीवार में सेंध लग गई। पुजारी ने ईंटों को खिसकाया तो दिखा नीचे पुस्तकों का ढेर। खबर पड़ते ही पूरे विश्व के पुराशास्त्रियों में खलबली मच गई। सर स्टाइन ने लगभग 7000 खरीद 130 खरीदकर ब्रिटिश म्युज़ियम में भेजी। इस संग्रह में एक पुस्तक 11 मई 868 ई. सन् की छपी हुई मुद्रित थी, जो अब प्राय: दुनिया की सबसे प्राचीन छपी हुई पुस्तक है। पुस्तकों की सुरक्षा प्राचीनकाल में इस प्रकार की जाती थी।

5. आधुनिक उपाय

आधुनिक वैज्ञानिक युग के सुरक्षा उपाय

आज का युग विज्ञान का युग है। अत: पाण्डुलिपियों की सुरक्षा के लिए भी कई उपाय खोजे गए हैं।

प्राकृतिक कारणों से सुरक्षा के लिए ग्रंथागार भवन का तापमान 22° C से 25° C के बीच और नमी 45% और से 55% तक रखी जाती है। वातानुकूलित विधि से यह संभव है। इसके

अथवा ग्रंथों को लोहे या लकड़ी की पेटी में रखा जाना चाहिए।

साम्प्रदायिक वैमनस्यता आदि भौतिक कारणों से बचाने के लिए ग्रंथागार एकदम सुरक्षित जगह तहखानों वगैरह में होना चाहिए तथा आगजनी के उपाय संपूर्णतः तैयार होने चाहिए। पाठक की लापरवाही से पाण्डुलिपियों की सुरक्षा के लिए मुनि पुण्य वि. जी कहते हैं कि ~~सभी~~ पाठक के मन में पाण्डुलिपि के लिए पूज्य भाव आदर खड़ा किया जाता है। जिससे वह उसे जैसे-तैसे स्थान पर न रखे, उसे टिकरी पर रखकर पढ़े जिससे हाथ का पसीना न लगे आदि।

पाण्डुलिपि को शत्रुओं से बचाने के लिए अलग-अलग अनेक सुरक्षा उपाय हैं। जैसे- ~~Fungus~~

(i) Fungus से सुरक्षित रखने के लिए तापमान 30°C से अधिक रखना चाहिए अथवा थाईमल रसायन से वाष्प चिकित्सा (Fumigation) करना चाहिए।

(ii) कीटों से बचाने के लिए (क) ग्रंथागार में कोई खाने पीने की वस्तु नहीं रखना चाहिए।
(ख) ग्रंथों की अलमारी, अंधेरे कोनों, छिद्रों, दरारों, दीवारों आदि पर सावधानी पूर्वक DDT, सोडियम फ्लोराइड, नेफ्थलीन की गोलियाँ आदि का छिड़काव करते रहना चाहिए। ग्रंथ पर छिड़कने से धब्बे पड़ने का डर रहता है।
(ग) घातक गैसों (एथीलीन ऑक्साइड, कार्बनडाइ ऑक्साइड) से वाष्प चिकित्सा करना चाहिए।

(iii) दीमक से सुरक्षा का कारगर उपाय धातु की अलमारी है। धूम्रपान नहीं होना चाहिए। यदि दीमक के द्वारा सुरंग बना दी गई हो तो वहाँ तारकोल या क्रियोसोट तेल अथवा DDT का घोल भी छिड़क सकते हैं।

(iv) चूहों से बचाने के लिए भंडारगृह की नालियाँ, जाली, खिड़की, छेद आदि बंद होना चाहिए। भंडार गृह में कोई खाने पीने की वस्तु नहीं रखना चाहिए। चूहेदानी जगह-जगह लगाकर रखना चाहिए। इन उपायों के अलावा भी अनेक वैज्ञानिक विधियाँ हो सकती हैं। जैसे- ग्रंथों की फोटोस्टेट, ~~माइक्रो~~ फिल्मिनेशन, Scanning कराकर एक Soft copy भी Computer में रखी जा सकती है।

नई पाण्डुलिपि की देखभाल

~~नई पाण्डुलिपि~~ पाण्डुलिपि की उचित देखभाल करना भी रख-रखाव के अन्तर्गत ही आता है। नई पाण्डुलिपियाँ कहीं से प्राप्त होती है तब ~~उनकी~~ उनकी दशा अनेक विकृतियों युक्त होती है। जैसे- किसी के कोने मुड़े होते हैं, किसी के कोने फटे होते हैं; किसी के पेज चिपके हुए तो किसी के कागज गीले होते हैं। ऐसी अवस्था में इन पाण्डुलिपियों का तात्कालिक उपचार करना चाहिए। आजकल विकृत पाण्डुलिपियों की चिकित्सा के लिए अनेक वैज्ञानिक प्रयोगशालाएँ खुल गई हैं अथवा अपने स्तर ~~से~~ पर भी साधन सामग्री से थोड़ा ~~सभी~~ प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति पाण्डुलिपियों का उपचार कर सकता है।

7. उपसंहार

यह पाण्डुलिपि के संरक्षण का क्षेत्र भी बहुत बड़ा और विस्तृत है। यहाँ प्रारंभिक शिक्षण के अनुसार उसका संक्षेप में स्थूल बातों को ग्रहण कर एक सामान्य चित्र प्रस्तुत किया है।

पाण्डुलिपि क्षेत्रीय अनुसंधान Summary.

1. प्राप्ति प्रयत्न

सर्व पाण्डुलिपि विज्ञान का प्रवेश पाण्डुलिपि प्राप्ति के प्रयत्नों से होता है। अतः प्राप्ति के प्रयत्न ही क्षेत्रीय अनुसंधान की आधारशिला है। क्षेत्रीय अनुसंधान दो स्तरों पर किया जाता है –

1. पुस्तकालय स्तर- इस स्तर में अनुसंधानकर्ता को तीन प्रकार के पुस्तकालयों से संपर्क करना पड़ता है – (i) धार्मिक – ये पुस्तकालय धार्मिक मंदिरों, मठों, विहारों में होते हैं।
(ii) शासकीय – ये पुस्तकालय राज्य शासन द्वारा परिचालित होते हैं।
(iii) विद्यालयीय – ये पुस्तकालय सार्वजनिक विद्यालय, विश्वविद्यालयों आदि में होते हैं।
2. निजी स्तर पर – हमारे देश में प्राचीन काल से ही पाण्डुलिपियों पोथियों के प्रति अपार श्रद्धा रही है। परिणामस्वरूप घर-घर में हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रह किया जाता है।
निजी संग्रहों की दृष्टि से जैन ग्रंथागारों का अधिक योगदान रहा है।
इन संग्रहों में भी प्राप्ति के प्रयत्न किए जाते हैं।

2. अनुसंधानकर्ता के प्रकार

क्षेत्रीय अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। वही पाण्डुलिपि विज्ञान की धुरी है। ऐसे अनुसंधान कर्ता 3 प्रकार के होते हैं –

1. प्रथम प्रकार के अनुसंधानकर्ता उच्चकोटि के विद्वान होते हैं, जो ऐतिहासिक, पुरातात्विक सामग्री के संकलन में व्यस्त रहते हैं। जैसे – कर्नल टॉड, डॉ. गौरीशंकर ओझा, मु. पुण्य वि. मु. जिन विजी, डॉ. हूत्सर आदि।
2. दूसरे प्रकार के अनुसंधानकर्ता को खोजकर्ता या एजेण्ट कहा जा सकता है। ये किसी व्यक्ति या संस्था की ओर से पाण्डुलिपियों की विवरण सहित खोज रिपोर्ट प्रस्तुत करते हैं।
3. तीसरे प्रकार के अनुसंधानकर्ता व्यवसायिक वृत्ति के होते हैं। ये विद्वानों से पाण्डुलिपि संबंधी जानकारी एकत्र कर इनका संचय करते हैं और लाभ प्राप्त होने पर उन्हें बेचते हैं। इन अनुसंधानकर्ताओं के माध्यम से हमारे देश की विपुल महत्त्वपूर्ण पाण्डुलिपियां विदेश में चली जाती हैं।

3. अनुसंधानकर्ता के गुण

इस प्रकार यह तो सिद्ध ही है कि 'क्षेत्रीय अनुसंधान' के मूल में अनुसंधान कर्ता नींव समान है। अतः एक कुशल अनुसंधान कर्ता के गुण और खूबियाँ यहाँ दी जा रही हैं –

1. लोकप्रियता
2. विश्वासपात्रता
3. व्युत्पन्नमति
4. तत्पर बुद्धि
5. विविध व्यक्तियों के मनोभाव को समझने की बुद्धि
6. दूसरों की कृतज्ञता पा सकने का हुनर
7. किसी भी क्षेत्र के मुखिया, जमींदार आदि के साथ परिचय करने का कौशल्य
8. स्वयं को चारित्रवान, आदर्श, विश्वसनीय रूप में प्रस्तुत करने की कला।

9. ज्योतिष, हस्तरेखा ; वैद्यक विज्ञान की जानकारी भी उपयोगी होती है।

10. अनुसंधानकर्त्ता धैर्यवान भी होना चाहिए, जिससे किसी विशेष पाण्डुलिपि की खोज में वह धैर्यपूर्वक आगे-पीछे की कड़ियों को मिलाते हुए अभीप्सित प्रति तक पहुँच सके।

५. अनुसंधान कर्ता का कर्तव्य

क्षेत्रीय अनुसंधान कर्त्ता का प्रयत्न (यत्न) यही रहना चाहिए कि कैसे भी-कुछ भी करके पाण्डुलिपि प्राप्त हो।

1. अतः उपर्युक्त गुणों से युक्त अनुसंधानकर्त्ता को एक अनुसंधान डायरी, पेन, Scale आदि स्वयं के पास हमेशा रखना चाहिए। किसी भी क्षेत्रीय कार्य के दौरान प्रतिदिन उसे विवरण लिखना चाहिए। जैसे- ग्राम/जगह का नाम, व्यक्ति का नाम, उपलब्ध पाण्डुलिपियों का परिचय-संख्या, कोई विशेष ग्रंथ हो तो इसका विवरण आदि। फिर एक क्षेत्रीय कार्य पूर्ण होने पर उस कार्य का सार भी बना लेना चाहिए जैसे- इस यात्रा प्रवास उसने कितने ग्रंथ देखे, उनका रचनाकार- रचनाकाल- लिप्यासन- स्याही आदि की जानकारी, कितने ग्रंथ प्राप्त हुए, कितने खरीदे आदि।

2. उसे उन ग्रंथों को प्राप्त करने का प्रयास व्यक्ति के व्यवहार कुशलता के हिसाब से करना चाहिए। पहला प्रयत्न तो ऐसा ही होना चाहिए कि ग्रंथ दान या भेंट में निर्मूल्य मिल जाए। यदि कोई महत्त्वपूर्ण बहुमूल्य प्रति हो तो उसे कुछ ले-देकर भी खरीद लेना चाहिए। खरीदी करते समय पाण्डुलिपि के मूल्य निर्धारण में रचनाकाल, लिप्यासन, स्याही, चित्र, अलंकरण, लेखन-शैली की विशेषता, वर्णित विषय का महत्त्व आदि का ध्यान रखना चाहिए।

6. मूल्य देकर खरीदी गई पुस्तक/ग्रंथ का प्रमाण पत्र भी विक्रेता से प्राप्त कर लेना चाहिए ताकि चोरी होने पर प्रमाण पत्र काम आ सके।

7. उस ग्रंथ का पूर्ण विवरण अपने पास भी रखना चाहिए।

६. पाण्डुलिपि विवरण

क्षेत्रीय अनुसंधान में पाण्डुलिपि का विवरण मुख्यतः दो दृष्टियों से देना चाहिए-

1. बहिरंग विवरण- सर्वप्रथम ग्रंथ आपके हाथ में आता है, तब उसके उसके आकार-प्रकार पर आपकी निगाहें पड़ती हैं। ये आकार-प्रकार ही बहिरंग विवरण के अन्तर्गत हैं। ग्रंथ का आकार, पृष्ठ संख्या, लिखित पृष्ठ, रिक्त पृष्ठ, चित्र वाले पृष्ठों की संख्या, स्याही का रंग कैसा है, लिप्यासन, प्रतिपृष्ठ पंक्तियों की संख्या, प्रतिपंक्ति अक्षरों की संख्या आदि जानकारियाँ बहिरंग विवरण में लिखी जानी चाहिए।

2. अंतरंग विवरण- ग्रंथ का नाम, रचनाकार का नाम, लिपिक का नाम, रचनाकाल, लिपिक का काल, आदि में मंगल स्वरूप गुरु या इष्टदेवता की स्तुति, रचना में कुल कितने अध्याय/अध्ययन/प्रकरण हैं, रचना का वर्ण्य विषय, उस ग्रंथ की भाषा, लिपि आदि का वर्णन किया जाना चाहिए।

इनके अलावा पाण्डुलिपि-विवरण में अन्य अपेक्षित बातें-

1. ग्रंथ का स्वरूप- उस ग्रंथ की स्थिति फिलहाल कैसी है, यह भी विवरण में वर्णित करना चाहिए। जैसे- कागज कटे फटे हैं या नहीं? यदि फटे हैं तो कितने हैं? कागज गल गया है, स्याही चूल गई है, कागज पर धब्बे हैं, दीमक ने खा लिया है आदि।

2. ग्रंथ का रख-रखाव- वह पाण्डुलिपि वेष्टन से सुरक्षित है, वेष्टन किस प्रकार है, यदि ग्रंथ पेटी में रखा है तो पेटी किस प्रकार की है, प्राचीन ताड़पत्र हो तो काष्ठपट्ट ऊपर-नीचे लगाकर डोरी बाँधकर गाँठ भी

लगाने की गुंजाइश है या नहीं? आदि विवरण भी अपेक्षित है।

अनुसंधानकर्ता को पाण्डुलिपि विज्ञान के प्रसिद्ध वैज्ञानिक की विवरण रिपोर्ट भी देख अनुभव के लिए देख लेना चाहिए, जिससे अलग-अलग पद्धतियों का ज्ञान हो।

6. विवरण रिपोर्ट के लाभ — विवरण रिपोर्ट अनुसंधानकर्ता को स्वयं अपने पास भी रखना चाहिए, जिससे वह उसके अनेक लाभ प्राप्त कर सके। अनुसंधान के कार्य में एकरूपता रहना और एकाधिक रिपोर्टों के प्रारूप से तुलनात्मक अध्ययन करना, ये दो लाभ विवरण से होने वाले अनेक लाभों में मुख्य हैं।

7. जाली पाण्डुलिपि — क्षेत्रीय अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान के कार्य में जाली या नकली हस्तलिखित ग्रंथों के प्रति सावधानी रखना भी बहुत आवश्यक है क्योंकि पाण्डुलिपियों के व्यवसाय में अधिक लाभ होने से आज का भौतिकवादी मनुष्य दानकमाने के लिए कोई भी नुस्खा बाकी नहीं रखता। पाण्डुलिपियों के व्यवसाय में अच्छा मुनाफा होने से जाली और नकली पाण्डुलिपियाँ तैयार कर बेचने का धंधा, सिर्फ भारत में नहीं, बल्कि विदेश में भी बहुत ज़ोर में है, जिसमें अच्छे-अच्छे कुशल जानकार भी जालसाजी के शिकार हो जाते हैं। अतः पाण्डुलिपि के वैज्ञानिक को इस ज्ञान की आवश्यकता जानकारी भी होना चाहिए।

8. उपसंहार — इस प्रकार पाण्डुलिपि विज्ञान के विद्यार्थी के लिए उपयोगी ऐसा प्राथमिक चरण 'क्षेत्रीय अनुसंधान' का यहाँ सामान्य चित्रण किया गया, जिसके विस्तार में अनेक विवरण संभव है।

लिपि Summary

1. लिपि का महत्त्व
1. लिपि के कारण ही कोई भी लेख पाण्डुलिपि कहलाता है।
2. किसी को दृश्य या पाठ्य बनाने का माध्यम लिपि यानि लिपि।
3. हजारों वर्षों पुरानी प्राचीन भाषाएँ आज भी लेख रूप में सुरक्षित एकमात्र लिपि के कारण।

ऊपर लिखित बिन्दुओं और भी अनेक कई कारणों से लिपि का महत्त्व सर्वविदित एवं निर्विवाद है, भले ही वह प्राचीन हो या अर्वाचीन। अतः पाण्डुलिपिविज्ञान के विद्यार्थी को सभी लिपियों का ज्ञान आवश्यक नहीं है किन्तु उस वैज्ञानिक लिपि का ज्ञान अपेक्षित है जिससे किसी भी लिपि को पकट किया जा सके।

2. लिपि का विकास क्रम — लेखन और लिपि का विकास क्रम कुल 4 चरण में 4 विद्वानों द्वारा स्वीकारा गया है।

1. चित्र अंकन 2. (चित्रलिपि) रेखाचित्र लिपि 3. ध्वनि अक्षर/वर्णात्मक लिपि 4. ध्वनि।

एक-एक चरण को क्रम से देखते हैं-

1. आदि मानव को जब प्रारंभ में स्वयं के भावों को या घटनाओं को कहने की या बताने की आवश्यकता हुई, तब उसने वस्तु के बिम्ब ही दीवालों पर, गुफाओं में, ईंटों पर बनाना शुरू किए। शायद उस समय ये चित्र ही एक-दूसरे के विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम होंगे। इसे ही विद्वानों ने लिपि के विकास क्रम में पहला चरण माना है।
इस प्रकार के चित्र चीन और मिस्र में काफी प्राचीन प्राप्त होते हैं इसलिए अनुमान है कि लिपि के विकास का प्रारंभ वहीं से हुआ होगा।

2. जैसे-जैसे लिपि आदि मानव का विकास हुआ, वैसे वह इन चित्र-बिम्बों को भी बदलने लगा या कम करने लगा जिससे कम से कम चित्रों में अधिक भाव प्रस्तुत हो। वहीं से रेखाचित्रों का प्रारंभ हुआ। जैसे- मनुष्य का रेखाचित्र - 🚶। इन रेखाचित्रों को ही चित्रलिपि कहा जाता है। इस चित्रलिपि का उदय मिस्र में 3100 ई.पू. हुआ होगा। चीन-मिस्र के अलावा लिपि मेसोपोटैमिया में भी पायी गयी है।

3. ये रेखाचित्र आगे जाकर धीरे-धीरे वर्णों और अक्षरों के रूप में रूढ़ हुए। वर्तमान में अक्षरात्मक और वर्णात्मक लिपियाँ जो प्रसिद्ध हैं, वे इनका ही आधुनिक रूप हैं।
आज विश्व में प्रायः 3 प्रकार की लिपियाँ हैं -
(i) दाएँ से बाएँ लिखी जाने वाली = eg. फारसी
(ii) बाएँ से दाएँ लिखी जाने वाली = eg. देवनागरी, रोमन
(iii) ऊपर से नीचे - eg. चीनी।

4. ध्वनि-लिपि के विकास के साथ-साथ ध्वनि का विकास भी आदिम मनुष्य के समय से ही हो रहा है, जिसका प्रारंभ वस्तु को नाम देने से हुआ। इससे वस्तु का चित्र भी ध्वनि से जुड़ा। आगे चलकर जब वर्णात्मक लिपि हुई तब ध्वनि मात्र वर्ण के प्रतीक चिह्न स्वरूप हो गया। अब लिपि पूरी ध्वनिमूलक हुई।
ध्वनिमूलक लिपि की वर्णमाला के 2 भेद हैं - (i) अक्षरात्मक (Syllabic) - eg. देवनागरी लिपि क + अ = क। (ii) वर्णात्मक (Alphabetic) - eg. रोमन लिपि K।

3. लिपि का इतिहास

इतिहासविद् लिपि के विकास क्रम का प्रारंभ मिस्र और चीन से मानते हैं। इसके अलावा रेखाचित्र की शुरुआत मैसोपोटैमिया में सुमेरी जाति द्वारा किया गया। सामी लिपि में 22 वर्ण थे। इनका प्रयोग ईरान में भी शुरू हुआ।
यूरोप की समस्त लिपियों का विकास ग्रीक लिपि से हुआ है। इटली और इसके आस-पास एत्रुस्की भाषा का प्रयोग होता था, जिसका मूल भी ग्रीस ही था। रोम में लैटिन भाषा के ई.पू. 4थी शती के लेख प्राप्त हुए। इनकी लिपि ग्रीक और एत्रुस्की का मिश्रण थी। इसे ही रोमन लिपि कहते हैं। प्रारंभ में रोमन लिपि के 23 वर्ण 1ली-2री सदी तक 26 हो गए।
अरबी-फारसी लिपि का मूल आरमानी लिपि मानी जाती है। आरमानी लिपि का सबसे पुराना लेख ई.पू. 800 का प्राप्त हुआ है। ईरान और आस पास के प्रदेशों में यही लिपि प्रचलित थी।

भारत में ब्राह्मी और खरोष्ठी लिपियाँ विकसित हुई। सम्राट अशोक के समय से ई.सन् की तीसरी सदी के खरोष्ठी लिपि के लेख प्राप्त होते हैं। भारत की समस्त लिपियों का विकास ब्राह्मी से हुआ।

ब्राह्मी लिपि - 1. भारत में यही लिपि सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है।
2. प्रायः भारत की समस्त लिपियों का विकास इसी लिपि से हुआ।
3. 'ललित-विस्तर' नामक ग्रंथ में 64 लिपियों का उल्लेख है, जिनमें सबसे पहला है 'ब्राह्मी लिपि'।
4. शुद्धता और सम्पूर्णता की दृष्टि से भी खरोष्ठी की अपेक्षा ब्राह्मी अधिक बेहतर है।
5. इस लिपि का काल लगभग ई.पू. 500 से ई. सन् 350 तक माना जाता है।
6. अशोक के प्राचीन शिलालेख भी इसी लिपि में हैं।

→ ब्राह्मी की उत्पत्ति - ब्राह्मी की उत्पत्ति के बारे में दो विचारधाराएँ हैं -

1. विदेशी लिपि से उत्पन्न - (i) बिल्सन, प्रिंसेप आदि विद्वान ब्राह्मी की उत्पत्ति ग्रीक या फोनीशी से मानते हैं। (ii) वूलर उत्तरी सामी से ब्राह्मी की उत्पत्ति मानते हैं। (iii) टेलर दक्षिणी सामी से उत्पत्ति मानते हैं।
इन सब मतों का खंडन अलग-अलग विद्वानों ने किया है।

2. ब्राह्मी भारतीय लिपि है - इस मत में टामस, कनिंघम, गौरीशंकर ओझा, डॉ. तारापुरवाला आदि विद्वान हैं। ~~मास्त~~ ब्राह्मी भारत के आर्यों का मौलिक आविष्कार है। इनमें भी अलग अलग मत इस प्रकार है - (i) इसका कर्ता ब्रह्मदेवता होने के कारण ब्राह्मी नाम पड़ा (ii) ब्राह्मणों की लिपि होने से ब्राह्मी कहलाई (iii) ब्रह्म ज्ञान की रक्षा का साधन होने से यह नाम पड़ा (iv) जैन मतानुसार इनके आप तीर्थंकर ऋषभदेव ने स्वयं की पुत्री ब्राह्मी को यह लिपि सीखाई थी।

खरोष्ठी लिपि

परिचय (1) (i) भारत में प्राचीन लिपियों में एक खरोष्ठी भी है।
(ii) 'ललितविस्तर' नामक ग्रंथ में ब्राह्मी के बाद खरोष्ठी का ही उल्लेख है।
(iii) इसका प्रचार पंजाब में तीसरी सदी ई. तक था बाद में यह लुप्त हुई।

उत्पत्ति (2) यह लिपि दाएँ से बाएँ चलती है। इसके 11 अक्षर अरमइक के अक्षरों से मिलते-जुलते हैं, अतः अनुमान है कि ईरानियों के राजत्व काल में अरमइक लिपि का प्रवेश हुआ होगा और उससे ही खरोष्ठी का उद्भव हुआ। बाद में किसी खरोष्ठ नामक आचार्य (शायद तक्षशिला के) ने संशोधन कर प्रचारित किया।

इतिहास (3) ब्राह्मी की तुलना में खरोष्ठी के लेख बहुत कम हैं। वे भी भारत के पश्चिमोत्तर देश और पंजाब में ही पाए गए हैं। अशोक के शहबाजगढ़ी और मनसेहरा वाले लेख खरोष्ठी में
- अरमइक में भी स्वरों की अपूर्णता तथा ह्रस्व-दीर्घ मात्राओं के भेद का अभाव था।

Page No.
Date :

हैं। इसका इस लिपि का एक-एक अक्षर ईरानी सिक्कों पर मिलता है, जो लगभग ई.पू. पाँचवीं शती के अनुमानित हैं।

ब्रह्मचंदजी	- वड्ढमाण काव्य 1481	
होलियावाला	- द्रव्य संग्रह 1416	
तृणकरणजी	परमात्म प्रकाश 1407	- ८ प्रति
दि. जैन मं. तेरा.	- पंचास्तिकाय 1329	- 100 चित्र
दि. जैन मं. पाटोदी	- जसहर चरिउ 1407	- 200 पुराना

पाठालोचन

① प्रस्तावना → अनेक प्रति → अनेक पाठान्तर भेद → दुविधा → पाठ. वि. आवश्यकता वि. की समस्या।
② मूलपाठ → परिभाषा → महत्त्व (अवतर्नी, इतिहास, पाठ्यकोशज्ञान, ऐतिहासिक तथ्यों, काल, आदर्श) → ध्येय → विशेष सुरक्षा
③ विकार के कारण → लिपिक → असावधानी, अपरिमितज्ञान, अपरिचित विषय → उच्चारण प्रमाद, भ्रम, छूट-भूल-आगम (उपसर्ग, शब्दांश, पंक्ति, शब्द, प्रत्यय, छूट की जगह स्वयं ज्ञान प्रक्षेप)
④ समस्याएँ - 3. क्षेपक, छूट-भूल, अप्रामाणिक रचना
⑤ वंशवृक्ष - लेखन शैली भिन्न, शु, युग्म संतानीय भिन्न, एक की दो प्रतियाँ भिन्न, अन्वेषी। पाठालोचन का कार्य
⑥ प्रणाली - 3 स्वेच्छया पाठ विधारण, तुलनात्मक, वैज्ञानिक
⑦ वैज्ञानिक प्रणाली - 5 step - ग्रंथ संग्रह, संकेत (क्रमांक, लिपिक, स्थान, पाठसाम्य सूचक), तुलना, वंशवृक्ष
⑧ अंतरंग - बाह्य साक्ष्य - अर्थन्यास
⑨ पुनर्निर्माण - फ्रैंकलिन एडगर्टन पंचतंत्र।

काल निर्णय

① प्रस्तावना - लिपि, ग्रंथालोचन से मूलपाठ
② वीर सं., शक सं., राज्य, हिजरी, ई. सन्
③ दो प्रकार - कालसंकेत ✓ | ✗
④ काल संकेत में 4 पद्धति - (i) ऐतिहासिक उल्लेख (अशोक के शिलालेख में राज्य वर्ष, शक) (ii) समकालीन संदर्भ (अशोक के 12वें शिलालेख में) (iii) प्रेतरंग साक्ष्य (परिचित / अपरिचित) (पाणिनी) (iv) जंत्रि पद्धति - चमत्कार अनेकाक्षर (संवत सप्तदश सौरह दस, कवि दिन तिथि रजनीश वेद रस, माघ पुन्नीत मकरगत भानू, अमित पक्ष अतु तिथि समानू)
⑤ समस्याएँ - (i) पाठ भेद (बीसलदेव रास - 1220, 1230, 1300, 1400) (ii) पाठ दोष (iii) तिथि तन्त्र का उल्लेख (संवत सप्तदश रसानते होइ, शाहद से सन पैंसालीस होइ - 1745 सं., 1745 मन)
(iv) पूर्णान्ति / प्रशान्त + चैत्रादि, कार्तिकादि (v) लेखक से भूल (vi) अतीत रूप (vii) जंत्रि पद्धति - अहि सगर पयोनिधि चन्दु - 4, 7 |
⑥ काल संकेत न हो तो 3 पद्धति - 1. बाह्य साक्ष्य - 42, अंतरंग साक्ष्य - 3 3. वैज्ञानिक प्रविधि - 3 |
⑦ बाह्य साक्ष्य - बाह्य उल्लेख (नाभादास कृत भक्तमाल), लोकानुश्रुतियाँ, ऐतिहासिक घटनाक्रम (कालगणना सूत्र, रामन, ई.20
~~ऐतिहासिक परिवेश~~ सामाजिक स्थिति एवं सांस्कृतिक परिवेश (बीसलदेव रास) → प्रामाणिकता
⑧ अंतरंग साक्ष्य - 3 प्रकार 1. स्थूल पक्ष - भौतिक सामग्री 2. सूक्ष्म पक्ष → 3. भाषा → बीसलदेव रास - 1330 - 1500 ई. (नाट्यशास्त्र, ई 300, 4 अलंकार)
1. (i) लिप्यासन (ii) स्याही (iii) लिपि (रणथंभौर - कुर्मशतक - 11वीं) (iv) लेखन शैली (संकेताक्षर, प्रांतिक, युगीन विशेष)
⑨ वैज्ञानिक - (i) 100 में 1½" (ii) Radioactive (iii) वृक्ष की आयु

सुरक्षा

① अनिवार्यकता एवं महत्त्व
② नष्ट होने के कारण - 1. धन की कमी 2. प्राकृतिक कारण 3. बाह्य आक्रमण (भौतिक) 4. सामाजिक वैमनस्यता 5. पाठक की लापरवाही 6. शत्रु - (i) मुकड़ी एवं फफूँद (ii) कीड़े - प्रकोड़े - 2 प्रकार (iii) दीमक (iv) चूहा।
③ जैनों - ब्राह्मणों, तहखाने, संदूक, कपूर की गोलियों एवं कचनार की लकड़ी, विश्वासपात्र व्यक्ति। नुन्नाड़, 4726 गुफाएँ, बाघ, शाहजहाँ ने 7000 खरीद, 1857 ई.
④ आधुनिक उपाय - प्राकृतिक - AC / बनावटी। भौतिक कारणों - तहखानों / भागदौड़ मना। पाठक - पूज्यता। शत्रुओं - (i) Fungus - Fumigation (Thymol Liquid) (ii) कीटों - खाद्य वस्तु ✗ / छिड़काव / घातक गैसों (iii) दीमक - धातु की अलमारी / विषैलो 1000 (iv) चूहे - खाद्य ✗ / छिड़ ✗ / चूहेदानी |

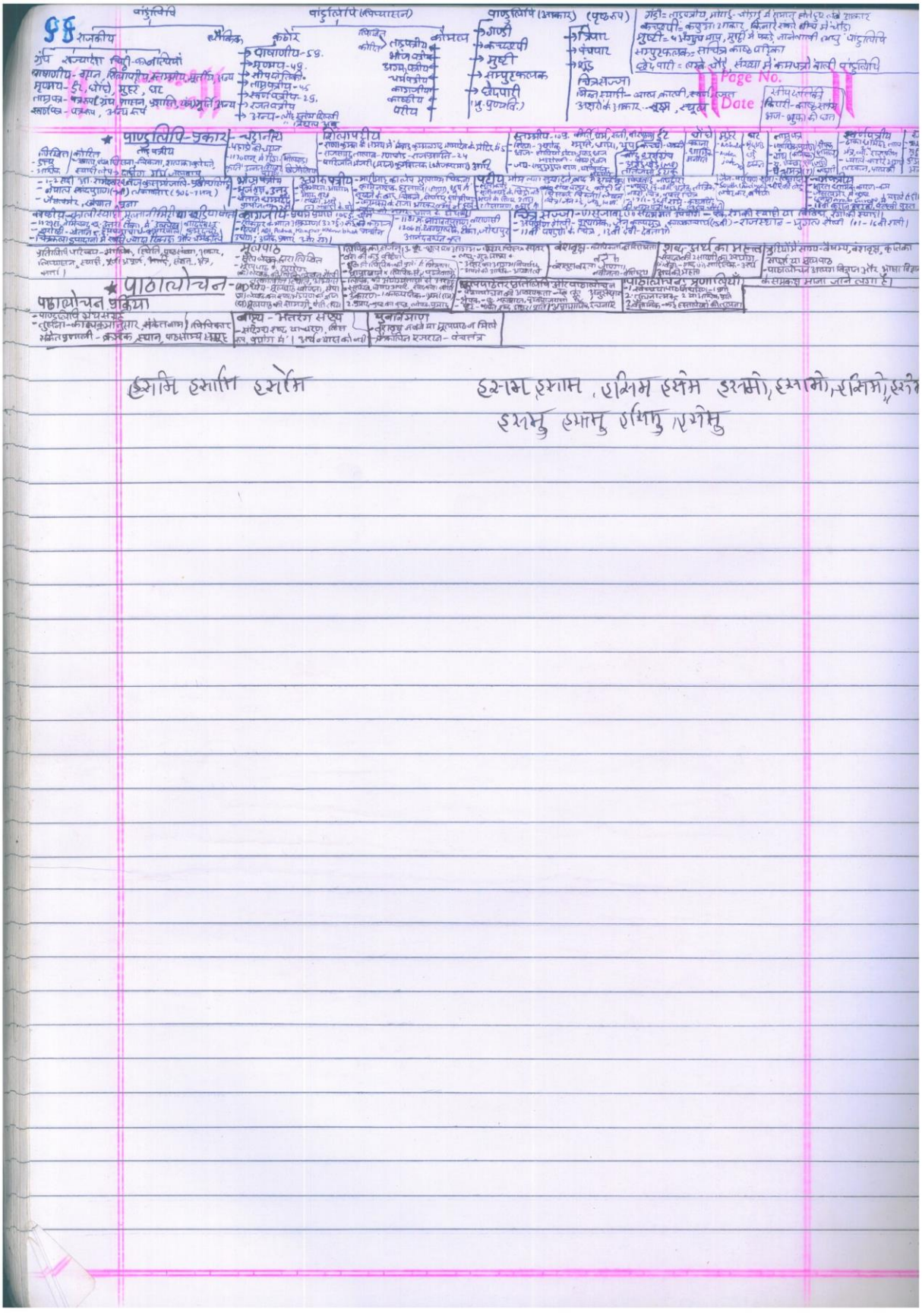

हसामि हसावि हसोमि

हसाम, हसास, हसिम हसेम हसामो, हसामो, हसिमो, हसेमो
हसामु हसामु हसिमु हसेमु

प्राकृत

क्रियापद

★ **वर्तमान काल**

मि [3,1] (अ,आ,ए)	मो,मु,म [12,3] (अ,आ,इ,ए)	मु [4,1] (अ,आ,इ,ए)	मो [3,1] (अ,आ,ए)
सि, से [3,1] (अ,ए)	ह, त्था, ध [6,3] (अ,ए)	हि,सु,थि,०,इज्जसु,इज्जे इज्जाहि [10,3] (अ,ए)	ह, ध [4,2] (अ,ए)
इ, दि, ए, दे [6,2] (अ,ए)	न्ति, न्ते, इरे [4,3] (अ,ए)	उ, दु [4,2] (अ,ए)	न्नु [2,1] (अ,ए)

★ **विधि- आज्ञा**

★ **भूतकाल** - अकारान्त में ईअ (इत्था, इंसु), आ-ओकारान्त में सी, ही, हीअ (इत्था, इंसु) [1,3]

★ **भविष्यकाल**

हि, हा, स्सा, स्सि, स्सं + मि [9,5] (ए,ए) (ए) (ए,ए)

हि, स्स, सि + सि, से [10,3] (ए,ए) (ए)

हि स्स स्सि + इ ए दि दे [18,5] (ए,ए) (ए)

हि, हा, स्सा, स्सि, ~~स्सं~~ + मो मु म [21+2, 12] (ए,ए) (ए) हिस्सा, हित्था

हि, स्स, सि + ह इत्था ध [15,9] (ए,ए) (ए)

हि, स्स, सि + न्ति न्ते इरे [15,9] (ए,ए) (ए)

→ वर्त. और भवि. काल में 1. अकारान्त धातु के अ का इ, ए + ज्ज, ज्जा (~~वर्त में~~ भ. में इ भी होता है।)

हसेज्ज, हसेज्जा, हसिज्ज, हसिज्जा

(अर्थभेदकारी) 2. आ-ओ धातु + ज्ज, ज्जा ठाज्ज, ठाज्जा

3. " + अ विकरण का ए + ज्ज, ज्जा ठाएज्ज, ठाएज्जा, ठाइज्ज, ठाइज्जा (भ. में इ भी)

★ **संबन्धक भूत कृदन्त** - ऊणं/ऊणं, दूणं/दूणं, आय, ऊ, त्ता (इ,ए) [16,8]

★ **हेत्वर्थक कृदन्त** - उं/दुं (इ,ए) [4,2]

★ **भूत कृदन्त** - आय, त, द (इ) [4,4]

★ **वर्तमान कृदन्त** - न्त, माण [2,2]

★ **विधि कृदन्त** - अव्व/यव्व, तव्व, दव्व, णीय [9,4] (इ,ए)

शब्द

	★ पु. (नपु.)		★ स्त्री.	
1.	ओ, ए, ० (०)	आ, ०, अं, अंओ, अंओ णो	०, आ (आइं, आईं, आणि)	०, उ, ओ, आ
2.	" (०)	आ, ए, ०, णो (")	"	०, उ, ओ, आ
3.	ण, णं, णा (ए)	हि, हिं, हिँ	अ, इ, ए, आ	हि, हिं, हिँ
4.	आय, स्स, णो	ण, णं	"	ण, णं
5.	त्तो, आ, उ, ओ, हि, हिन्तो, सुन्तो (अ,ए)	त्तो, उ, ओ, हि, हिन्तो, सुन्तो	" त्तो, उ, ओ	त्तो, उ, ओ, हिन्तो, सुन्तो
	हि, हिन्तो, णो		हिन्तो	
6.	स्स, णो	ण, णं	"	ण, णं
7.	ए, म्मि	सु, सुं	"	सु, सुं
8.	आ, ओ, ए, ०	"	कहे, कहा, कहं, कहइ, लाच्चेइ	"

Page No.
Date :

सर्वनाम

	★ अम्ह		★ तुम्ह	
1.	महं, हं, अम्मि	अम्हे / वयं	तुमं / तुं / तुह	तुम्हे / तुज्झे / तुब्भे
2.	ममं, मं, मि	अम्हे / अम्ह / वे	तुमं / तुं	तुम्हे / तुन्हे / तुब्भे / वे
3.	मइ / मए / मे / ममए	अम्हेहि / अम्हाहि	तइ / तए / तुमे / तुमए	तुम्हेहिं / तुज्झेहिं / तुब्भेहिं
4.	मम / मह / मज्झ	अम्हाण / अम्हाणं / मम्हाण / ममाणं / मज्झाण / मज्झाणं	तुम्ह / तुह / तुज्झ	तुम्हाण / तुम्माण / तुहाण / तुज्झाण / तुज्झाणं
5.	मइत्तो / ममाओ / मज्झाओ / ममाहिन्तो	अम्हाओ / अम्हेहि / ममाहिन्तो / ममासुन्तो / ममेहिन्तो	तुवत्तो / तुमाओ / तुहाओ / तुम्हाहिन्तो	तुज्झाओ / तुम्हाहिन्तो / तुम्हासुन्तो / तुब्भेहिन्तो / तुब्भासुन्तो
7.	अम्हम्मि / मे / मम्मि / मह	अम्हेसु / ममेसु / मज्झेसु	तुमए / तुहम्मि / तुमम्मि	तुसु / तुमेसु / तुम्हेसु

	★ त (पुं.) हत्थं		★ स्त्री.	
1.	सो (तं)	ते (ताइं, ताइँ, ताणि)	सा	ता / ताउ / ताओ
2.	तं (तं)	ता, ते (")	तं	ता / ताउ / ताओ
3.	तेण, तेणं	तेहिं, तेहिँ, तेहि	ताअ / ताइ / ताए	ताहि / ताहिं / ताहिँ
4&6.	तस्स / तस्सा / से	तेसिं / ताण / ताणं	ताअ / ताइ / ताए / तास / से (तिस्सा)	तेसिं / ताण / ताणं
5.	ताउ / ताओ / ताहिन्तो	ताहिन्तो / तेहिन्तो / तासुन्तो	ताअ / ताइ / ताए / तत्तो	तीओ / तीहिन्तो / तीसुन्तो
7.	तंमि / तस्सिं / तहिं	तेसु / तेसुं	ताअ / ताइ / ताए	तासु / तासुं / तीसु / तीसुं

क्रियारूप:- १. वर्तमानकाल - हसामि, हसेमि, हसामि / हसम, हसाम, हसिम, हसेम, हसमो, हसामो, हसेमो, हसिमो, हसन्, हसामु, हसिमु, हसेम / हसासि, हसेसि, हससे / हसह, हसेह, हसित्था, हसेइत्था, हसथ, हसेथ / हस्सइ, हसेइ, हसदि, हसेदि, हसए, हस्सदे / हसन्ति, हसेन्ति, हसन्ते, हसिरे / २. विधि- आज्ञा - हसउ, हसामु, हसिमु, हसेमु / हसमो, हसामो, हसेमो / हससु, हससु, हसाहि, हसेहि, हसाधि, हसेधि, हस, हसेज्जहि, हसेज्जसु / हसह, हसेह, हसथ, हसेथ / हसउ, हसेउ / हसन्तु, हसेन्तु / ३. भूतकाल - हसीअ / ४. भवि हसिहामि, हसेहामि, हसिहिमि, हसेहिमि, हसिस्सामि, हसेस्सामि, हसीहिमि, हसिस्सं, हसेस्सं / हसिहित्था, हसिहिस्था, हसिहिमो, हसेहिमो, हसिहामो, हसेहामो, हसिस्सामो, हसेस्सामो, हसिस्सिमो, हसिस्सिम, हसिहिम, हसिहिमु, हसिस्सामु, हसेहामु, हसेस्सामु, हसिहिम, हसेहिम, हसिस्सम, हसिस्साम, हसेहाम, हसेस्साम / हसिहिसि, हसेहिसि, हसिस्ससि, हसिस्सासि, हसिस्सिसि, हसिहिसि, हसेहिसे, हसेस्सधे / हसिहिह, हसिहित्था, हसिहिध, हसेहिह, हसेहित्था, हसेहिध, हसिस्सह, हसिस्सइत्था, हसिस्सध, हसेस्सह, हसेस्सइत्था, हसेस्सध, हसिस्सिह, हसिस्सिइत्था, हसिस्सिध / हसिहिइ, हसिहिए, हसिहिदि, हसिहिदे, हसेहिइ, हसेहिदि, हसेहिए, हसेहिदे, हसिस्सइ, हसिस्सए, हसिस्सदि, हसिस्सदे, हसेस्सइ, हसेस्सदि, हसेस्सए, हसेस्सदे, हसिस्सिइ, हसिस्सिदि / हसिहिन्ति, हसेहिन्ति, हसिहिन्ते, हसेहिन्ते, हसिहिरे, हसेहिरे, हसिस्सन्ति, हसेस्सन्ति, हसिस्सन्ते, हसेस्सन्ते, हसिस्सिरे, हसेस्सिरे, हसिस्सिन्ति, हसिस्सिन्ते, हसिस्सिरे / १. व. - ठामि / ठामो, ठमु, ठम्म / ठासि, ठाह, ठाइत्था, ठाध / ठाइ, ठादि / ठन्ति, ठन्ते, ठाइरे / २. वि- ठामु / ठामो / ठाहि, ठसु, ठाधि / ठह, ठध / ठउ, ठदु / ठन्तु / ३. भू - ठासी, ठाही, ठाहीअ / ४. भ. - ठाहिमि, ठाहामि, ठास्सामि, ठास्सं, ठाहिस्सामि / ठाहिमो, ठाहामो, ठास्सामो, ठास्सिमो, ठाहिमु, ठाहामु, ठास्सामु, ठास्सिमु, ठाहिम, ठाहाम, ठास्साम, ठास्सिम / ठाहिह, ठाहिस्सि, ठास्सासि / ठाहिह, ठाहिह, ठास्सह, ठाहित्था, ठाहइत्था (सि), ठास्सइत्था, ठाहिध, ठाहध (सि), ठास्सध / ठाहिइ, ठाहिदि, ठाहिए, ठाहिदे, ठास्सइ, ठास्सदि, ठास्सए, ठास्सदे / ठास्सिइ, ठास्सिदि / ठाहिन्ति, ठास्सन्ति, ठाहिन्ते, ठास्सन्ते, ठाहिरे, ठास्सिरे, ठास्सिन्ति, ठास्सिन्ते, ठास्सिरे /

प्राकृत शिलालेख

महत्त्व

किसी भी भाषा के साहित्य का अध्ययन करने के लिए शिलालेख सर्वोत्तम साधन हैं क्योंकि कोमल लिप्यासन (जैसे-ताड़पत्र, कागज) पर लिखे लेखों में परिवर्तन की गुंजाईश रहती है किन्तु शिलाओं पर कोरित या उभारे गए लेख हजारों वर्षों तक उसी अवस्था में रहते हैं। अतः शिलालेखों से तत्कालीन भाषा आदि की जानकारी व्यवस्थित मिलती है।

2. अशोक

भारत वर्ष में सबसे प्राचीन शिलालेख सम्राट अशोक के मिलते हैं। स्वयं के राज्याभिषेक (ई.पू. 269) से के 12 वर्ष बाद उसने गिरनार, कालसी (जि. देहरादून), धौली (उड़ीसा), जौगड़ (उड़ीसा), मनसेहरा (हजारा, उत्तर-पश्चिमी सीमा), शाहबाजगढ़ी (पेशावर), येरगुड़ी (मद्रास), सोपारा (ठाणा) नामक स्थानों में शिलालेखों में धर्मलिपियों को उत्कीर्ण करवाया था। ये सभी लेख पालि भाषा में और ब्राह्मी लिपि में विद्यमान हैं। इनमें से ~~कलेख~~, शाहबाजगढ़ी और मनसेहरा वाले, दो लेख खरोष्ठी लिपि में हैं।

3. हाथीगुफा

प्राकृत के शिलालेखों में ~~सब~~ राजा खारवेल द्वारा उत्कीर्ण हाथीगुफा का शिलालेख भी अत्यंत प्राचीन है। यह लेख उड़ीसा में भुवनेश्वर (जि. पुरी) के पास उदयगिरि नामक पर्वत पर उत्कीर्ण है। इसकी भाषा भी पालि से मिलती-जुलती है ~~अर्ध~~ तथा लिपि ब्राह्मी। भाषा का प्रवाह अशोक के शिलालेखों की अपेक्षा अधिक है अतः उस समय की प्राकृत भाषा की समृद्धि का पता चलता है। यह लेख लगभग ई.सन् के पूर्व प्रथम शती के अंत में उत्कीर्ण किया गया है।

इस लेख में राजा खारवेल के राज्य के 13 वर्षों का वर्णन है। प्रारंभ में 'नमो अरहंतानं नमो सव-सिधानं।।' पद द्वारा अरिहंत और सभी सिद्ध भगवंतों को नमस्कार किया है। फिर सम्राट खारवेल के भिन्न-भिन्न विशेषण दिए गए हैं, जैसे- जिनसे पता चलता है कि वे चेदि राजवंश के थे, कलिंग देश के राजा थे। तत्पश्चात् उनकी बालक्रीड़ा, युवराज पद आदि का उल्लेख है। उन्होंने 16 वर्ष की उम्र तक बालक्रीड़ा की, फिर वे नौ वर्ष तक युवराज पद पर रहे। इस प्रकार कुल 24 वर्ष की उम्र में वे राजगद्दी पर आरूढ़ हुए। राज्याभिषेक के बाद प्रथम वर्ष में ही उन्होंने झंझावात से गिरे हुए गोपुर और प्राकार का पुनरुद्धार करवाया। तथा कलिंग नगरी में कृषि तड़ाग की पैड़ियाँ बनवाई।

4. नासिक

नासिक गुफा का शिलालेख ई.सन् 149 में उत्कीर्ण किया गया है। यह वासिष्ठी के पुत्र पुलुमावि ने उत्कीर्ण करवाया था।

इस लेख में राजा के गुणगान गाने वाले भाट चारण की मनोदशा का वर्णन है। सर्व प्रथम लेख को काल दिया गया है - वासिष्ठी के पुत्र श्रीराजा पुलुमावि के 19 वें वर्ष में ग्रीष्म ऋतु के द्वितीय पक्ष के 2 दिन बीतने पर चैत्र सु. 13 के दिन यह लेख खुदवाया था। फिर शातकर्णि राजा के बहुत सारे विशेषण ~~और~~ हैं।

वे किन-किन नगर के राजा और कौन-कौन से पर्वत के स्वामी थे; इनके नाम दिए गए हैं। उनकी माता गौतमी बलश्री ने तप के निमित्त से यह लेख खुदवाया था।

५. संग्रह

जैन शिलालेखों के अनेक संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। फ्रेंच विद्वान् गेरिनो द्वारा प्रकाशित 'रिपोर्तोर द एपीग्राफी जैन' में ई. पू. २५८ से लेकर ई. १९६६ तक के सभी लेखों का संग्रह था। तत्पश्चात् कलकत्ता से पूरणचन्द्रजी ने श्वेतांबर संप्रदाय के हजारों मूल लेखों का संग्रह १९१५, १९२७, १९२९ में तीन भाग में प्रकाशित किया। दिगंबर के लेखों का संग्रह 'जैन शिलालेख संग्रह' नाम से ५ विद्वानों द्वारा ५ भागों में प्रकाशित किया गया। मु. जिन वि. मु. जयन्त वि. और आ. धर्मसूरि कृत लेख संग्रह भी उल्लेखनीय हैं।

१. वि

प्राकृत चरित साहित्य

प्राकृत चरित साहित्य का महत्त्व एवं विशेषताएँ।

प्राकृत चरित साहित्य का काल्य ई. सन् की पहली शती से प्रारंभ होकर लगभग १७वीं शताब्दी तक माना जाता है। कथा, आख्यानों, उपदेश ग्रंथों की भाँति महापुरुषों के चरित्रों की रचनाएँ भी अनेक जैन मुनियों ने की हैं। जब लौकिक पुराण-ग्रंथों की रचना होने लगी और रामायण, महाभारत, हरिवंशपुराण जैसे चरित्र ग्रंथ लोकप्रिय होने लगे; तब जैन विद्वानों ने भी तीर्थंकर, राम, कृष्ण, आदि अनेक महापुरुषों के चरित्र की रचना की। इन में सबसे प्रसिद्ध त्रिषष्ठि शलाका पुरुषों में २४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ बलदेव, ९ वासुदेव और ९ प्रतिवासुदेव के चरित्रों का समावेश किया है। आगमों की अनेक टीकाओं में भी कई महापुरुषों के चरित्रों का वर्णन हैं। आ. भानदेव सू. के शिष्य शीलांकाचार्य ने सन् ८६८ में ५४ महापुरुषों के, आ. हेमचंद्र सू. ने त्रिषष्टिशलाकापुरुष चरित्र में ६३ महापुरुषों के चरित्र की रचना की।

१.

२.

३.

स्वतंत्र रूप से भी अनेक चरित्रों की रचनाएँ हुई हैं। जैसे- पउम चरिय, पासनाह चरिय, आदिनाथचरित, शांतिनाथचरित्र, महावीर चरिय, आदि। महासतियों में ऋषिदत्ता, रोहिणी, देवकी, दमयंती, मनोरमा, सुरसुंदरी, सीता आदि अनेक चरित्र हैं। लोक चरित्रों में अतिमुक्तक, वज्रस्वामि आदि चरित्र हैं। महान् आचार्यों के चरित्र में जिनदत्तसू. का गणधरसार्धशतक और हेमचंद्र सू. का परिशिष्ट पर्व प्रसिद्ध हैं। इनके अलावा आर्यसुहस्ति, आर्य रक्षित, तोसलि-पुत्र, उमास्वाति, हरिभद्रसू. म. आदि के चरित्र हैं। इस प्रकार प्राकृत में जैन चरित साहित्य बहुत समृद्ध और संवर्धित है।

५

जैन धर्म और तीर्थंकरों का उपदेश हमेशा त्याग और वैराग्यात्मक रहा है। त्याग और वैराग्य की बातें सामान्य जन मानस में सरलता से उतर जाए, इसलिए जैन आचार्यों द्वारा चरित्रों-कथाओं की रचना की गई। इन रचनाओं को रसप्रद बनाने के लिए कर्ताओं ने धीरे-धीरे विविध वर्णन (जैसे- सूर्योदय, सूर्यास्त, नगर, वन, उद्यान, समुद्र, नदी, पहाड़, राजा, रानी, महेल, युद्ध, विवाह, स्वयंवर आदि), उपमाख्यान (जैसे- नायक-

५

नायिका के बीच प्रेम का अंकुर फूटना, उनके माता-पिता को पता चलना और विवाह होना, विवाह पश्चात् वासभवन का वर्णन, रात्रि का वर्णन, उनके प्रश्नोत्तर, वार्तालाप का वर्णन आदि। वाक्कौशल्य, पहेलिका, समस्यापूर्ति आदि चरित्रों में डार्लिंगनिस शुरू किए। इस प्रकार चरित साहित्य विविध विशेषताओं से युक्त है।

पउमचरियं

१. विषय — वाल्मीकि रामायण की भाँति इस ग्रंथ में जैन परंपरानुसार पद्म (राम) के चरित्र का वर्णन है। इस ग्रंथ में कुल ११८ पर्व हैं। इसका 'राघव चरित' नाम भी है। कर्ता के अनुसार वाल्मीकी रामायण विपरीत और अविश्वसनीय बातों से भरी है, जैसे- कुंभकर्ण ६ महीने तक सोता था और भूख लगने पर हाथी, भैंस वगैरह सबको निगल जाता था, रावण इंद्र को पराजित कर शृंखला से बाँधकर लंका ले आया था, रावण आदि राक्षस मांस भक्षण करते थे आदि। लेखक के अनुसार ये सभी बातें असंभव हैं अतः उन्होंने श्रेणिक राजा के प्रश्न पूछने पर गौतम गणधर द्वारा राम कथा का विवेचन किया है।

२. कर्ता — इस ग्रंथ के कर्ता नागिल वंश के आचार्य विमल सूरि हैं। ये आचार्य ज्ञ राहु के प्रशिष्य हैं। इस ग्रंथ की भाषा, रचना, शैली, शब्दकोश से ही कर्ता के ज्ञान के गांभीर्य का ज्ञान होता है।

३. भाषा — यह ग्रंथ जैन महाराष्ट्री प्राकृत भाषा और आर्या छंद में निबद्ध है। ग्रंथ की भाषा सरल, सुगम और प्रवाह बद्ध है। शैली में प्रवाह और ज़ोर है। बीच-बीच में के अनेक आख्यानों, नगर-नदी-तालाब-ऋतुओं के वर्णन में ही कर्ता की अजोड़ विद्वत्ता दिखती है। काव्यसौष्ठव की अपेक्षा आख्यान में अधिक गुण हैं, ऐसा लगता है मानो आख्यान साक्षात् सुनाया जा रहा हो। वर्णनों में काव्य शक्ति का भी परिचय मिले बिना नहीं रहता, लगता है मानो आँख के सामने ही दृश्य चल रहा हो। शब्द कोष भी समृद्ध है, कहीं-कहीं अपभ्रंश-देशी शब्द भी दिखाई देते हैं। व्याकरण के विचित्र प्रयोग ग्रंथ में जहाँ-तहाँ दृश्यमान हैं।

४. काल — स्वयं ग्रंथकर्ता ने ग्रंथ में काल संकेत स्पष्ट दिया है। काल-संकेतानुसार ग्रंथकर्ता ने महावीर निर्वाण के 530 वर्ष पश्चात् ग्रंथ रचना की, जिससे ग्रंथ का काल लगभग ई.सन् 60 निश्चित होता है। किन्तु कोई विद्वान अंतरंग साक्ष्यों से इसे तीसरी और कोई चौथी शती का मानते हैं।

५. Summary — सूत्रविधान नामक प्रथम उद्देशक में ग्रंथ को कुल ११ अधिकारों में विभक्त किया है- 1. विश्वाख्याति 2. वंशोत्पत्ति 3. युद्ध प्रस्थान 4. युद्ध 5. लव-कुश का जन्म 6. निर्वाण 7. अनेक अ. तत्पश्चात् श्रेणिकचिन्ता विधान नामक दूसरे उद्देश्य में राजगृह नगर, श्रेणिक राजा, महावीर स्वामी, इनका उपदेश, श्रेणिक राजा की पद्मचरित्र विषयक शंका का वर्णन है।

तीसरे उद्देशक में गौतम स्वामी द्वारा रावण को राक्षस और मांसभक्षी कहना सिद्ध है।

फिर वंशोत्पत्ति का वर्णन आता है। ऋषभदेव प्रभु ने पृथ्वी पर व्यवस्था स्थापित की। 4 वर्णों की

उस समय विद्याधरों, ब्राह्मणों की उत्पत्ति का वर्णन है। छठे उद्देशक में राक्षस और वानर वंशजों की दीक्षा का वर्णन है। वानरवंश के लोग पूर्व में विद्याधर वंश के ही थे किन्तु ध्वज पर वानर चिह्न होने के कारण वे वानरवंशी कहलाए। सातवें उद्देशक में रावण के दशमुख नामकरण और विद्यासाधना का वर्णन है। आठवें उद्देशक में रावण-मन्दोदरी का विवाह, कुंभकर्ण-विभीषण का विवाह, इंद्रजीत आदि का जन्म वर्णित किया गया है। इसके बाद 9वें उ. में बाली-सुग्रीव का जीवन वृत्तांत, बालीमुनि द्वारा रावण का पराभव और धरणेन्द्र से शक्ति प्राप्ति का वर्णन है। दसवें उद्देशक के बाद 11वें में रावण को जिनेन्द्र प्रभु का भक्त बताया है। यज्ञोत्पत्ति के वर्णन में नारद द्वारा ~~वास्तविक यज्ञ स्वरूप का प्रस~~ 10 यतिधर्मों रूप वास्तविक यज्ञ का ~~धर्म~~ प्रतिपादन किया गया है। तत्पश्चात् क्रमशः उद्देशकों में रावण की कथा आगे चलती है। बीस उद्देशक के बाद 21वें में सर्वप्रथम राजा दशरथ और जनक का नामोल्लेख है। फिर कथा क्रमशः चलकर उनतीसवें उद्देशक में चूर्ण होती है सीता, लव-कुश की दीक्षा, लक्ष्मण की नरक और राम के निर्वाण के साथ समाप्त होती है। बीच में मंदोदरी की रावण पत्नी उक्ति सरस है कि अठारह हजार रानियों से भी जब तुम्हारी तृप्ति नहीं हुई तो सीता से क्या होगी?

6. उपसंहार — इस प्रकार ~~ग्रंथकार~~ ने ग्रंथकार के ज्ञान वैभव को उजागर करता, अपने समय की संस्कृति रूप वैभव को प्रकट करता और भाषासाहित्य के वैभव को बढ़ाता हुआ यह ग्रंथ आज भी प्राकृत साहित्य में ~~चमकते~~ सूर्य समान तेजस्वी है।

जंबूचरिय

1. विषय — जैन परंपरा में जंबूस्वामी अंतिम केवली माने जाते हैं। इनके पश्चात् किसी को मोक्ष प्राप्ति नहीं हुई। महावीर स्वामी का निर्वाण होने के बाद जंबूस्वामी ने सुधर्मास्वामी के श्रमणधर्म स्वीकार किया था। अंतिम केवली होने के कारण प्राचीन जैन आगमों में सुधर्मा और जंबूस्वामी के नाम-निर्देश पूर्वक ही महावीर प्रभु के उपदेशों का उल्लेख किया है। इस ग्रंथ में इन्हीं जंबूस्वामी के चरित्र का वर्णन है।

2. कर्ता — इस कर्ता गुणपाल मुनि हैं। ये मुनि नाइलगच्छीय वीरभद्रसूरि के शिष्य हैं। ग्रंथ के अध्ययन से इनका ज्ञान, भाषा की पकड़ आदि गुणों का पता चलता है।

3. भाषा — यह ग्रंथ प्राकृत भाषा में रचित है। धर्मकथानुयोग यह ग्रंथ गद्य-पद्य मिश्रित है। भाषा सरल और सुबोध है। कथा का वर्णन प्रवाहयुक्त है। बीच-बीच में जैन धर्म संबंधी अनेक उपदेशों को संगृहीत किया है। ग्रंथ की शैली पर हरिभद्रसूरि म. की समराइच्चकहा और उद्योतनसूरि म. की कुवलयमाला का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

4. काल — इस ग्रंथ का रचना काल निश्चित नहीं किया जा सका है किन्तु शैली से यह अनुमान किया जा सकता है कि यह ग्रंथ वि. सं. 11वीं शताब्दी या इससे कुछ पूर्व रचा गया है।

5. Summary

इस ग्रंथ कुल 16 उद्देश हैं। प्रथम उद्देश में अर्थ, काम, धर्म और संकीर्ण नाम से चार कथाओं का वर्णन है। तृतीय उद्देश में राजा श्रेणिक महावीर स्वामी की वंदना के लिए समवसरण में जाते हैं। चतुर्थ उद्देश में राजा श्रेणिक द्वारा प्रश्न पूछे जाने पर प्रभु अंतिम केवली जंबूस्वामी के पूर्वभवों का वर्णन करते हैं। यहाँ कर्ता ने परदेश गए हुए पथिक और उसकी प्रिया की विरह वेदना को समझाने के लिए अनेक उक्तियाँ सरस रची हैं। चार देश में रहते ब्राह्मण 12 पुत्री और 1 पुत्र वाले ब्राह्मण की करुण दशा का वर्णन है। इवें उद्देश में जंबूस्वामी के दूसरे भवों का वर्णन है। यहाँ प्रहेलिका, प्रश्नोत्तरी, अंत्याक्षरी आ, गूढोक्ति आदि का उल्लेख है छठे उद्देश में गृहिधर्म प्रसाधन है। यहाँ वैराग्य के उत्पादक श्लोक हैं। एक उक्ति देखिए - जं कल्ले कायव्वं तं अज्जं चिय करेह तुरमाणा।

बहुविग्घो हु मुहुत्तो मा अवरण्हं पडिक्खेह ॥

- जो कल करना है, वह आज ही जल्दी कर। प्रत्येक मुहूर्त बहुत विघ्न वाला है अतः अपराह्ण की अपेक्षा भी मत कर।

नवें उद्देश में जंबूस्वामी के अंतिम भव का वर्णन है। धर्मोपदेश श्रवण से उन्हें वैराग्य हो जाता है किन्तु माता-पिता के आग्रह से वे 8 कन्याओं के साथ विवाह करते हैं। प्रथम रात्रि में ही वे 8 ~~कन्याओं~~ पत्नियों को उपदेश देते हैं। इस समय प्रभव नामक चोर भटों के साथ उनके घर में प्रविष्ट होता है। जंबू भयभीत हुए बिना उसे भी प्रभुवींदु का दृष्टांत और कुबेरदत्ता का आख्यान सुनाते हैं। तत्पश्चात् आठों पत्नियों को अलग-अलग कथानक से संसार की असारता समझाते हैं। सुबह होते ही सभी माता-पिता के साथ सुधर्मा स्वामी के पास दीक्षा ग्रहण करते हैं। जंबू स्वामी के बाद उनके उत्तराधिकारी प्रभव स्वामी बने।

6. उपसंहार

इस ग्रंथ के बारे में कहावत है कि जो भी यह ग्रंथ पढ़ता है, उसे संसार से वैराग्य हुए बिना नहीं रहता। विवाह की प्रथम रात्रि में ही हुआ जंबूकुमार और उनकी आठ पत्नियों के बीच का संवाद वैराग्योत्पादन करने का श्रेष्ठ उपाय/साधन है। अतः यह ग्रंथ आज भी जैसे भव्य जीवों को वैराग्य उत्पन्न कर शोभता है, वैसे ही साहित्य की दृष्टि से भी प्राकृत साहित्य की शोभा बढ़ा रहा है।

सुरसुंदरी-चरिय

1. विषय

इस चरित्र ग्रंथ में सुरसुंदरी नामक नायिका का उसके प्रियतम के साथ हुए विरह-मिलन की कथा है। अंत में सुंदरसुंदरी का मकरकेतु के साथ विवाह हो जाता है तत्पश्चात् पर्याप्त काल तक विषयसुख भोगकर दोनों दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं।

2. कर्ता

इस ग्रंथ की रचना धनेश्वर नामक मुनि ने की है। उनके गुरु जिनेश्वर सू. श्री बहुत विद्वान थे। उन्होंने कहारयणकोस आदि अनेक ग्रंथों की रचना की है। इस ग्रंथ में मिलने वाले शब्द प्रयोगों, रसों का वैविध्य ही कर्ता की विद्वत्ता का परिचय दे देते हैं।

यह कृति 16 परिच्छेदों में विभक्त है। प्रत्येक परिच्छेद में 250 पद्य हैं।

Page No.

रचना शैली विश्लेषणात्मक है।

1. भाषा — इस ग्रंथ की भाषा प्राकृत है, जो बहुत ही सरल और सुबोध है। यह एक उपाख्यान है, जो काव्य गुण से संपन्न है। यहाँ शब्दालंकारों के साथ उपमालंकारों का प्रयोग सुंदर हुआ है। उपमाएँ बहुत ही सुंदर बन पड़ी हैं। रसों के वैविध्य में कवि ने बड़ा कौशल दिखाया है। द्राक्षभ्रंश और देशी शब्द के प्रयोग जहाँ-तहाँ दिखाई दे जाते हैं।

4. काल — इस ग्रंथ की रचना वि.सं. 1095 (ई.सन् 1038) में हुई है। कवि ने स्थान का नाम भी लिख इस प्रकार लिखा है – चड्डावल्लि।

5. Summary — धनदेव सेठ एक दिव्य मणि की सहायता से चित्रवेग नामक विद्याधर को नागपाश से छुड़ाता है। दीर्घकालीन विरह के बाद चित्रवेग का विवाह इसकी (धनदेव की) पुत्री गंगा के साथ हो जाता है। फिर वह सुरसुंदरी और स्वयं की पूर्वकथा तथा विरह-चिंतन की कथा सुनाता है। सुरसुंदरी का मकरकेतु से विवाह होता है। और अंत में दोनों दीक्षा लेते हैं।

मूलकथा के साथ अंतर्कथाएँ इतनी गुंफित हैं कि मूलकथा तो एक तरफ ही रह जाती है। कथा की नायिका सुरसुंदरी का नाम पहली बार नवें परिच्छेद में आता है।

इस ग्रंथ में भीषण अटवी, भीलों का आक्रमण, वर्षाकाल, वसन्त ऋतु, मदन महोत्सव, विवाह, सूर्योदय, सूर्यास्त, सुतजन्म, युद्ध, विरह आदि का वर्णन है। विरह, महिलाओं का स्वभाव, जैन साधुओं का नगर में आगमन, उनका उपदेश आदि वर्णन में तो कुछ उपमाएँ अत्यंत उत्कृष्ट बन पड़ी हैं। जैसे-

– कोई स्त्री अपने प्रियतम के मुख को एकटक त्यागकर देखते हुए सोचती है – जिस प्रकार कीचड़ में फँसी दुर्बल गाय अपने स्थान से हटने में असमर्थ है, वैसे ही इसके मुख पर टिकी हुई मेरी दृष्टि भी हटने में असमर्थ है।

– ~~सुखावस्था को प्राप्त~~ जब तक मन में राग का उदय नहीं होता तब तक ही सुख है।

स्त्रियों के स्वभाव का वर्णन एक गुरु ने ~~किया~~ करते हैं – स्त्रियाँ चंचल चित्तवाली होती हैं। वे मन में कुछ सोचती हैं, देखती किसी और को हैं तथा संबंध तो अन्य तीसरे के साथ ही जोड़ती हैं। अतः ऐसी चंचल चित्तवाली स्त्रियों को कौन प्रिय होता है? अर्थात् कोई नहीं। वे पवित्रता, दया से विहीन होती हैं, अकार्य में रत रहती हैं, बिना विचारे साहसपूर्ण कार्य करती हैं। अतः कौन बुद्धिमान पुरुष उनसे प्रेम करेगा? शिष्य पूछता है कि गुरुजी! मेरी पत्नी तो सरल, पतिव्रता, विनीत है। गुरु उत्तर देते हैं – भले ही वह गुणवती हो किन्तु वह विष मिश्रित भोजन जैसी है।

नास्तिकवादी कपिल का उल्लेख है। भूत चिकित्सा, साहसों मारना और रक्षा-पोटली का विधान है। गंभीर नामक समुद्र का वर्णन है। उद्यान में क्रीड़ा करते हुए सुरसुंदरी और मकरकेतु के प्रश्नोत्तर आदि का वर्णन है।

6. उपसंहार — शृंगार रस उद्यान तथा उपमाओं से भरपूर यह ग्रंथ प्राकृत साहित्य की शान है।

Page No.
Date :

पार्श्वनाथ चरित्र

१. विषय — पार्श्वनाथ चरित्र नामक इस ग्रंथ में जैन धर्म के २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ भगवान् के जीवन को ग्रंथकार ने प्रस्तुत किया है।

२. कर्ता — इस ग्रंथ के कर्ता सुप्रसिद्ध, प्राकृत साहित्य के रत्न समान 'कहारयणकोस' ग्रंथ के कर्ता गुणचंद्र गणि हैं। आचार्य पद के बाद उनका नाम देवभद्रसू. कर दिया गया था। यह उनकी दूसरी उत्कृष्ट रचना है। ग्रंथ के पठन से ही उनका ज्ञान और प्राकृत भाषा की पकड़ स्पष्ट स्फटिक जैसे स्पष्ट हो जाते हैं।

३. भाषा — इस ग्रंथ को ग्रंथकार श्री ने ६ प्रस्तावों में विभाजित कर रचा है। ग्रंथ की भाषा प्राकृत है किन्तु संस्कृत भाषा का प्रभाव स्पष्ट दिखता है, विशेषकर काव्य में तो संस्कृत शैली का प्रभाव है। ग्रंथ की शैली गद्य-पद्य दोनों है। भाषा का सरल, सुगम और प्रवाहबद्ध है। समासान्त पदावलि और छन्दों का वैविध्य बहुत ही अद्भुत है। संस्कृत भाषा से अनेक सूक्तियाँ सुभाषित यहाँ उद्धृत किए हैं।

४. काल — इस ग्रंथ की रचना ग्रंथकर्ता द्वारा वि.स. ११६८ और ई.सन् ११११ में गुजरात के 'भड़ौच' नगर में की गई।

५. Summary — इस ग्रंथ को कुल ६ प्रस्तावों में रचयिता द्वारा विभाजित किया गया है।
पहले प्रस्ताव में पार्श्वनाथ भगवान् के तीन पूर्वभवों का वर्णन है। प्रथम भव में वे मरुभूति नामक पुरोहित पुत्र थे। उनके भाई का नाम कमठ था। कमठ का मरुभूति की स्त्री के साथ अनुचित संबंध हो गए थे, जिसका पता चलने पर राजा को शिकायत करने पर, राजा ने उसके कान काटकर, गधे पर बैठाकर उसे शहर नगर से निकाल दिया। वह जंगल में तापसों के पास गया। तापसी दीक्षा ग्रहण कर वह आश्रम में रहने लगा। मरुभूति जब कमठ से क्षमा माँगने आया तब उसने शिला फेंककर, उसका सिर फोड़कर मार डाला। दूसरे भव में दोनों भाई क्रमशः से हाथी और सर्प की योनि में उत्पन्न हुए।
द्वितीय प्रस्ताव में मरुभूति किरणवेग नामक विद्याधर होता है। यहाँ पर मुनियों की देशना और उनके द्वारा कथित पूर्वभवों का वर्णन है। उसके मरुभूति वज्रनाभ का जन्म धारण करता है। यहाँ पर वंगराज और उनकी कन्या के अपहरण की कथा है। अंत में वज्रनाभ का कन्या से विवाह हो जाता है और मुनि का उपदेश सुनकर वह दीक्षा ग्रहण करता है।
तृतीय प्रस्ताव में मरुभूति वाराणसी के राजा अश्वसेन के घर वामा रानी की कुक्षि से पुत्र रूप में उत्पन्न हुए। यहाँ पर वाराणसी नगरी का सरस सुंदर वर्णन है। राजा अश्वसेन पुत्रजन्मोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाते हैं। वर्धापन आदि क्रियाएं संपन्न होने पर पुत्र का नाम पार्श्वकुमार रखा गया। बड़े होने पर उनका विवाह प्रभावती के साथ हुआ। यहाँ विवाह-विधि का वर्णन है। उधर कमठ का नगर के बाहर पंचाग्नि तप करता था। बहुत लोग उसके दर्शन को जाते थे। एक बार

Page No.
Date :

पार्श्वकुमार भी गए। वह जिस काष्ठ को जला रहा था, उससे पार्श्वकुमार ने सर्प निकाला। कमठ अत्यंत लज्जित हुआ। वह मरकर देव बना। इधर पार्श्वकु. वैराग्यवासित होकर दीक्षित होकर अंग देश में विचरते हैं। यहाँ पर काचिकुंड, अहिच्छत्रा और कुक्कुटेसर तीर्थ के इतिहास का वर्णन है।

चतुर्थ प्रस्ताव में पार्श्वनाथ प्रभु को केवलज्ञान प्राप्त हो जाता है। वे १० गणधरों को देशना देते हैं। अश्वसेन राजा द्वारा पूछे जाने पर गणधरों के पूर्वभव का वर्णन करते हैं। इस प्रकार वे पृथ्वी को पावन करते हुए विचरण करते हैं। इस प्रस्ताव में अनेक महत्त्व पूर्ण बातों का उल्लेख है, जिससे तत्कालीन स्थिति का ज्ञान होता है।

1. शाकिनी का वर्णन 2. कापालिक की विद्यासाधना 3. बनारस के ठग
4. समुद्र यात्रा 5. विवाह में अग्नि आहुति 6. हाथी के ३ प्रकार
7. पुत्रोत्पत्ति के लिए कुश शय्या पर बैठकर १० रात तक कुलदेवी भगवती की आराधना की जाती थी।
8. यदि पथा फेरा होने के पूर्व ही वर की मृत्यु हो तो कन्या को दूसरा विवाह करने की छूट थी।
9. मृतक की अस्थियाँ गंगा में बहाने का रिवाज था।
10. हस्तितापसों आदि का वर्णन है।

पंचम प्रस्ताव में पार्श्वनाथ प्रभु के मथुरा, काशी, आमलकल्पा आदि नगरीयों में समवसरण का वर्णन है। अंत वे सम्मेत शैल शिखर पर पहुँचकर मुक्ति को प्राप्त होते हैं।

→ स्थान प्रस्तुत्व पूर्ण है
→ गद्य - पद्य
→ कर्ता
→ काल
→ भाषा
→ प्रयोजन

प्राकृत साहित्य का इतिहास

Summary

Page No.
Date :

आगम व्याख्या साहित्य

→ निर्युक्ति भाष्य चूर्णि टीका वृत्ति अवचूरि महाभाष्य टब्बा अवचूर्णि व्याख्या पंचिका विवरण संग्रहणी।
→ 2 - 16वीं शती → आगम सूत्र संबद्ध। स्वतंत्र
→ आगम उत्तरकालीन
→ 5 पंचांगी - निर्युक्ति (प्रा.गाथा) भाष्य (प्रा.गाथा) - चूर्णि (सं.प्रा.गद्य) टीका (सं.गद्य) + आगम। निर्युक्ति प्राचीन आगमकालीन, भाष्य उत्तरकालीन
→ मूल x निर्युक्ति। भाष्य - ओघ. पिंड। मूल ✓ टीका x इतिहासिक।
→ आगम - गंभीर पारिभाषिक विषय।
→ वाचना भेद - पाठभेद

निर्युक्ति

निज्जुत्ति निर्युक्ति → प्राचीन गुरु परंपरा से आगत पूर्व साहित्य के आधार पर
→ स्वोपरि स्थान → आगमों पर अर्थ रूप में प्रा. गाथाओं का विवेचन।
→ निज्जुत्ता ते अत्था जं बद्धा तेण होइ निज्जुत्ती। सूत्र में निर्दिष्ट अर्थ जिसमें निबद्ध हो।
→ सांकेतिक और संक्षिप्त - बिना भाष्य, टीका नहीं। → अनुमान
→ अनेक कथानक उदाहरण दृष्टांत का उल्लेख मात्र।
→ संक्षिप्त, पद्यबद्ध होने से कंठस्थ
→ धर्मोपदेश में कथा दृष्टांत के उद्धरण
eg. → ओघ पिंड नि. मूल सूत्र में - प्राचीनता → तत्कालीन वाचना - ई. 5-6 शती पूर्व
→ 10 आगम सूत्रों पर - आचारांग, सूत्रकृतांग, व्यवहार, कल्प, आवश्यक, दशवै. आदि
→ सूर्य प्राप्ति - ऋषिभाषित अनुपलब्ध
→ इनके अतिरिक्त ओघ पिंड, आवश्यक का भाग अंश)
→ कर्ता भद्रबाहु - श्रुतकेवली से भिन्न)
→ दुर्भाग्य - निर्युक्ति भाष्य गाथाएँ मिश्र।

भाष्य

भास भाष्य
→ प्रा. गाथाओं पर संक्षिप्त विवेचन। प्राय: आर्या छन्द। प्राचीन प्राकृत, मागधी-शौरसेनी के प्रयोग। ई.सन् 4-5 शती
→ भाष्य - निर्युक्ति की गाथाएँ मिश्रित
eg. → निशीथभाष्य, व्यवहारभाष्य और बृहत्कल्पभाष्य - महत्त्वपूर्ण, लौकिक श्रुतियाँ - कथाएँ और परंपरागत निरुक्तियों के आचार-विचार।
→ कल्पलघुभाष्य और पंचकल्पभाष्य - संघदासगणि क्षमाश्रमण - वसुदेवहिंडी के कर्ता संघदास गणि से भिन्न।
→ बृहत्कल्प, व्यवहार, निशीथ, उत्तराध्ययन, ओघ. पिंड. आदि अनेक आगमों पर लघु बृहद्, महा भाष्य।
→ निशीथ, व्यवहार पर महाभाष्य अनुपलब्ध।
→ आगमेतर ग्रंथ चैत्यवंदन, देववंदनादि पर भी।

चूर्णी

चुण्णि चूर्णी
→ गद्य। संस्कृत मिश्र प्रा. - गद्य विस्तार
→ प्राकृत की प्रधानता होने से मिश्र प्राकृत भाषा
→ अनेक धार्मिक-लौकिक कथाएँ, शब्दों की व्युत्पत्ति, सं.प्रा. के पद्य उद्धृत।
eg. → निशीथ की विशेष चूर्णी और आवश्यक चूर्णी - देश-देश के रीति रिवाज, मेले त्यौहार, दुष्काल, चोर लुटेरे, सार्थवाह, आदि के वर्णन से जैनाचार्यों की वृत्ति, व्यवहारकुशलता और व्यापक अध्ययन का पता।
→ कोटिगणीय वज्रशाखीय जिनदासगणि महत्तर अधिकांश चूर्णि के कर्ता - ई. सन् 6 शती।
→ आचारांग सूत्रकृतांग कल्प व्यवहार निशीथ आवश्यक नंदी आदि।
→ आगमेतर - प्रतिक्रमण सूत्र, कर्मग्रंथ आदि पर।

टीका

→ टीका साहित्य का भी काफी महत्त्व है। प्रकाशन प्रसिद्धि में
→ ये टीकाएँ संस्कृत में, कुछ टीकाओं में कथांश प्राकृत में उद्धृत)
काल → चूर्णी की आगम वाचना के पूर्व ही।
→ आर्य संघस्थली द्वारा 12 अंगों पर टीका लिखने का प्रयास उल्लेख मिलता है।
→ जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण - अंगों पर सर्वप्रथम संस्कृत टीका, कालक्रम ई. 540, विशेषावश्यकभाष्य की स्वोपज्ञ वृत्ति
→ हरिभद्र सू. (705-775) - आवश्यक, दशवैकालिक, नंदी, अनुयोगद्वार, प्रज्ञापना - कथा भाग प्रा. में ही
→ शीलांकसू. (10वीं सदी) - आचारांग, सूत्रकृतांग - सं.
→ नवांगीटीकाकार शांतिसूरि, नेमिचंद्र सू., मलयगिरि आ. - कथांश प्रा.
→ अभयदेवसू., द्रोणाचार्य, मलधारि हेमचंद्र, मलयगिरि आ. - 12वीं शती
→ क्षेमकीर्तिसू (1275), शांतिचंद्र (1593)
→ उच्चता, विपुलता के कारण अलभ्य साहित्य।

प्राकृत व्याकरण साहित्य

प्राकृत प्रकाश	वररुचि	ई. 6 शती	12 परि. महा. 10वें पैशाची 11वें मागधी 12वें शौरसेनी (शेष महाराष्ट्री) कात्यायन - प्रा. मंजरी, वसंतराज - प्रा. संजीवनी, आमर्द - भामिनी। 11 तक ही
प्राकृतलक्षण	चण्ड		उपाय - चौथा कोऽवरकार - ऋ, ऌ, ऐ, औ, शौरसेनी का 1-4 सूत्र में सामान्य विशेषतएँ। 33 सूत्र - वृद्धमत का आधार
प्राकृतकामधेनु	त्रिविक्रम		उपसूत्र - कतिपय सूत्र अस्पष्ट, 11वें सूत्र में अ→उ पर उप।
संक्षिप्तसार	क्रमदीश्वर	ई. 12-13 शती	अध्ययन सं - हेमचंद्रा. से साम्य नहीं - कई टीकाएँ - प्राकृतपाद प्र. की टीका पा. दीपिका 8वां प्रा. - वररुचि का अनुशासन - स्वोपज्ञ टीका व्याख्या - चंडीदेवशर्मन्)
प्राकृतानुशासन	पुरुषोत्तम बंगाली	12वीं शती	20 अध्याय - 1,2 सुप उपपूर्ण - 3,4,5 प्रा. - आवन्ती भागधी शाबरी पैशाची उपि सभी को के लक्षण - 6,7,8 महा. प्रा. - 9 शौर. (पिंड हैं)
प्राकृत कल्पतरु	रामशर्मा भट्टाचार्य बंगाली	ई. 17 शती	3 शाखा - 1 शाखा - 10 स्तबक महा. प्रा. - प्राकृतानुशासन का अनुगमन - लंबी व बहुल शाखी का विवेचन) - स्वोपज्ञ टीका
प्राकृत सर्वस्व	मार्कण्डेय उड़िया।	1450-1565	20 पाद - 8 वां में महा. प्रा. - भाषा, विभाषा व. के 16 भेदों - शौर. प्राच्यी सिवाय अन्य बोलियों के लिए उपयोगी ग्रंथ।

→ ग्रंथ का नाम
→ विषय
→ कर्ता
→ काल
→ स्थान
→ भाषा (अधिकार, विभाग)
→ टीका
→ Summary.

Page No.
Date :

सिद्ध हेम	हेमचंद्र.	1088-1172	8 वां अध्याय 4 पाद	- सिद्ध हेम नामकरण। - अनेक टीकाएं - पहले 3 पाद में साम्राज्य। आर्ष प्रा. - पद्य के अंत में अन्य बोलियां - अप. का विस्तृत वर्णन - अप. के सरल उदाहरण
प्राकृतशब्दानुशासन	त्रिविक्रम (दि. जैन)	13वीं शती	3 अध्याय 4-4 पाद	- सिद्ध हेम का अनुसरण - पा 3 पाद में अप. महत्वपूर्ण।
प्राकृत रूपावतार	सिंहराज	12वीं शती	द्वितीय भाग पंचमाध्याय 25 अध्याय	- शब्द, 3 पाद - त्रिविक्रम का अनुग।
षड्भाषा-चंद्रिका	लक्ष्मीधर.			- त्रिविक्रम की वृत्ति अनुग। हेमचंद्रा. - शेताशेतिवं, प्रसन्नराघव की टीकाएं अनुपलब्ध
षड्भाषा-चंद्रिका	लक्ष्मणदेव.	शैव		- हैम. जैसे ही 6 भाषा का विस्तृत विवेचन किंतु दृष्टांत x
प्राकृतमणिदीप	अप्पयदीक्षित	1552-1626 शैव		- संक्षेप रुचिवालों के लिए - श्रीनिवासगोपालाचार्य की टीका।
प्राकृतानंद	रघुनाथ के पुत्र	18वीं शती	चार्वि सम्मु	- प्रथम में शब्द, दूसरे में धातु - वररुचि अनुग।

(शब्द व्याकरण)
- चिंतामणिव्या. शुभ्रचंद्र सू. - European विद्वानों के गंभीर परिशीलन
- औदार्यचिंतामणि वृ. श्रुतसागर - भूतबलि/धरसेन से भेद।
- प्रा.व्या. रामतर्कवा.
- प्रा. युक्ति देवसुंदर

प्रा. भा. से रूपांतरण के कारण

★ → संस्कृत उद्भव - वेदपाठी पुरोहित, वैदिक ऋचाओं
→ प्राकृत - बोलचाल, नियंत्रण कठिन
→ पुराय संस्कृत को ब्राह्मणों से, वैसा प्राकृत को नहीं, प्राकृत म्लेच्छों की
→ प्राकृत को व्याख्यित सम्मत रूप बहुत बाद में मिला
→ पाणिनी, कात्यायन, पतंजलि जैसे वैयाकरणों का अभाव
→ वररुचि का प्रा. भा. व्याख्यित और प्रामाणिक है। किंतु भाषाएं, जैन आगमों की अर्धमागधी पर कोई प्रकाश नहीं

प्राकृत उद्भव - विकास

→ अतिप्राचीन, आर्य लोगों की बोलचाल के उपयोगी भाषा
- जिस भाषा में महावीर प्रभु औरबुद्ध देव ने उपदेश दिए
- अनेक विद्वानों ने विपुल साहित्य रचना का प्रतिष्ठा का पीयूष दिया।
- कुछ कवियों ने के आधार पर सं. के अनेक ग्रंथों की रचना।
से प्राप्त की समस्त आर्य भाषाओं की उत्पत्ति
साधारण नाम प्राकृत। प्रा. शब्द का उपयोग

→ कथ्य भाषाएं - बदलती रहती है

विकास क्रम

→ सर्व प्राचीन वैदिक भाषा - 2000BC / 1200BC.
प्राथमिक प्रा. 2000-600BC → क्रमशः लौकिक संस्कृत में परिणत - पाणिनि व्या. द्वारा नियंत्रित। लगभग 1500 साल लगे।
→ संस्कृत शब्द का अर्थ वेद-भाषा के अर्थ में भी
→ वेद भाषा - वैदिक युग में कथ्य भाषा नहीं, ऋषि लोगों की साहित्यिक भाषा।

द्वितीय स्तर प्रा. 600BC-300AD → वैदिक भाषाओं में ऋ, ऋ, ऌ स्वरों को, मध्य व्यंजन, संयुक्त व्यंजन, विभक्ति-वचन का लोप रूपान्तर मुख्य परिवर्तन है।
→ जैन और बौद्ध धर्म का प्रचार।
→ भिन्न-भिन्न देशों में कथ्य भाषा
→ पू. मगध और सूरसेन देश की अर्धमागधी जैनों में, जैन धर्म में + पू. मगध देश की पालीबौद्धों में।
→ अशोक के शिलालेख पाली में 250 BC।
→ 500 AD के आसपास अपभ्रंश की उत्पत्ति।

तृतीय स्तर 1000AD - till → आधुनिक भाषाएं - तृतीय स्तर
→ उत्पत्ति द्वितीय स्तर की प्राकृत भाषाओं के अपभ्रंश से।

द्वितीय स्तर की प्रा. भा. का इतिहास

→ लौकिक धारणा - सं. → प्रा. → आधुनिक भा. / गलत है।
→ प्रा. तथ्य. - प्राकृत शब्द के उपकार. सं के साम्य के आधार पर
(1) ऋ सं साम्य - अंजलि, अल, नीर, वक्र, गच्छति, स्नाति
(2) तद्भव - उग्गम, धम्म, चक्क, झाण, नाह, दिट्ठ, लेस, सेस, हवइ
(3) देश्य / देशी - इराव (हाथी), एत्थवित्त (धनाढ्य, वृषभ), डाल (शाखा), चुल्लइ, चोप्पाड ...।

→ भौगोलिक विभाग - शूरसेन - शौरसेनी, मगध - मागधी, पिशाच - पैशाची।
→ तत्सम - सं से सभी देश की प्रा. में
तद्भव - कालक्रम से भिन्न भिन्न रूप को प्राप्त हुए
देश्य - भिन्न-भिन्न में उच्चरित शब्द ग्रहण किए

देश्य शब्द

→ पंजाब-मध्यदेश के आर्य लोगों की भाषा से वैदिक प्रा. और सं. का विकास।
→ इस समय अन्य देश के शब्द ने इस भाषा में स्थान पाया, वे देशी शब्द।
→ देशीशब्द अर्वाचीन नहीं, वैदिक शब्द जितने ही प्राचीन।

कुन्दकुन्दाचार्य

→ दि० सम्प्रदाय में भद्रबाहु श्रुत और गौतम गणधर के बाद कुंदकुंदाचार्य का नाम।
→ पद्मनंदि, एलाचार्य आदि नाम) पद्मनंदि। कोण्डकुण्ड निवासी।
काल → 1 शताब्दी
रचना → पंचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार - द्रव्यार्थिक नयप्रधान, आध्यात्मिक, शुद्ध निश्चय नय से प्रतिपादन।
→ नियमसार रयणसार अष्टपाहुड दशभक्ति।

पंचास्तिकाय

विषय → 6 अस्तिकाय
टीका → अमृतचंद्रसू. - तत्वदीपिका या समय व्याख्या। जयसेनाचार्य - तात्पर्य वृत्ति। अन्य
Sum. → 2 श्रुतस्कंध - 173 गाथा (जयसेन अनुसार)
प्रथम श्रुतस्कंध - 6 द्रव्य + 5 अस्तिकाय। द्रव्य - लक्षण, भेद, सप्तभंगी, गुण-पर्याय, कालद्रव्य का स्वरूप, जीव का प्रमाण, सिद्ध का स्वरूप, जीव - पुद्गल बंध। अस्तिकाय - धर्म, अधर्म, आकाश, पुद्गल, जीव
द्वितीय - नव तत्त्व + मोक्षमार्ग।

प्रवचनसार

→ प्रवचन यानि सिद्धांत का सार
→ अमृतचंद्रसू - 275 गाथा। जयसेन - 3 अधिक गाथा
→ प्रथम श्रुतस्कंध - ज्ञान। आत्मा - ज्ञान का संबंध, और अभाव, सर्वज्ञ की सिद्धि, अतीन्द्रिय सुख, शुभ-अशुभ-शुद्ध उपयोग, मोक्षमार्ग।
द्वितीय - ज्ञेय। द्रव्य - गुण - पर्याय, कार्य - कर्मकर्ता, मूर्त - अमूर्त द्रव्य, कालद्रव्य - पर्याय, निश्चय - व्यवहार नय का विरोध
तृतीय - चारित्र। श्रामण्य के चिह्न, भेद का स्वरूप, आहार चर्या, उत्सर्ग - अपवाद मार्ग, आगमज्ञान का महत्व, मोक्ष तत्त्व।

समयसार

→ समय यानि शास्त्र या सिद्धांत का सार
→ अमृतचंद्र सू. पाठ। जयसेन - 439 गाथा। अमृतचंद्रसू - आत्मख्याति टीका - 263 पद्य कलश - टीका।
→ 10 अधि. - 1 स्वसमय, परसमय शुद्ध नय सम्यक्त्व
2 जीव - अजीव
3 कर्म - कर्ता
4 पुण्य - पाप — व्यवहार नय की अपेक्षा जीव कर्मों से स्पृष्ट, शुद्ध नय की अपेक्षा से
5 आस्रव तो उसे अबद्ध और अस्पृष्ट ही जानना चाहिए।
6 संवर
7 निर्जरा
8 बंध
9 मोक्ष
10 शुद्ध पूर्ण ज्ञान

नियमसार

→ 186 गाथा
→ पद्मप्रभ - मलधारीदेव - ई. 12 वी शती - तात्पर्यवृत्ति
→ सम्यक्त्व - सम्यग्ज्ञान - सम्यक्चारित्र, 12 व्रत, 12 प्रतिमा, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, आलोचना, प्रायश्चित्त, कायोत्सर्ग, निश्चय, शुद्ध उपयोग आदि। (6 आवश्यक)

रयणसार

→ 167 गाथा
→ सम्यक्त्व - रत्न
→ पढ़ना - श्रवण से मोक्षप्राप्ति
→ भक्ति बिना विनय, स्नेह बिना महिला तप, वैराग्य बिना त्याग - दुर्लभना।

अष्टपाहुड

→ 8 पाहुड का संग्रह - किसी पाहुड।
→ श्रुतसागरी आचार्य - विद्यानंदी भट्टारक शिष्य
→ सुत्तपाहुड - भगवान महावीर
भावपाहुड - बाहुबलि, शिवकुमार, शिवभूति के दृष्टांत
→ लिंग - जो लोगों व्यवहार में होता है, स्वकार्य - अमृत। जो व्यवहार - जगाता, स्वकार्य - सोता।

बारस अणुवेक्खा

→ 91 गाथा, 12 भावना

दसभक्ति

→ 10 वस्तुओं की भक्ति
→ अंचलिका पाठ
→ तीर्थंकर भक्ति में चौबीसों की भक्ति।
→ टीका - प्रभाचंद्र
→ अन्य पंचनमस्कार, मंगलसूत्र, लोगुत्तमा सूत्र आदि।
→ तीर्थंकर - 24 तीर्थंकर, सिद्ध - सिद्ध, श्रुत - द्वादशांगी
→ निर्वाण - तीर्थों के उल्लेख।

प्राकृत शिलालेख

→ हजारों वर्ष तक उसी अवस्था में
→ अच्छा साहित्य अध्ययन का सर्वोत्तम साधन।

कथा सारांश

मधुबिंदु

एगो पुरिसो सत्थेण सह अडविं पत्तो। चोरेहिं य आहए सत्थे सो सत्थाओ भट्ठिऊण तओ भमंतो करिणा अभिभूओ। धावंतेण तेण एगो वडपायवो दिट्ठो। तस्स पारोहो कूवे पविट्ठो। सो पुरिसो पारोहं गहिऊण कूवे ठिओ। कूवे तेण विणासियमुहो अयगरो दिट्ठो। तिरियं उ चत्तारि भीमा सप्पा दिट्ठा। पारोहं उवरि मूसगा छिंदंति। मयुरा तं डसंति। उवरि पारोहे मधुं ठियं। ता मधुबिंदु तस्स मुहे पडंति। तस्स किं सुहं होइ? -

उवसंहारो- जहा कूवपुरिसो तहा जीवो। जहा अडवी तहा संसारो। जहा हत्थी तहा मच्चू। जहा कूवो तहा देवमणुस्सभवो। जहा अयगरो तहा तिरियनरयगई। जहा पारोहो तहा जीवणं। जहा मूसगा तहा पक्खा। जहा सप्पा तहा कसाया। जहा मयुरा तहा वाही। जहा मधुं तहा इंदियत्था। एवं संसारिणो जीवस्स कहं सुहं होइ? इंदियत्था कहं सुहहेऊ?

रोहिणीणाए

रायगिहे नयरे धन्नो नाम सत्थवाहो आसी। तस्स चत्तारो पुत्ता। ताणं चत्तारि सूणाओ भारियाओ, तं जहा- उज्झिया, भोगवई, रक्खिया, रोहिणी। सो धन्नो एक्कया उज्झियं बोलाविऊण पंच सालिअक्खयाइं देइ। तत्तो कहेइ- जया अहं तुमं जाएमि तया इमाइं पंच दाएज्जा। एवं अन्नाओ तिण्णि वहूओ वि। उज्झिया ताइं अक्खयाइं छोल्लेइ। भोगवई ताइं खाईअ। रक्खिया ताइं सुद्धे वत्थे बंधिऊण रक्खइ। रोहिणी पुण ताइं अक्खयाइं तायं कुलपुरिसे दाऊण कहीअ- तुम्हे एयाइं वड्ढेन्तु खेत्ते। पंच वासाइं पच्छा ससूरो कमेण जाअइ। उज्झियाए भंडारओ पंच अक्खयाइं घेत्तूण दिन्नाइं। ससूरेण पुट्ठा सा कहेइ जहाकयं कहेइ। ससूरो कुप्पेइ। सा दासीकज्जे निज्जुत्ता। भोगवई वि भंडाराओ घेत्तूण देइ। जहाकयं कहेइ। तत्तो सा रसोइ पहाणसिणिं ठविया। रक्खिया पुण ताइं एक्क अक्खाइं वत्था णिक्काअ देइ। जहाकयं कहेइ। ता सा भंडागारिणी ठविया। रोहिणी पुण जाअप्पाणा सई

आपका क्या नाम है
दीप देवी
सासु माँ
मामा आपके
पापा और आप
दीप दीपक
पत्र पुत्र कार्य
शत्रु मित्र

पवणपुत्र हनुमान = पवनपुत्र हनुमान
भीमपुत्र = भीमका पुत्र =
पवनपुत्र नाम
जाति
गोरे लोग
गोरे+गाय+लोग
गोरे+लोग

किम् : शोभा आपणं गौ = इति विग्रहवाक्यं । तृतीया

(आचारांग)

आचारांग सूत्र का द्वादश अंगों में महत्वपूर्ण स्थान है, इसलिये इसे अंगों का सार कहा है।

आभ्यंतर जाम से भी महत्व पूर्ण स्थान है इसका उल्लेख किया गया है निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थिनियों के आचार-विचार का यहाँ विस्तार से वर्णन है इसमें श्रुतस्कंध दो हैं। प्रथम श्रुतस्कंध में ९ अध्ययन हैं जो ब्रह्मचर्य कहलाते हैं इसमें ४४ उद्देशक हैं। द्वितीय श्रुतस्कंध में १६ अध्ययन हैं जो तीन चूलिकाओं में विभक्त हैं पहला श्रुतस्कंध दूसरे की अपेक्षा अधिक मौलिक और प्राचीन है मूलमें पहला ही श्रुतस्कंध था बाद में भद्रबाहु द्वारा आचारांग पर निर्युक्ति लिखते समय इसमें आचारग्र (चूलिका) लगा दिये गये आचारांग की गणना प्राचीनतम जैन सूत्रों में की जाती है। यह गद्य पद्य दोनों में है कुछ गाथायें अनुष्टुप छंद में हैं इसकी भाषा प्राचीन प्राकृत का नमूना है (एवं मे सुयं ऐसा मैंने सुना है)

इस सूत्र पर भद्रबाहु की निर्युक्ति जिनदासगणि की चूर्णी और शीलांक (ई.स. १०६३) की वृत्ति लिखी है

प्रथम श्रुतस्कंध में (१) शस्त्रपरिज्ञा छः काय पृथ्वीकाय आदि जीवों की हिंसा का निषेध है।

(२) लोकविजय में अप्रमाद अनाशा का स्वरूप धनसंग्रह का परिणाम आशा का त्याग पापकर्म का निषेध आदि का प्रतिपादन है मृत्यु से डरो और डराना है इस सम्बन्ध में उक्ति है।

(३) शीतोष्णीय तृतीय अध्ययन निरक्त मुनिका स्वरूप सत्कार का अनादर और कषाय त्याग आदि का प्रतिपादन है। मुनि और अमुनि के बारे में जगाई

(४) सम्यक्त्व में तीर्थंकर भाषित धर्म अहिंसा देहदमन, संयम की साधना आदि का विवेचन है। शस्त्र को तृण काटने और शोणित को सुखाने तथा आत्मा का दमन करने का उपदेश

(५) लोकसार अध्ययन में सुशील त्याग संयम में पराक्रम चारित्र तप आदि का प्ररूपण है। इन्द्रियों की उत्तेजना कम करने के लिये रूखा सूखा आहार करना भूख से कम खाना आहार का सर्वथा त्याग करना निरस करना स्त्रियों को प्रति मनको चंचल न होने देना।

(६) धूताख्य अध्ययन में परीषह सहन, प्राणहिंसा उपधि का त्याग करना मुनि अल्प वस्त्र रखता है अथवा सर्वथा वस्त्र रहित होता है डांस मच्छर का गर्मी सर्दी का तृण स्पर्श को इन सब कष्टों को शांतिपूर्वक सहन करना

(७) व्युच्छिन्न विमोक्ष अध्ययन में परीषह रूप वस्त्रधारी का आचार वस्त्र त्याग में तप संलेखना विधि समाधिमरण आदि प्रतिपादन है।

(८) उपधान श्रुत अध्ययन में महत्वपूर्ण है यहां महावीर की कठोर एवं घोर तपोमय साधना का वर्णन है आठ वर्ष में चर्याभूमि और सहचर्याभूमि में विचरण हुए महावीर अनेक उपसर्ग सहन किये थे। भयानक भयानक भयंकर जंगली प्राणियों से भरा हुआ क्षेत्र था।

इनमें श्रुतस्कंध पांच चूलिकाओं में विभक्त है चार चूलिकाएं आचारांग में ही गर्भित हैं पांचवीं निशीथसूत्र नाम से विदित जिसे आचार नाम्य भी कहा गया है प्रथम चूलिका के सात अध्याय हैं पिंडैषणा शय्यैषणा ईर्यैषणा भाषाजातैषणा, वस्त्रैषणा पात्रैषणा और अवग्रहैषणा, द्वितीय अध्ययन में भिक्षु भिक्षुणियों को आहार सम्बन्धी नियमों का विस्तृत वर्णन है ईर्या अध्ययन में मुनि के विहार सम्बन्धी नियमों का प्रारूपण है भाषाजात अध्ययन में भाषासंबंधी आचार विचारों का वर्णन है)

सप्त सप्ततिका नामक दूसरी चूलिका में भी सात अध्ययन हैं स्थान ① निषीधिका उच्चारण प्रस्रवण चौथे पांचवें और छठे अध्ययनों में प्रतिमा शब्द स्थान और परिज्ञा तीसरी भावना नामक चूलिका में महावीर की चर्या और महाप्रा की भावनाओं का वर्णन है।

(सूत्रकृतांग)

सूत्रकृतांग को सूतगडं सुत्तगडं अथवा सूयगडं नामसे भी कहा जाता है यहां साधु साध्वियों के आचार का पुरुषण एवं परमत का निरसन किया गया है इसके दो श्रुतस्कंध हैं पहले में सोलह और दूसरे सात अध्ययन हैं पहला श्रुतस्कंध एक अध्ययन को छोड़ कर पद्य में है और दूसरा गद्य पद्य दोनों में। अनुष्टुप चौपालिक और इन्द्रवज्रा छन्दों और उपमाओं का प्रयोग किया गया है सूयगडं पर भद्रबाहु ने नियुक्ति लिखी है इस पर चूर्णी भी है। शीलांक ने वाईरिगणि की सहायता से टीका लिखी है इसमें पुण्डरीक और आधुरंग के दोषों को रखा गया है। भाषा और विषय की शैली को देखते हुए इस सूत्र की गणना प्राचीनतम सूत्रों में की जाती है

प्रथम श्रुतस्कंध के समय नामक पहले अध्ययन में स्वसमय और परसमय का निरूपण है पंचभूतवादी अद्वैतवादी क्रिया और शरीर को अभिन्न स्वीकार करने वाले नियतिवाद, अज्ञानवाद कर्मोपचयवाद और लोकवाद का निरसन किया है।

② वैतालीय दूसरे अध्ययन तीन उद्देशों में है यहां शरीर की अनित्यता उपसर्ग सहन काम परित्याग और अप्रमाद आदि का प्रतिपादन है

③ उपसर्ग अध्ययन में तीन गाथायें हैं साधु धर्म को मानने वालों में आनेवाले उपसर्गों का विवेचन है

④ स्त्री परिज्ञा :- साधुओं प्रति प्रकार स्त्रीजन्य उपसर्ग सहन करना पड़ता है वे कौन

⑤ नरक विभक्ति :- नरक के घोर दुःखों का वर्णन

⑥ वीरस्तुति :- महावीर की स्तुतियों में दिखाया भेदों में जिन वाणियों से गंगा उपमा दी

⑦ कुशील परिभाषा कुशील साधु वर्णन दिखाया स्नान पानी से मुक्ति मानते हैं

⑧ वीर्य :- वीर्य का प्रतिपादन है

⑨ धर्म :- महावीर के धर्म का प्रतिपादन है

(४०) ~~दर्शन~~ समाधि अध्ययन में दर्शन ज्ञान चारित्र और तपरूप समाधि को बताया।
(४१) मार्ग अध्ययन में मोक्षप्राप्ति मार्ग का प्रतिपादन और अस्सिंग आदि का (अश्वजित पाठांतर)
(४२) समवसरण अध्ययन में क्रिया अक्रिया विनय और अज्ञानवाद का स्वरूप
(४३) याथातथ्य अध्ययन में उत्तम साधु आदि के लक्षण बताये हैं
(४४) ग्रन्थ अध्ययन में साधुओं के आचार विचार का वर्णन है।
(४५) आदान अध्ययन में स्त्रीसेवन आदि के त्याग का विधान है।
(४६) गाथा अध्ययन में श्रमण भिक्षु और निर्ग्रन्थ की व्याख्या है।

पंचास्तिकाय

दिगंबर संप्रदाय में भगवान महावीर और गौतम गणधर के बाद आचार्य कुन्द कुन्द का नाम लिया जाता है। इन्हें पद्मनंदि वक्रग्रीव एलाचार्य और गृद्धपिच्छ के नामों से भी जाना है लेकिन इनका वास्तविक नाम पद्मनंदि जान पड़ता है और कौण्डकुण्ड के निवासी होने के कारण ये कुन्द कुन्द नाम से कहे जाते थे। इनका समय ईसवी सन् की प्रथम शताब्दी के आसपास माना गया है कुन्द कुन्द के पंचास्तिकाय प्रवचनसार और समयसार को नाटक त्रय अथवा प्राभृतत्रय के नाम से भी कहा गया है कुन्दकुन्द ने नियमसार रयणसार अष्टपाहुड और दशभक्ति की रचना की है।

पंचास्तिकाय में पाँच अस्तिकायों का वर्णन है इस पर अमृतचन्द्रसूरि की तत्त्वदीपिका और जयसेन आचार्य की तात्पर्यवृत्ति नामक संस्कृत में टीका लिखी है बालावबोध की भी टीका है। पंचास्तिकाय में १७३ गाथायें हैं। पहले श्रुतस्कंध में षड्द्रव्य और पाँच अस्तिकायों का व्याख्यान है। यहाँ द्रव्य का लक्षण द्रव्य के भेद स्याद्वादनय गुण और पर्याय सहित द्रव्य का स्वरूप जीव का लक्षण सिद्धों का स्वरूप पुद्गल की गंध पुद्गल धर्म अधर्म आकाश और काल के लक्षण का प्रतिपादन किया है।

दूसरे श्रुतस्कंध में नौ पदार्थों के प्ररूपण के साथ मोक्षमार्ग का वर्णन है पुण्य पाप जीव अजीव आस्रव बंध संवर निर्जरा और मोक्ष का यहाँ कथन है।

प्रवचनसार आचार्य कुन्द कुन्द की दूसरी महत्वपूर्ण रचना है। इस पर भी अमृतचन्द्रसूरि और जयसेन आचार्य की संस्कृत टीकायें हैं। एवं अनुसार इसके रचयिता और जयसेन को अनुसार २७५ गाथायें हैं। इस ग्रन्थ में तीन श्रुतस्कंध हैं। प्रथम श्रुतस्कंध में ज्ञान द्वितीय श्रुतस्कंध में ज्ञेय और तृतीय श्रुतस्कंध में चारित्र का प्रतिपादन है। ज्ञान अधिकार में आत्मा और ज्ञान का एकत्व और अन्यत्व सर्वज्ञत्व की सिद्धि इन्द्रिय और अतीन्द्रिय सुख आत्मा सुद्धोपयोग शुभोपयोग आदि का वर्णन।

ज्ञेय अधिकार में द्रव्य गुण पर्याय का स्वरूप सप्तभंगी ज्ञान और ज्ञेय का संबंध और अमूर्त द्रव्यों का गुण

दार्शनिक अधिकार प्राप्त के पश्चात् इन्होंने स्वाध्याय क्रम में इन्हें को स्वरूप युक्ति आगम अनेकांत और अपवाद मार्ग अनुशासन का महत्व क्रम का मोक्ष मोक्ष तत्व आदि का प्रतिपादन है।

समयसार :- में अमृतचन्द्र के अनुसार ४४९ गाथायें हैं जयसेन अनुसार ४३९ गाथायें हैं दोनों की इस पर टीकायें हैं। अमृतचन्द्र की टीका आत्मख्याति कही जाती है। इसमें २७३ पद्यों का एक कलश है इस कलश को पद्यबद्ध को संस्कृत में तथा रामसेवक और जयचन्द्र ने हिन्दी में अलग अलग टीका लिखी है। इस में १० अधिकार हैं पहले अधिकार में स्वसमय पर समय, शुद्ध नय, आत्म भावना और ज्ञायकत्व का प्रतिपादन है। २ जीव अजीव ३ पुण्य पाप ४ आस्रव ५ संवर ६ निर्जरा ७ बंध ८ मोक्ष ९ शुद्ध पूर्ण ज्ञान का प्रतिपादन है। समयसार का स्वरूप प्रतिपादन करते हुए कहा है: जीव कर्म से बद्ध है यानी पर क्यों की अपेक्षा से ही जानना चाहिये शुद्ध नय की अपेक्षा जीवों कर्मों से अस्पृष्ट भाव है व्यवहारनय की अपेक्षा जीव कर्मों से स्पृष्ट है। जैसे पके फल के गिर जाने पर वह फिर अपने डंठल से जुड़ा नहीं होता वैसे ही कर्म मल के नष्ट हो जाने पर फिर से उसका उदय नहीं होता।

नियमसार

नियमसार में १८७ गाथायें हैं जिन पर पद्मप्रभ मलधारिदेव ने इस १२वीं शताब्दी में संस्कृत टीका लिखी है पद्मप्रभ ने प्रौढ़ता

इसमें सम्यक्त्व आप्त आगम सात तत्व सम्यग्ज्ञान, चारित्र के अन्तर्गत पंच व्रत पंच समिति त्रिगुप्ति मय परमार्थ प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, आलोचना प्रायश्चित्त पारमार्थिक और परम समाधि परम भक्ति परम आवश्यक निश्चय आवश्यक शुद्ध उपयोग आदि का विवेचन है यहाँ आवश्यक निर्युक्ति का उल्लेख है।

दर्शनसार

दर्शनसार में ५१ गाथायें हैं। यहाँ सम्यक्त्व को रत्नसार कहा गया है। इस ग्रंथ को पढ़ने और श्रवण से मोक्ष की प्राप्ति बताई है।

जैनियों के बिना विनय स्त्रोत के बिना महिलाओं को दीक्षा और वैराग्य के बिना त्याग ये तीनों विडंबनायें हैं।

जैसे शरीर में लिपटी हुई मक्खी वमन को भक्षण करती है उसी प्रकार श्रावक से युक्त लोभी, मूढ़ और अज्ञानी मुनि पाखण्डमोक्ष का ही भाजन होता है।

अष्टपाहुड

कुन्द कुन्द के षट पाहुड में दर्शनपाहुड, चरित्र, सूत्र बोध, भाव और मोक्षस्य पाहुड नामक छह प्राभृतों का अवतरण होता है। इनमें लिंग और शीलपाहुड मिला देने से आठ पाहुड होते हैं इन पर आचार्य श्रुतसागर ने टीका लिखी है श्रुतसागर विद्यानंदि मल्लिभूषण के शिष्य थे श्रुतपाहुड में आचार्य कुन्द कुन्द ने व्रतादि को ही मोक्ष का मार्ग बताया है।

भावपाहुड में बाहुबलि मधुपिङ्ग विश्वनंदि द्वीपायन शिवकुमार मेघरथ और शिवभूति को उदाहरण दिये हैं, मोक्षप्राभृत :- जोगेण व्यवहार में योग है व्यवहार में जोड़ना अर्थ है। लिंग पाहुड २२ और शील पाहुड में ४० गाथायें हैं, इनमें द्रव्यपूर्वा आत्मिक शुद्धता अपेक्षा

Page No.
Date :

चारित्र अनुप्रेक्षा

क्षुद्र क्षुद्र की चारित्र अनुप्रेक्षा (चारित्र अनुप्रेक्षा) में 9 गाथाएँ हैं। यहाँ अध्रुव अशरण संसार एकत्व अन्यत्व अशुचि आस्रव संवर निर्जरा लोक बोधि दुर्लभ और धर्म इन 12 भावनाओं का विवेचन है।

प्रशस्ति (प्रशस्तिका)

उसमें पंचनमस्कार, तीर्थंकर सिद्ध श्रुत, चारित्र योगि उपाध्या अनगार आचार्य निर्वाण पंचगुरु नन्दीश्वर और शान्ति की भक्ति की गई है। इसमें अधिकांश भक्ति पद्य में है। कुछ गद्य में भी है। श्वेताम्बर सम्प्रदाय के प्रतिक्रमणसूत्र आवश्यक सूत्र और पंचगुरु के साथ इसको तुलना की जा सकती है। तीर्थंकर भक्ति दोनों को मान्य है। टीका प्रभाचंद्र की ~~टीका~~ लगती है।

अन्तिम मंगलसूत्र लोगुत्तमासु सुत्त आदि तीर्थंकर-सम्बन्धी सिद्ध श्रुत आचार्य निर्वाण साधुओं के उत्तमत्व आदि की भक्ति की गई है। अन्त में शान्ति जिनेन्द्र

सामान्य पाण्डुलिपि विज्ञान

Page No.
Date :

★ सामान्य पाण्डुलिपि वि.

1. विषय प्रवेश → भारत का युग: कम्प्यूटर युग → हस्तलिखित ग्रंथ का संकट → दो कारण : दो अपेक्षा (पढ़ने का, समझने का)
   → पश्चिम में अधिक कार्य

2. पाण्डु.लि.वि.: नामकरण → लेखन कला का विकास (गुफा ईंट, पत्थर – चमड़ा, ताड़पत्र, कपड़े, भोजपत्र, – कागज आदि)
   → इतिहासकार ने शिलालेख, पुस्तकलेख, ताम्रलेख आदि)
   → Eng. में Manuscripts Latin word अर्थ- हाथ की लिखावट
   → हस्तलेख, Manu. पाण्डुलिपि पर्यायवाची

3. पाण्डुलिपि के भेद → i. गुहालेख या भित्तिचित्र (आदिम अवस्था गुफा में) ii. मृण्मय अभिलेख (ईंट) (छाल पत्र, लकड़ी, पत्थर, (सामग्रियां: पृष्ठ या पन्ने का रूप) (लिखने-लिखाने सुविधा) (पाण्डुलिपि में सभी सही होनी चाहिए) (Parchment (Codex, 5. वर्षों तक)
   7 लाख ई.पू., पत्थरों से) (ताड़पत्र, कागज, भोजपत्र)

4. पा.लि.वि. → इतिहास → भाषा, लिपि → पाण्डुलिपि → कई तत्त्व (लेखक, लेखनी, स्याही, कागज, चित्र)
   पुराण- वेदव्यास, लहरारे, भांडे, चित्र, गुफा, लेख

5. अन्य विद्वानों के संबंध – i. डिप्लोमैटिक्स (diplomatics ग्रीक, Greek word Diploma से बना, मुड़ा हुआ कागज, सरकारी पत्रों-चार्टरों, पट्टे-परवानों
   अनुज्ञा-पत्रों के कागज के अर्थ, ऐतिहासिक पट्टे-परवाने-चार्टर-लेखों के लेख उद्धारित करना, प्रामाणिकता, लिपि भेदलेषण,
   निर्माण विधि, उद्देश्य) ii. Palaeography (Papyrus, Parchments, लकड़ी, कलात्र पर लिखित प्राचीन लेख पढ़ना, लिपि का आकलन, विश्लेषण;
   विश्व की सभी लिपियों का परिचय, प्रचलित लिपि को पहना), Epigraphy (अभिलेखविज्ञान) Palaeography (अभिलेख विज्ञानता)
   iii भाषा विज्ञान (पाण्डुलिपि की विषयवस्तु का ज्ञान, प्राचीन लिपि, भाषा, शब्दरूप, व्याकरण, वाक्य विन्यास, शैली खोजना, भाषा से
   क्षेत्र का ज्ञान Michael Brandis Greene की लाईनपरली का उद्धरण)
   iv. ज्योतिष (कालनिर्णय, दिन-तिथि-संवत्- लग्नमुहूर्त- नक्षत्र-ग्रह-करण)
   v. पुरातत्व (Archaeology)-(खुदाई, शिलालेख, ताम्रलेख, मुद्रालेख आदि; चित्र के Papyrus सुमेरियन हि-लेख, Mohanjodaro
   की मुद्राएँ, Asoka के शिलालेख, भोर्ड खंड, से अब ईसा के ब्राह्मी लेख)
   काव्यशास्त्र, पुस्तकालय विज्ञान, इतिहास, काव्य प्रक्रिया (व्यक्तिगत संस्थागत), पाठालोचन, पुस्तकालय

अध्याय 1 ग्रंथ रचना प्रक्रिया

1. ग्रंथ रचना 3 पक्ष (i) लेखक – प्राचीन काल में लेखन क्रिया का कर्ता, मौखिक लोक वार्ता - वाङ्मय विलास को लिपिबद्ध, धीरे-धीरे लेखक
   मूल ग्रंथ रचनाकर्ता, परिनिष्ठित काल में लिखित से ग्रंथ; संग्रह ग्रन्थालयान, 1. आलिका या संहिती 2. संगत 3. ईत्सर्ग 4. उपदेश 5. अध्येष्ट (लंबा-संग्रह)
   (ii) भौतिक सामग्री – पुरुषवि.- लिप्यासन, भाषा, लेखनी, दवात, काल पद्धति, वेष्टन, मुद्रा, हस्ताक्षर
   (iii) लिपि-लिपिकर्ता- कभी लेखक-लिपिकर्ता एक ही, इसे लिपि का पूर्ण ज्ञान और अभ्यास, निर्देशग्रंथ - लेखकपंचाशिका, लोक प्रकाश (क्षेमेन्द्र व्यास), लेखक पुस्तक
   (क हरिदास), लिखनावली (शिवायनी)

2. लेखक और लिपिकर्ता

अध्याय 3

प्रकार – पाण्डुलिपि शब्द का अर्थ-विस्तार हो जाने के कारण उसमें अनेक प्रकार समाहित। अनेक प्रकार के लिप्यासन पर लिखित रचनाएँ, ग्रंथ, राज्यादेश, चिट्ठी-पत्र आदि। इसलिए 'पाण्डुलिपिविज्ञान' के सम्यक् ज्ञान हेतु उसके सभी प्रकार-भेदों से परिचित होना आवश्यक है।

पांडुलिपि
- राजकीय: ग्रंथ, राज्यादेश, चिट्ठी-पत्र
- व्यक्तिगत: कागद, पत्री, नक्शे, दस्तावेज
- अन्य

राज प्रशस्ति	राजकविरणछोड़	24 खंड
कूर्मशतक	भोज परमार	प्रकृत भाषा
पारिजातमंजरी	हरदत्त	सं. नाटक,
रुक्मिणी नाम	विश्वासराव पर्यंत	1155-545
आर्यांत विराट नं	राजकवि सोमेश्वर	राजसी काव्य

पांडुलिपि (लिप्यासन)

कठोर (उत्कीर्ण) — कोमल (लेखन)

- पाषाणीय, मृण्मय, शैलोपलिकी, ताम्रपत्रीय, स्वर्णपत्र, रजतपत्रीय
- → चट्टानीय, पत्थर, धातु
- → शिलापट्टीय, ईंट
- → मृत्तिकीय
- → मृतीय
- → मृण्मय
- ताड़पत्रीय, भोजपत्रीय, मुगजपत्रीय, पटीय-वस्त्रपत्रीय, काष्ठीय, कदलीय
- लेखनी, धातु
- पाषाणित, मृण्मयित, स्वर्णाक्षर, कीर्ति
- शैलोपलिकी - शैल, लेख, उत्कीर्ण आदि की कला शुरुआतों एवं नवाड़ियों तक और अंतरंग - किरणी - काष्ठलेख
- ईसा पूर्व आज की गुफा की दीवारों, कोलाच्छ, महाड़ी।
- ताम्रपत्रीय - भारत में उत्कीर्ण लेखों में सबसे पुराना। ताम्रपत्रों में राजाओं, दानपत्र, व्यापारिक, धार्मिक एवं अन्य
- लिखावट - तेलगु-तालपत्रों का प्रयोग। अकबर, शाहजहाँ, बुशहरी, पत्र (लंबाई), चौड़ाई, दीपक (जलाने वाला), कहाड़ी, दक्षिण चीड़ी (8-11 तीसरी)
- पत्र, मूर्ति, अन्य ग्रंथ रोचन आदि पत्र, दीपक, कहाड़ी

कोमल लिप्यासन – ताड़पत्रीय – 2 प्रकार (लंबाई और कोणीय) कागज (लेखन) – उत्तर भारत, दूसरे दक्षिणी पूर्व दक्षिण। उबालकर शुद्ध-कोड़ी तैयार। चिकना करना, शंखादि से घोटने इस लिखाने से
ग्रं. डा. रामेश्वर लाल कपड़ा लिपि टीका - पोथीपांडु जर्नल-पत्र 1-2 से संदर्भ। Nepal में कपड़ा पुराण (7) ढंकवाना (3

चट्टानीय – 1170 ईसवी में उत्कीर्ण उन्नत शिखर पुराण (दिग. जै. की कृति) Raj. भीलवाड़ा जिला, बिजौ
शिलापट्टीय – राणा कुम्भा समय मेवाड़ के कुंभलगढ़ (मेवाड़) के कुंभ स्वामिन् या मामादेव के मंदिर में 5 शिलापट्ट
मेवाड़ के राजसमंद नाथद्वारा में की पुरातत्व पत्र
स्तम्भीय - 1. शिला-संग्रह अशोक (272-325 ई.पू.) 2. खंभ - मंदिर मामले, हाथियों, घोड़ों का उत्कीर्ण, प्रशस्ति विष्णुवर्धन
3. यंत्र - पट्ट यंत्र, मंत्र, समुद्र मातृकाओं का वर्णन, यंत्रालय हुदहुदी 4. कीर्ति - धार्मिक, सामाजिक, पुण्य कार्यों की कीर्ति उजागर
5. तीर्थपुकल - पट्ट में तीर्थयात्रा प्रेरित, उसमें कीर्तिपुरुषों → गोत्र प्रसिद्ध। 6. सती - पति के मृतक के साथ सती होने वाली
7. पार्श्व - धर्मस्थलों पर, विशेष बौद्ध - जैन, महाकूट का चार्वाक 8. स्मृति - पारिवारिक, या स्वतंत्रों की स्मृति में, गोत्र, आदि
9. धाय - स्मृत व्यक्ति की प्रकृति 10. यूप - यज्ञभूमि में
मृण्मय - 1. मिट्टी की ईंटों पर - कच्ची मिट्टी की ईंटों पर उत्कीर्ण लेख, प्रमाणित मोहर शैलोपलिकी राजाओं के भवनों पर, अंगूठी-छेड़ा (आभूषण) से ईंट लिखित
2. छोटी - मिट्टी के ढेले पर, लेखक लिखकर, आग में पकाया, पता चला। प्राप्त: धार्मिक प्रतीकों
3. मुद्रा - मुहर - Mohenjodaro-Harappa में प. पाल - गुजरात मृद्भाण्ड पर और दक्कन
स्वर्णपत्रीय - दो प्र. स्वर्ण - ग्रंथ, ठाकोर धामधस्तात्र, 24 पत्र चौड़ी राजाली - सामंतीत्र पत्र - राजधानी पत्र।
स्वर्ण नीलमणी - पाले कारीरे सुराही पाकर देवपाली पुराने ईं, British Museum में ताड़पत्र स्वर्ण लिपि।
रजतपत्रीय - प्राचीन, तंत्रोक्तिता में विशेष सन् 79 ई. तंत्रोक्तिता कुण्डली आकार।
अन्य - कांस्य, लौह, पीतल, पंच-धातु धातु ग्रं. पोथी स्वरूप (दिल्ली), लौह त्रिशूल (नाथू)